

भगवतीचरण वर्मा .

['चित्रलेखा' से 'सीधी सच्ची बातें-तक']

दार्शन

लेखिका
डॉ० कुसुम बाण्य

★

साहित्य भवन प्राणलिन
इलाहाबाद

संस्करण

प्रथम, सन् १९६८

प्रकाशक

साहित्य भवन, प्रा० लि०

इलाहाबाद

मूल्य

₹ ०० रुपये

मुद्रक

रामशरण अग्रवाल

प्रगति प्रस

७३ बल्याणीन्दी रोड

इलाहाबाद

समर्पण

उन पू-य पिताजी को

जा मेरी प्रेरणा ये ।

जितने मुझे स-चा प्यार मिला ।

क्रम-सूची

एक स्वर और
दो शब्द

प्रथम खंड

पूर्वनीटिका

बला बमाजी की दृष्टि में	१ १५
उपन्यास और कहानी : बमाजी की दृष्टि में	
बमाजी का जीवन दरान	
बमाजी का साहित्यिक जीवन	

साहित्यिक व्यक्तित्व

कार्किर के रूप में	१६ २७
हाम्य अभ्यकार के रूप में	२८-३६
विशुद्ध कथाकार के रूप में	४० ४७

द्वितीय खंड

प्रमुख उपन्यास और कहानियाँ

चित्रसखा	६१ ८०
छीन बप	८१ ६१
टेड़-मूँ रास्त	८२ ११०
मूल बिसर चित्र	१११ १२४
सामय्य और सोमा	१२५ १४३
रेमा	१४४ १५१
सीधी सब्जी बातें	१५२ १६१
कहानियाँ	१६२ १८३
बह फिर नहीं आई	१८४ १८६
परिशिष्ट	१६० १६३
उपसंहार	१६४ १६६

एक स्वर और

मुझे अपने सम्मुख में कुछ कहना चाहिए। मैं पुष्पक की लेखिका का यह आग्रह है। लेकिन मरी ममत्व में नहीं आता कि मैं क्या कहूँ। लेखिका न भरे क्या-आह्वय का मू-याजन किया है वह मू-याजन मही है या गुलत है इससे मुझ का मन नर नर। अपनी आलाचना के प्रति मैं हमेशा म उन्मीन रहा हूँ। चाहे वह आलाचना कटुवा रही हो चाहे वह मीठी रही हो। आलाचनाओं के अनुसार मैं अपने का गलत नही करता। व्यक्ति की कमजोरियाँ व्यक्ति की अच्छाइयों का अविच्छिन्न भाग रहा करती हैं। न तो दूसरा की नजर में लिखन वाना मरी श्रुतियाँ मरी दूसरा की नजर में लिखन वानी कमजोरियों पर विचार पा मरती हैं और न वह कमजोरियाँ उन खूबियों का विकृत कर मरती हैं।

मैं कहनाकार हूँ क्योंकि कहानी कहने की प्रवृत्ति मैंने पाई है। मैं कवि नो हूँ क्योंकि मरना की रगोनिया में अपने का सा तेन की प्रवृत्ति भी मुझे मिली है। मैं मून रूप में भावना प्रधान प्राणी हूँ। लेकिन बौद्धिकता के क्षेत्र में मैं अपने का किसी से भा हीन नहीं ममत्व पाता। वेन शान्ता के अध्ययन से मुझे यकीन रहा है कितावा में अजित तान का मैं अपने जीवन में कभी महत्व नही दे पाया क्योंकि वह कितावा द्वारा अजित तान मरा मत्य नही बन सका। सत्य बनने के लिए इस तान का अपने अनुभव गारा ही अजित किया जाना चाहिए और अनुभव स्वयं में भावना-मक सता है। शायद इसलिए विशुद्ध शान्तीय अथवा वैमानिक क्षेत्र का न अपना कर मैंने भावना का क्षेत्र अपनाया है।

मैं अपने जीवन के क्रम को लिखता हूँ। एक मध्यमवर्गीय बौद्धिक परिवार में मरा जन्म हुआ। यद्यपि मरी पाँच बरष की अवस्था में ही मर पिता का दान्त हो गया था और मरा उपरति एवं विज्ञान के प्रति गिवा मरा माता के और किसी दूसरे में लिखसती न थी, और माता का शासन मुझ पर नही के बराबर रहा है लेकिन जाति और कुल के मस्कारों में प्रेरित होकर अनेक बाधाओं के बावजूद मैंने विश्वविद्यालय की शिक्षा प्राप्त की। वैद्य बाल्यकाल में ही मरे गार से शासन हो गया था और कला की प्रवृत्ति मुझमें उत्पन्न-बोह बरष की अवस्था में प्रकटित हो गया थी। लेकिन मध्य बरष की आन्धाओं एवं

नतिक मान्यताओं के कारण मैं उलट नहीं पाया। आदोभना के उखाड़ पछाड़ से मैंने अपने को दूर रक्खा, प्रसन्न राह पर बहकने से मैं सावधान रहा। हो सकता है कि इसमें मध्यवर्ग की धर्म भीड़ना वाली कायरता का हाथ रहा हो जैसे स्पष्ट रूप से मैं कायर कभी नहीं रहा। जिंदगी भर उन्हीं नतिक मान्यताओं एवं आस्थाओं से मैं चिपका रहा हूँ यद्यपि बौद्धिक दृष्टि से इन आस्थाओं एवं मान्यताओं पर स मेरा विश्वास विश्वविद्यालय के जीवन काल से ही जाना रहा।

कविता के क्षेत्र में मुझे वाचकाल में ही सफलता मिल गयी थी। जहाँ तक मुझ मात्र है उन दिनों मुझ छायावादी का प्रवर्तक मैं स्वीकार किया जाता था। लेकिन मेरे अतिरिक्त एक कहानीकार भी था जो मात्र मैं जागा। मैंने विद्यार्थी-काल में ही दुनिया के श्रेष्ठ उपन्यास पढ़ डाले थे और सन् १९२६ में मैंने प्रयोग के रूप में एक उपन्यास लिखा पतन। वह उपन्यास सफल नहीं रहा, लेकिन उस उपन्यास को लिखने के बाद मुझे यह भरोसा हो गया कि मैं कहानी का गठन कर सकता हूँ।

उन्हीं दिनों मेरे जीवन में आर्थिक सघनों का दौर आया। सिवा साहित्यिक और किसी काम में मन नहीं लगता कुल की परम्परा के अनुसार मैंने बकालत पास करके जीविकोपार्जन के लिए बकालत आरम्भ भी की थी लेकिन जिन उपायों से बकालत जमती है और चलती है उन पर विश्वास न होने के कारण मुझे यह अनुभव हो गया कि उस पेशे को अपना कर मैंने प्रसन्न को और इसीलिए साहित्यिक को ही अपनी आजीविका का साधन बनाने का एक गौण सङ्कल्प मेरे मन में जागा। कविता केवल शीत की ही बीज धन सकती है वह सिवा कवि सम्मेलनों के और कहाँ विकसित नहीं और इसलिए मैंने कहानी एवं उपन्यास में ही अपनी गति देखी। सन् १९३१ में मैंने चित्रलेखा लिखना आरम्भ किया और सन् १९३४ में जब मैं बकालत छोड़कर आजीविका के लिए इलाहाबाद में साहित्यिक सम्बद्ध अथ क्षेत्रों की तलाश में आकर बस गया था 'चित्रलेखा' प्रकाशित हुई। चित्रलेखा लिखकर मैंने दूसरा उपन्यास लिखा— 'तीन वष' जो सन् १९३६ में प्रकाशित हुआ। कविता छूटने लगी थी। मेरे अन्दर-बाला कहानीकार मुखर हो उठा था।

उन दिनों परिस्थितियाँ कुछ ऐसी थी कि विशुद्ध साहित्य द्वारा आजीविका की समस्या हल हो ही नहीं सकती थी। इसलिए इधर उधर छिट्ट पोट काम करने पड़े लेकिन जो काम भी मैंने किये वह साहित्यिक से सम्बन्धित थे। प्रिन्टिंग में कहानी एवं सवादी-लेखक का काम मैंने किया स्वयं पत्र-पत्रिका निकाल कर उन के

सम्मान का काम किया। नियति के हलकोरा में मैं बहता रहा—छ वष मैं कलकत्ता में रहा, छ वष मैं बम्बई में रहा—दाना जगह यही समझता रहा कि वहाँ बसना है। सन् १८४८ में नवजीवन क प्रधान सम्पादन की हैसियत में मैं बम्बई से अपने प्रदेश की राजधानी लखनऊ वापस लौटा, और तब मैंने दवा कि हिन्दी साहित्य का ससार यह भूल चुका है कि मैं कवि हूँ। केवल उपन्यासकार क रूप में लाग मुझे जानत हैं, और सबसे विचित्र बात यह है कि हिन्दी साहित्य-समार क आगाचक गण मुझे उपन्यासकार की हैसियत से स्वीकार करने में भी सकोच करते हैं यद्यपि कई विशिष्ट विद्वाना एव तटस्थ आलोचना ने मेरे 'टिप्पे मे' रास्त उपयाम को उस समय के हिन्दी उपन्यासों में सर्व श्रेष्ठ माना है। इसका कारण सम्भवत यह रहा हो कि उस उपन्यास में राज नीतिक घुट हाने के कारण अपने की प्रगतिशील कहन वान आलोचना न एक स्वर से मेरी निन्दा की थी और मुझे गालियाँ तक दी थी।

मैं पहले हा कह चुका कि जा भी काम मैंने किया था वह अम्प्याया समझ क किया था चाकि मेरे साहित्य सृजन में आपाठ न पहुँचे। सन् १९४८ क अन्त में ही मैंने 'नवजीवन' से त्यागपत्र दे दिया। आर्थिक सघन अब फिर सामन आ गया था। सोच रहा था कि बम्बई वापस जाऊ किन्ना में और तभी आकाशवाणी में हिन्दी महाहकार बनने का प्रस्ताव मेरे सामन आया।

बम्बई वापस लौटने क अथ हाउ अपना कदम पाछे हटाना विचारात की हालत में यह साचा था वेसे बम्बई वापस जाने की इच्छा मुझमें नही थी वार मैंने आकाशवाणी वाना प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। हिन्दी सलाहकार की हैसियत से मुझे साहित्य सृजन की मुविधा रहेगी, और आकाशवाणी में रत कर मैंने फिर से हिन्दी-साहित्य में अपना स्थान बनाना आरम्भ किया। मैंने कविताएँ लिखीं नाटक लिख लिख लकिन उपन्यास में नही निम्न पाया। नून तिमरे चित्र उपन्यास का लिखना मैंने आकाशवाणी में आने क पहल से ही आरम्भ कर लिया था लकिन सात वष तक आकाशवाणी में काम करने क बाद भी मैं उसका एक गल्प ही लिख पाया था। सन् १९५७ में मैंने साहस किया और आकाशवाणी से मैंने इस्तीफा दे दिया। इस साहस का एक कारण और था मेरे पिछने उपन्यासों का उस समय तक काफ़ी प्रचार हा चुका था और मुझे इतनी राय-टी मिलने लगी थी कि मैं भूषा न भरने पाऊँ। तब मैंने उपन्यास लिखने में व्यस्त हा गया। सन् १९५७ के बाद मैं लगातार अरने चिल्लीने नूने तिमरे चित्र, सामन्य और मोमा, रेखा और 'मीचो-मन्की

घातें—महर्षि महस्वपूण उपास मैंने लिख। दो छोटे छोटे उपवास भी मैंने लिखे हैं— वह फिर नहा आई और पक्का पक्का ।



मैं नियतिवादी हूँ और मेरे नियतिवादी होने का मुख्य कारण भी है। मैं जो कुछ हूँ परिस्थितियाँ ने मुझे बह बनाया है। और यह परिस्थितियाँ मेरे हाथ में नहीं थी। एक मध्यमवर्गीय परिवार में मेरा जन्म हुआ जिसकी निजी मायताएँ थी परम्पराएँ थी और उसका अपने निजी संस्कार थे। यह परम्पराएँ मायताएँ और संस्कार मेरे अविच्छिन्न अंग हैं। फिर मृत जन्म से ही कुछ प्रवृत्तियाँ मिली और उन परिस्थितियों में जिनमें मैं बिना अपने प्रयत्न के या अपनी इच्छा के पड़ गया था मरी उन प्रवृत्तियों का विकास हुआ मुझे एक एका अहंमिता जो किसी के आगे झुक न सकेता था और उसने मुझे जीवन भर सपनों में रत रक्खा। जीवन की सुख सुविधा मैंने अपने का हमेशा दूर पाया, यद्यपि सुख-सुविधा के प्रति एक माह मुझमें हमेशा रहा है और आज भी है। कभी-कभी तो ऐसा लगने लगता है कि मेरा वह एक अभिमान की भाँति मेरे सर पर सवार है।

लेकिन जब मैं ठोके कि माया स साचता है तो ऐसा लगता है कि जो कुछ हुआ था जो कुछ हा रहा है उसमें मुझे किसी तरह की शिक्षायत्त नही हानी चाहिए। जीवन में जितने भी सधप मुझे करने पड़े हैं वे सब अनुभवों के रूप में मेरी चेतना और मेरे मन के विकास में सहायक रहे हैं।

मैंने बहुत कुछ पाया है दूसरों की दृष्टि में नही पर अपनी दृष्टि में तो अवश्य। और इस पाने के क्रम में जहाँ तक मैं समझता हूँ मैंने खोया कुछ भी नहीं है। आखिर खाने के लिए मेरे पास था भी क्या? और फिर मैं सोचने लगता हूँ कि खाने के लिए दूसरों के पास ही क्या है? धन वैभव—यह दूसरों को अपाहिज और पगु हो बना सकते हैं और इस धन वैभव की बहुत बड़ी सीमा तक चुकानी पड़ती है मनुष्य को अपने अन्दरवाले स्वाभिमान से, अपने अन्दरवाली मानवता से। मुझे इतना सतोष है कि कि मेरे अन्दरवाला स्वाभिमान मुझमें अधुण है। बाकी जो भी भौतिक सुख सुविधा है वह सब शरीर से सम्बद्ध है।

लेकिन दुनिया में न कोई पानेवाला है न कोई देनेवाला है—नियतिवादी तो यही कहता है। मेरा वह मेरे लिए सच्चा है लेकिन यह वह अहंकार बन कर विवृति का रूप धारण कर लेता है। इस अहंकार से मनुष्य अशिष्ट और उद्वेग हो जाता है। कभी कभी मुझे यह अनुभव होने लगता है कि यह अशिष्टता

का रूप मुन पर हावी हावा जा रहा है। मुझे इस रूप से लटना है। आखिर यह अहंकार हा तो मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है—सामाजिक परिवेश में।

तक़िन करू क्या ? कला स्वय में कलाकार क अहं क आराधन में विकसित हाता है। दूसरा का अान में तमय कर उता—कला का एकमात्र उद्देश्य है मुझे यह लाता है। कलाकार का हरक कलाकृति उन कलाकार क अहं का आराधन आ करती है। इस णीय स बच सकना कलाकार क लिए सम्भव नहा है। तक़िन अण का आराधन और अहंकार का आराधन—यह दो अलग अलग चीजें हैं। कलाकृति क सृजन क समय कलाकार अपन अहंकार का आराधन करता है वह कलाकार जब अपन सामाजिक जावन स अपन अहं का अण करता है तब वह अहंकार बन जाया करता है।

जिन्हें मैं विद्वतियों समझता हूँ उनका वर्णन न कर सकना समाज का दृष्टि स मरा बहुत बड़ा अवगुण है। उनक प्रति उपासीन हा जाना या समचीनता कर लना हा इष्ट है। मैंन हमसा एसा करने का प्रयास किया है। लेकिन दूसर तब अपनी उन विद्वतियों का समाज पर आराधित करत हैं तब उनका विराधन करत उन पर चुन रह जाना यह बण कठिन हा जाता है। यह कह कर मैं अपनी अशिष्टता क अवगुण का कने का प्रयन मत ही कर लूँ—लेकिन प्रश्न यह है कि कहीं तक विरोध किया जाय ? उनिया मर स यह विद्वतिया आराधित की जा रही हैं। आत्र क भौतिक सन्धों क जगद् में हर जगद् आराधन हा आराधन है—कम स विचार में सिद्धान्त में। और फिर यह विराध भी ता मरा आराधन है—मुझे यह अनुभव हान लगता है। दूसरा का दाप दन क समय में भूल जाता हू कि मैं स्वय दापा हूँ।

तक़िन करू क्या ! मैं अना तक अपन इस दाप पर विजय नहा पा सका। कना मैं अपन इस रूप का कने क लिए निमित्तवाण बन गया हूँ ? वह नहा सकता। वैस मैंने जा कुछ लिखा है या जा कुछ में लिख रहा ह उसका श्रेय पाने की उत्कं अमिलापा मुणस धार-धीर जाती रहा है। मरा समस्त गान—मर समस्त अनुभव—यह सब मर कब है ? यह सब ता मुण अनायास हा मिल है। फिर इनके प्रति मरी कना ममता क्यों हा कि इनकी निन्हा स मैं विनमिता उठूँ ? और मैं अपना सफ़रता और मरा क प्रति भा उपासान रहा ह। बहुत सम्भव है कि उपासीनता का एक कारण यह ना रहा हा कि मैं आन्यो हू।

अपन आनस और अपनी मानरवाही स मुझे अण तक बहुत अधिक हानियाँ उठाना पहा हैं लेकिन इन शानियों स मरे अन्तर का अन्तर नहीं का पाया। अनायास ही मान भा तो मुझे हाउ रट्ट है। जा कुछ मैंने चाहा वह

मिल सका। मुझे पता है कि मैं कभी अमीर और सम्पन्न बनने के सपने देगे थे मैंने राजनीतिज्ञ बनने के सपने दिये थे मैंने शक्तिशाली अफ़्ग़र बनने के सपने देगे थे। लेकिन इनमें मैंने कुछ बना बन पाया मैं बन गया एक साहित्यकार। और अब यह सोच रहा हूँ कि अफ़्ग़र हुआ जो साहित्यकार बन गया। करोड़पती और अमीर बनने के लिए रेईमानी नशा करनी पड़ी चोरबाजार का सहारा नहीं लेना पड़ा। राजनीति में आफ़र मिनिस्टर बन कर दूमरो के आगे हाथ पकाना नशा पड़ा। शलत आफ़मिया से समझौते नशा करने पड़े छत्र कपट के प्रपञ्च मैं नहीं पढ़ना पड़ा और बहुत बड़ा अफ़्ग़र बन कर राजनीतिज्ञ को गुलामी नहीं करनी पड़ी अपने अन्तरवाली आवाज़ का हनन नशा करना पड़ा। और इसलिए जो कुछ मैं बन गया उससे मुझे सतोप है।

परिश्रम करके प्रयत्न करके मैं छोटी मोटी चीज़ा को नशा पा सका और बिना किसी प्रयास या परिश्रम के मुझे मेरा सतोप मिल गया मुझे मुख शान्ति मिल गयी—यह निपति का विधान नशा तो और क्या है? मेरी कोई अपनी निजी सत्ता नशा है जो हा रहा है उममें किसी दूसरे का हाथ है—मैं यह जानना हूँ।



इस पुस्तक को लेखिका डाक्टर कुमुम वाण्ये ने प्रयाग विश्वविद्यालय से डाक्टरेट प्राप्त की है। उन्होंने कई महत्वपूर्ण शोधों की हैं और उन्हें विवेचना में गति है। विश्वविद्यालय से डाक्टरेट प्राप्त करनेवाली ब्यक्तिया से शास्त्रीय ज्ञान को अनेक की जानी चाहिए और यह शास्त्रीय ज्ञान डाक्टर कुमुम वाण्ये में प्रचुर मात्रा में है। साथ ही वह नारी हैं और इन्हीं भावनात्मक सबे ना भी प्रचुर मात्रा में है।

इस पुस्तक में मेरे अदरवाले कल्पनीकार की कृतियों के गुणा और दोष का शास्त्रीय विवेचन मिलेगा। लेखिका का अपना निजी ब्यक्तित्व है निजी दृष्टिकोण है और आलोचना लिखने के समय लेखिका का दृष्टिकोण भावनात्मक होने की अपेक्षा शास्त्राय अधिक हो गया है। शायद यह स्वाभाविक भी था क्योंकि विश्वविद्यालय की परम्परा के अनुसार लेखिका का उद्देश्य यह है कि वह हिन्दी साहित्य के विद्यार्थियों का मेरे साहित्य के अध्ययन में सहायक हो। यह पुस्तक आलोचना शास्त्र की है सृजनात्मक साहित्य की नहीं है यह स्पष्ट है।

दो शब्द

भगवती बाबू प्रेमचन्द से जैनेन्द्र और यशपाल तक की एक महत्वपूर्ण कड़ी भी हैं और प्रेमचन्द-युग के बाद के पहले और मौलिक कथाकार भी। उन्होंने हम प्रेमचन्द के आदर्शवाद से मुक्त कराकर व्यक्ति-स्वातन्त्र्य का संदेश दिया। उनका कथा-साहित्य पर अभी तक एक भी प्रस्तुत पुस्तक की रचना की है। यही अभाव को पूर्ति की प्रेरणा से मैंने अपना कथाकार चुना है? क्या है कई लोगों ने मुझसे कहा कि आपने भी कौन-सा कथाकार चुना है? क्या है उनका साहित्य में नया? जा उन्होंने अपनी पहली रचना में कहा है वहीं उनकी अंतिम कृति में है। आदि से अंत तक नियतिवाद का पाठ पढ़ाते हैं वे। और यह सब सुनकर उत्तर की जगह मैंने प्रश्न करना चाहा कि क्या नया है उनका साहित्य में? उनमें एक स्वल्प जीवन-दर्शन है। विवृतियाँ से विवृष्टियाँ और अन्धेरी रातों का अपना ही प्रेरणा है। उनका साहित्य में भारत के नए चित्र साकार माग खोजने की प्रेरणा है। उनका साहित्य में भारत के नए चित्र साकार हुए हैं। उनके साहित्य में भारत की साधा मन्ची तस्वार है।

और अधिक मुझे कुछ कहने की आवश्यकता महसूस नहीं हो रही। जा कुछ मैंने कहना चाहा है वह मैंने पुस्तक में आद्योपाद्य कहा है।

हाँ, श्रद्धा भगवती बाबू की मैं अतिशय कृतज्ञ हूँ जिन्होंने समय समय पर मेरी शकाशा का समाधान किया। साथ ही श्री पुरुषोत्तमजी जी टण्डन की कृतज्ञ हूँ जिन्होंने पुस्तक प्रकाशन का भार सह्य स्वीकार किया।

इसाहाबाद

२३६८

कुमुद बाण्य

प्रथम खण्ड

- पूर्वपीठिका
- साहित्यिक व्यक्तित्व

● कला कर्माजी की दृष्टि में

प्रत्येक कलाकार का कला का देखने का अपना निजी दृष्टिकोण होता है और यही दृष्टिकोण उसकी कृति को विशिष्टता प्रदान करता है। कलाक प्रति कर्माजी का मौलिक दृष्टिकोण है। उसके अनुसार कला एक प्रवृत्ति है और उसके दो पक्ष हैं—एक उसका निजी-रूप और दूसरा उसका परोक्ष रूप। कला का निजी-रूप (कलाकार के पक्ष वाला रूप, जिस अंग्रेजी में सब्जेक्टिव रूप कहते हैं) आनन्द का सृजन है, कला का परोक्ष रूप (कलाकृति का ग्रहण करने वाले पक्ष का रूप, जिसे हम अंग्रेजी में आब्जेक्टिव रूप कहते हैं) मनोरञ्जन का सृजन है। कर्माजी इन दोनों रूपों को आवश्यक मानते हैं, और उस कलाकार का महत्त्व मानते हैं जो मनोरञ्जन तो करता ही पर उस मनोरञ्जन को आनन्द में परिणत भी करता हो। अतः 'महान् कला की कसौटी इसी बात में है कि वह मनोरञ्जन को कहीं तक आनन्द की सीमा तक पहुँचा सके है।' स्पष्ट है कला का स्वातन्त्र्य मानते हुए, कर्माजी उस बहुजन हितार्थ भी मानते हैं। इस सम्बन्ध में उनका कथन है

“वेच हरेक कला स्वान्त मुक्तान् हाती है जिस कला का कलाकार अपने में समन हाकर सृजन नहीं करता उनमें कलाकार प्राण प्रतिष्ठा नहीं कर सकता पर कलाकार के निजी पक्ष के साथ पराप्तपक्ष अभिन्न-रूप से जुड़ा हुआ है क्योंकि कला का सृजन दूसरा के लिए किया जाता है, और इसलिए सामाजिक मान्यताओं के अनुसार कला का बहुजन हितार्थ होना नितान्त आवश्यक है। जो कला बहुजन हितार्थ नहीं होती वह समाज में स्थान प्राप्त नहीं कर सकती। पर कला की उन्मूल्यता उसकी शक्ति और उसकी सफलता कला के स्वातन्त्र्य मानते पक्ष में निहित है, क्योंकि कला का स्रोत तो कलाकार की प्रवृत्ति और अन्तःप्रेरणा अर्थात् कलाकार की चेतन प्राण शक्ति में

१ भगवत्पाठक कर्मा 'साहित्य की भाष्यता', पृष्ठ २२ २३ प्र० सं० हिन्दुस्तानी एम्प्रेस इन्स्टीट्यूट।

है और बसाधार का उद्देश्य आनन्द निजी आनन्द का सृजन है। मैं बहुरजन हिताय जाने सिद्धान्त को स्वीकार अवश्य करता हूँ पर इग बहुरजन हिताय जान सिद्धान्त को साहित्य का स्रोत मानने को मैं तैयार नहीं हूँ। स्वान्त मुग्धाय जान सत्त्व में ही साहित्य का सृजन है समाज द्वारा उदा साहित्य की स्वीकृति बहुरजन हिताय जान सत्त्व पर निर्भर है।^१ इग प्रकार वर्मा जो स्वान्त मुग्धाय जाने सत्त्व को प्राथमिकता देते हैं।

वर्मा जी कला में मनोरजन का प्रधानता देने हैं। इसलिए व दशान और शास्त्रीय ज्ञान से बोधिल वृत्ति को श्रेष्ठ नहीं मानते। हम विन्मी भी साहित्यकार की रचना पढ़ते समय उसमें किसी विशेष दशान को नहीं ढूँढते और न रचना से हम कोई शास्त्रीय ज्ञान पाना चाहते हैं। सामाजिक मान्यताओं का प्रतिपादन साहित्य का क्षेत्र नहीं है हम तो साहित्यकार की रचना आनन्द प्राप्त करने के लिए पढ़ते हैं और हम आनन्द मिलता है उस साहित्यकार की भावना में जो बराबर हमारे मन को पुलकित कर देती है।^२ किन्तु मनोरजन से वर्मा जी का अभिप्राय सत्त्व मनोरजन से नहीं है। उनकी भावना है कि 'कला का आन्ति रूप सामाजिक मनोरजन में ही निहित है और सामाजिक मनोरजन होने के कारण कला को व्यक्तिगत भाव से मुक्त होना चाहिए। अनादिकाल से कला को मानव जीवन में एक उच्च तथा महत्वपूर्ण स्थान मिला है क्योंकि कला सामाजिक आनन्द प्रदान से मुक्त होती है और इसलिए सामाजिक हित एवं भ्रातृत्व कला का ध्येय रहा है। और इसलिए कला में सात्विकता की भावना का महत्व मिला है क्योंकि जो सात्विक नहीं है वह असामाजिकता को प्रेरणा देती है। साहित्य का क्षेत्र भावना है और साहित्य का प्रमुख उद्देश्य मनोरजन है। सामाजिक रूप से यह भावना 'गुण की वोटि की होनी चाहिए विवृति असामाजिक है। और साहित्य द्वारा जो मनोरजन प्राप्त हो वह सामाजिक नियमों की अवहेलना की प्रेरणा देने वाला न होना चाहिए। सामाजिक नियमों की रक्षा मानव की स्वभाविक या सात्विक प्रवृत्ति ही करती है और इसलिए यह मनोरजन असात्विक न होना चाहिए। ऐसी हालत में वह प्रत्येक साहित्य जो मानव को सात्विक मनोरजन प्रदान करे वह समाज के लिए उपयोगी है—ऐसा मेरा मत है क्योंकि इस साहित्य से मानव की सद् और कल्याणकारिणी प्रवृत्ति को सहायता मिलती है और समाज स्वयं

१ भगवतोचरण वर्मा 'साहित्य की मायताएँ' पृष्ठ २४-२५ प्र० स० हिन्दुस्तानी एन्सेडमो, इलाहाबाद।

२ वही पृष्ठ ५८-५९

मानव की मद और कल्याणकारिणी प्रवृत्तियों पर कायम है। ^१ और इस प्रकार वमा जी के अनुसार 'कला का उद्देश्य सुन्दरता का सृजन है क्लृप्ता का सृजन नहीं है। ^२

विषय की पुनरावृत्ति वा अवश्य होगी, किन्तु अपनी कला-वृत्तियाँ वरमा जी का क्या रुच रहा, उस उन्हा क शब्दा में प्रस्तुत करना अमगत न होगा। वमा जी का कथन है कि ' मैं कला का निरुद्देश्य नहीं मान पाता, यद्यपि उस उद्देश्य युक्त मानने से कलाके शिथिल पद जान का खतरा रहता है। मगर ध्यान से देखा जाय तो कला का उद्देश्य है मनोरजन प्रदान करना। पर मनोरजन क विषय प्रकार ही मकत हैं और ऐसी हालत में मनोरजन क सम्बन्ध में मेरी कुछ अज्ञान-भी धारणा है। मनोरजन का आत्मगत पक्ष है—उसका वस्तुगत पक्ष भी है। मनोरजन का आत्मगत पक्ष मुझे कला क सृजन की प्रेरणा देता है लेकिन उसका वस्तुगत पक्ष ही इस कला को जनता में मान्य और जनता क लिए शाल्य बना सकता है। इस आत्मगत पक्ष और वस्तुगत पक्ष का समन्वय कठिन अवश्य है, पर वह असम्भव नहीं है। मनोरजन वह श्रेष्ठ होता है जो आनन्द की सीमा तक पहुँच जाय। यह आनन्द ही वास्तविक भावनात्मक उपलक्षि है और वह भावना ही सब काल के लिए तथा समस्त मानव जाति द्वारा स्वीकृत होगी जो सचेतना की सृष्टि करे। मनुष्य का अस्तित्व एव विवाह ही इस सचेतना पर निर्भर है। ऐसी हालत में भावनात्मक संवेदना में ही मैं आनन्द की उपलक्षि देख पाता हूँ। दूसरे शब्दों में मैं कला का एक मात्र उद्देश्य मानता हूँ भावना का उन्नीकरण। यह उदात्त भावना समस्त ज्ञान विज्ञान को मानव समाज के लिए हितकर बना सकती है। ^३

इस सद्म में अश्लीलता, मयाधवाद और आदर्शवाद क सम्बन्ध में भी वरमा जी क विचारों का सकलन समीचन होगा। अश्लीलता जैसी वस्तु विषय में होता है उसकी अभिव्यक्ति में नहीं। और जब वरमा जी कहते हैं कि मैं कला को वस्तु विषय मानता ही नहीं, मैं तो कला को अभिव्यक्ति मानता हूँ, तो स्पष्ट हो जाता है कि उनकी रचनाओं में वस्तु-विषय वाली अश्लीलता नहीं है। व कहते हैं जहाँ तक मेरे व्यक्तित्व और मेरे वस्तु-विषय का प्रश्न है मुझे

१ साहित्य का मान्यताएँ, पृष्ठ ६, ३८

२ वही पृष्ठ ५५

३ भावनीधरल वरमा 'रातों से मोह' (प्रस्तावना) पृष्ठ ६ १०

द्वारा सतोष है कि मैं अतामाजिक नहीं हूँ।^१ यही कारण है कि यथार्थवादी के समर्थक होते हुए भी वे उदा यथार्थ का चित्रण थोड़ा नहीं मानते जो कुरूप और अनल्याणकारी है क्योंकि उनका मत है कि कला का उद्देश्य गुल्मता का सृजन है कुरूपता का सृजन नहीं है।^२ इसलिए उनके यथार्थवादी और आदर्शवाद की परिभाषाएँ बड़ी व्यापक हैं। वे कहते हैं मैं यथार्थवादी को वह आदर्शवाद समझता हूँ जो बाल और परिस्विति से अनुशासित है। साहित्य और कला का भाग होने के कारण आदर्शवादी और यथार्थवादी दोनों में ही कुरूपता का कोई स्थान नहीं असद और अकल्याण से दोनों ही परे हैं। वस्तुतः प्रत्येक यथार्थवादी में मानव की उदात्त भावना का समावेश होना चाहिए क्योंकि इसी उदात्त भावना में सद और कल्याण है और प्रत्येक आदर्शवाद में सहनशीलता होना चाहिए। शाश्वत सत्य और मायताओं पर ही उसकी स्थापना होनी चाहिए।^३

● ● उपन्यास और कहानी वर्माजी की दृष्टि में

वर्माजी के अनुसार आज का युग कहानी का युग है। मेरा यह निश्चित मत है कि गद्य साहित्य में भावनात्मक संवेदना की दृष्टि से उपन्यास सबसे अधिक शक्तिशाली माध्यम है।^४ व्यावसायिक दृष्टि से भी कविता की अपेक्षा आज उपन्यास कहानी ही उपयोगी हैं। भौतिक और वैज्ञानिक युग का मनुष्य कविता के प्रति उदासीन हो गया है और स्वभावतः कविता की पुस्तक की बिक्री बहुत कम हो गयी है। कविता केवल मनबहनाव की चीज रह गयी है आजीविका के लिए कविता का कोई महत्त्व नहीं रह गया।^५

उपन्यास में वर्माजी कहानी वाले तत्त्व को प्रमुखता देते हैं। स्पष्ट ही यहाँ आधुनिक हिन्दी उपन्यासकार जेनेद्र आदि के और वर्माजी के दृष्टिकोण में अन्तर है। उनका कथन है उपन्यास में कथावस्तु का विस्तार ही एकमात्र विस्तार माना जा सकता है। अन्य प्रकार के विस्तार उपन्यास को शिथिलता प्रदान करते हैं।^६ यहाँ 'अन्य प्रकार के विस्तार से वर्माजी का अभिप्राय

१ सारिका, जनवरी १९६३।

२ साहित्य की मान्यताएँ पृष्ठ ५५

३ वही पृष्ठ ५५ ५६

४ वही पृष्ठ ११३ १३७

५ वही पृष्ठ १०१ १०२

६ वही पृष्ठ १३४

उपन्यास के पृष्ठों को तब बितक से भरने से है क्योंकि तब बितक कुछ थोड़े स लाग भले ही पसन्द करें भावनात्मक अभिव्यक्ति के अभाव क कारण इन तर्कों म साधारण पाठक को कोई दिलचस्पी नहीं हुआ करती ।

उपन्यास और लम्बी कहानी क सम्बन्ध मे वर्माजी का मत है कि "कहानी का अच्छा गठन हा लम्बी कहानी का प्राण है । जहा उपन्यास मे कथा बहन का शिल्प प्रमुख होता है वहाँ लम्बी कहानी म कथा बाँधने का शिल्प प्रमुख हुआ करता है । कौतूहल क क्षेत्र मे और मनोरंजन करने मे लम्बी कहानी उपन्यास की अपना अधिक सक्षम होती है लेकिन जहा तक भावात्मक सवेन्ना का प्रश्न है उपन्यास हमम अधिक सशक्त है । मानना को गति बहन करता है, इस बात को मानव हुए हम यह भी मानना पड़ेगा कि उपन्यास म लम्बी कहाना की अपना गति अधिक है । कहाना की यह गति है क्या ? तजी से घटनाक्रम के चलने में एक प्रकार की गति अवश्य है लेकिन वह कला की गति नहीं कही जा सकती । भावना को आरपिठ करके क लिए जितनी विविधता से काम लिया जाय उतनी ही सफलता कलाकार का मिलगी । उपन्यास में अनेक कथाआ से सवबित अनेक चरित्र आते हैं अपनी-अपनी विशेषता लिए हुए । ये काम करते हैं दूसरा पर इनके कामों की प्रतिक्रियाए होती हैं और इस प्रकार भावनात्मक सम्बन्ना का उत्तरोत्तर वृद्धि हाती रहती है । इस भावनात्मक सवेन्ना की एक निश्चित धारा होती है—हर जगह से घूमती फिरती, मटकती और राह पाती हुई यह सवेन्ना अत म एक जगह बन्दित हो जाती है और इतना अधिक तपने तथा परिपक्व होने क बाद यह भावनात्मक सवेन्ना पाठक के मन में गहराई के साथ बैठ जाती है । ' स्पष्ट है यहाँ गति से वर्माजी का तात्पर्य घटना-क्रम की गति स नहा है क्योंकि वह कवल कौतूहल और उन्मुक्ता की गति है भावनात्मक सवेन्ना की गति नहीं । जब तक घटना-क्रम प्रधान कहानी हाथ म रहती है, तब तक पाठक की रचि उपमें रहता है कहानी समाप्त हो जाने के बाद कौतूहल की तृप्ति हा जाती है और इस तृप्ति क बाद मनुष्य उस घटना-क्रम के प्रति उन्मत्त हो जाता है । इसलिए भावनात्मक सवेन्ना की गति लाने के लिए अच्छे उपन्यास कार घटना-क्रम का नहीं, कुछ थोड़े से बणन म चरित्र क सा-एक कामों स वहाँ चरित्र की स्थापना करके गति उत्पन्न करते हैं ।

वर्माजी कहानी के तीन अरथव प्रमुख मानन हैं—घटना चरित्र और भावनात्मक सवेन्ना । बिना घटना के कोई कहानी नहा हा सकती । यह घटना

चरित्रों की त्रिया प्रतित्रिया के रूप में होती है। भावनात्मक सम्बन्धना चरित्रा के साथ होती है, उम भावनात्मक सम्बन्धना को उत्पन्न करता है घटना में चरित्रा का प्रम। और यहाँ घटना में रोचकता होना धर्माजी आवश्यक मानते हैं। घटना की रोचकता घटना-वैचित्र्य नहीं है अलग चीज है। घटना वैचित्र्य स्वयं में कहानी का आधार बन सकती है लेकिन घटना वैचित्र्य में भावनात्मक सम्बन्धना हो यह आवश्यक नहीं। घटना की रोचकता में भावनात्मक सम्बन्धना का होना आवश्यक है।

इस प्रसंग में यह उल्लेख कर देना भी आवश्यक है कि वमाजी विषय वस्तु को नहीं शली को महत्वपूर्ण समझते हैं। उनका निश्चित मत है कि क्या लिखा जाता है? इसमें कला नहीं है बसे लिखा जाता है इसमें कला है। अतः कला का मूलाधार शली है।^१

इस प्रकार कला और साहित्य के संबंध में वमाजी की मान्यताएँ बनी स्पष्ट और मुलझी हुई हैं।

●●● वर्माजी का जीवन दर्शन

वर्माजी का जीवन दर्शन बड़ा स्वस्थ है और वह जीवन-सत्य पर आधारित है। अध्यात्मवादा पर वर्माजी की आस्था नहीं है। नसर्गिक जीवन की अवहेलना या उससे उपासीनता उनकी दृष्टि में अप्राकृतिक और कृत्रिम है। दूसरे शब्दों में यह पलायनवाद की चेतना है। जो व्यक्ति परिस्थितियों का सामना नहीं कर सकता वही अपनी स्वाभाविक प्रवृत्तियों से बचता फिरता है। मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ कुलूप नहीं हैं उसका प्रतिक्रियात्मक रूप विकृत हाता है। साधारण मनुष्य में गुण सक्रिय है और विकार निष्क्रिय है। साधारण मनुष्य में जो विकृतियाँ दीखती हैं वे उसकी स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ न होकर प्रतिक्रियात्मक प्रवृत्तियाँ हैं। स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ वह हैं जो अकारण हो।^२ अतएव प्राकृतिक भावनाएँ यदि अपनी तृप्ति चाहती हैं तो उन्हें दबाना अहित कर है। वर्माजी के इसी दृष्टिकोण का परिणाम है कि उनका जीवन-दर्शन भोगवाद पर आधारित है। वे उमुक्त भावनाओं की जो भर कर तृप्ति में विश्वास करते हैं। किन्तु वर्माजी का भोगवाद विकृत नहीं है। यह भी नहीं कि वर्माजी का जीवन-दर्शन नितान्त भौतिकवादी है। उच्चद्वल भाषनाओं

१ साहित्य की मान्यताएँ पृष्ठ ११२

२ वही पृष्ठ २४ ३५

की तृप्ति वे भी न्य मानते हैं। जब वे कहते हैं कि मायारण मनुष्य म गुण सक्रिय है और विकार निष्क्रिय तभी उनका दृष्टिकोण स्पष्ट हो जाता है कि अनतिक्रम भावनाओं का उनका जीवन-दर्शन म काद स्थान नहीं है। अतः उनका और पुराने नतिक्रम अनतिक्रमता क माप-मांडा म अन्तर है। परंपरागत मायताओं क दूषित रूप स उह वितृष्णा है। इन दूषित मायताओं की तुला पर नतिक्रम-अनतिक्रम आचरण का निधारण समयानुकूल नहा है। वस्तुतः हर्ष परिस्थितियों म मायताएं वनता विगडता रहता हैं। अतःमान परिस्थिति म व्यक्ति-स्वातन्त्र्य परमावश्यक है। व्यक्ति-स्वातन्त्र्य वमाना क जीवन-दर्शन का मूल है। किन्तु उनका व्यक्तिवादी चेतना असांभारिक नहा है। चित्रलेखा म महापद्म रत्नाम्बर स यह कहलाकर कि अच्छी वस्तु वही है जा तुम्हारे वाम्ब अच्छा हान क साम दूमर क वाम्ब भी अच्छी हा। वे अपने व्यक्तिवादी जीवन-दर्शन को व्यापकता प्रदान करत हैं।

मनुष्य अपनी प्रकृति के अनुसूच आचरण क्यों करता है इसम वमा जी का नियतिवादी दर्शन निहित है। व निम भागवाद का समयन करते हैं वह उनका नियतिवाद म विश्वास का ही परिणाम है। चित्रलेखा म बीजगुप्त के माध्यम से वे कहते हैं, 'मनुष्य परतन है परिस्थितियों का दास है, लक्ष्य-हान है। एक जनात शक्ति प्रत्येक व्यक्ति को चलाती है। मनुष्य की इच्छा का कोद मूल्य नहीं है। मनुष्य स्वावलम्बी नहा है, वह कर्ता भा नहीं है साधनमात्र है। अतः मनुष्य जा कुछ आचरण करता है, वह परिस्थिति क आग्रह स करता है और यह स्वाभाविक है। प्रस्त यह है कि क्या परिस्थितिजन्य प्रेरणा स अनुप्राणित होकर मनुष्य को अनुचित काय तक करने की छूट है। बर्मा जी इस प्रकार की छूट देने का तैयार नहीं हैं। वे कहते हैं, 'मनुष्य की विजय वहीं मभव है, जहाँ वह परिस्थितियों के चक्र में पडकर उसी क साथ चक्कर न लामे वरन् अपने चतुष्पादार्थ्य का विचार रखत हुए उस पर विजय पावे। स्पष्ट है, बर्मा जी परिस्थिति और नसर्गिक इच्छाओं के सहयोग की बात पर वत देते हैं।

अतएव, बर्माजी का नियतिवादी किसी भ्रातिमूलक अयविश्वास पर आधारित नहीं है। उसम मानव-जीवन क स्वस्थ विकास की समस्त समावनाएं निहित हैं। बर्मा जी ने स्वयं कहा है कि 'भेरे लार यह आरोर सगाया जा सकता है कि मैं नियतिवादी हूँ। जा नियतिवादी है वह किस प्रकार जीवन क उद्देश्य एवं भावना क उपातीकरण की बात कर सकता है यह कुछ लाग पूछेंगे।

नियतिवादा में दुःखवादा के अवयव हैं अनेक पार्श्चात्य दार्शनिकों का यह मन है। मेरा नियतिवाद इन दुःखवादों से शासित नहीं है। यह समस्त रचना विकास के नियमों पर आधारित है। मनुष्य में गुण सत्रिय हैं—वह दया प्रेम त्याग आदि गुणों से युक्त होकर ही सामाजिक प्राणी बन सक्ता है और निरंतर विकास करता जाता है। नियतिवाद का दृष्टिकोण एक स्वस्थ दृष्टिकोण है। मेरा ऐसा विश्वास है जो मेरे निजी अनुभवों से मुझे प्राप्त हुआ।^१

इस प्रकार वर्मा जी के नियतिवाद में दुःखवाद अकर्मण्यता और निराशावाद के लिए कोई स्थान नहीं है। नियतिवाद प्रकृति का नियम और जीवन सत्य है। इसकी अवहलना हम नहीं कर सकते। इसको स्वीकार कर अपना स्वस्थ विकास करना ही श्रेयस्कर है। इस प्रकार वर्माजी का नियतिवाद गीता के कर्मयोग का सम्यक् करता है। वे कहते हैं—मेरी गीता को भी तो नियतिवाद का प्रतिपादन ही मानता हूँ जहाँ कि निराशावाद से भरी अकर्मण्यता के स्थान पर आशावाद युक्त कर्म मार्ग को नियतिवाद का रूप माना गया।^२

●●●● वर्मा जी का साहित्यिक जीवन

भावुक प्रकृति तथा कवि प्रतिभा वर्मा जी को जन्म से मिली है। यद्यपि उनके बाल्य जीवन का स्वाभाविक विकास नहीं हुआ। पाँच वर्ष की अवस्था में ही उनके पिता की मृत्यु हो गयी थी पर अपनी उन्मुक्त प्रकृति के कारण उन्होंने कभी भी किसी चीज को गंभीरता से नहीं लिया। फलतः छोटी अवस्था में ही उनमें अपरिमित हास्य प्रकृति और कवि प्रतिभा मुखर हो उठी। समय के साथ स्वतंत्रता आन्दोलन के जोश में उन्होंने राजनीतिक कविताएँ लिखीं। छायावादी प्रवाह में भी वह खूब बहे। हम दीवाना की क्या हस्ती उनकी इन्हीं दिनों की कविता है। वर्मा जी जिस परिस्थिति में भी रहे हों उन्होंने उसमें अपने को खूब रमा लिया। (१९२२-२३) में प्रताप कार्यालय से सम्बन्ध स्थापित हुआ तो प्रभा मासिक पत्र में उन्होंने गद्य में लेख भी खूब लिखे। इसी काल में कहानीकार विशम्भरनाथ शर्मा कौशिक से सम्पर्क हुआ तो कहानियों में भी उनकी अभिरुचि बढ़ी। अपने और दूसरों के मनोरंजन के लिए उन्होंने कहानियाँ भी लिखीं। लेकिन लेखक की लापरवाही से आज उनमें से अधिकांश कहानियाँ

१ रंगो से मोह की प्रस्तावना से।

२ त्रिपथगा पृष्ठ ७।

प्राप्त नहीं हैं। इन काल में वर्मा जी ने कहानियाँ भले ही लिखी हों, पर अभी तक उनका ख्याति कवि रूप में ही थी। १९२३ तक छायावादी कवि की हैसियत से उन्हें यथेष्ट ख्याति मिल चुकी थी। कहा भी कवि-गाष्ठी होती, वर्मा जी अपना रंग जमा लेते थे। उन दिनों कविता कहने का भी उनका अपना लहजा और एक अजीब तरह का जोश था। यह काल उन्होंने कानपुर में बिताया था।

१९२४ में प्रयाग विश्वविद्यालय में प्रवेश किया तो काफी बरसे के लिए कवि वर्मा वहाँ के नए वातावरण में खो गए। उनकी स्वच्छन्द प्रकृति ने इस उन्मुक्त वातावरण का जा भर कर उपभोग किया। पर लेखन के क्षेत्र में यह काल उनके लिए अघकार का काल रहा। न तो इस समय वे अधिक कविताएँ लिख पायें और न ही किसी अन्य प्रकार के कलाकार के रूप में ही उभर पायें। वास्तव में यह काल उनके लिए अनुभव प्राप्ति का काल था। इन्हीं दिनों उन्हें कुछ गद्य लिखने की सुझाई ता 'पठन नाम का एक छोटा-सा उपन्यास लिख जाता। पर यह उपन्यास किसी भी अर्थ में सफल कृति नहीं बन सका। अभी भी वर्माजी की हैसियत कवि रूप में ही थी।

१९३३ में उनका पहला सफल ग्रंथ 'चित्रलेखा प्रकाशित हुआ। लोग अब वर्मा जी को उपन्यासकार के रूप में जानने लगे। यहीं से वर्मा जी ने गद्य के क्षेत्र में प्रवेश किया। किन्तु 'चित्रलेखा में भी उनका कवि रूप झिलमिलाता है। भाव, वणन शली और भाषा तक में कवि वर्मा देखने को मिलते हैं। पर चित्रलेखा की ख्याति ने कवि को पीछे छोड़ दिया और उपन्यासकार सामने आया। लेखक को उपन्यास लिखने में आनन्द आने लगा। इलाहाबाद का माहि त्तिक वातावरण भी इसमें सहायक हुआ। इधर वर्माजी के जीवन में भी सघर्ष का उदय हो रहा था और अपनी जीविकोपार्जन का सवाल अब उनके सामने था। मन में व्यावसायिक प्रकृति आशुत हुई, जिसने कवि रूप पर आवरण डालना शुरू कर दिया। और इन्हीं दिनों उनका 'वीन वय' तथा 'इन्स्टालमेंट कहानी संग्रह प्रकाश में आया। अब तक कथाकार वर्मा कवि-वर्मा पर पूरी तरह हावी हो चुका था।

'चित्रलेखा की ख्याति ने फिल्म जगत का ध्यान भी वर्मा जी की ओर आकर्षित किया। जीविकोपार्जन के लिए वर्मा जी ने कलकत्ता में 'फिल्म कारपोरेशन से सम्बन्ध स्थापित किया। वहीं उन्होंने 'टेढ़े मेरे राम्ने' का लेखन आरम्भ किया। कलकत्ते का वातावरण इसीलिए तयाकथित उपन्यास में अधिक सुखर हुआ है। इस काल में उन्होंने 'विचार का प्रकाशन भी किया। किन्तु १९४० में वर्मा जी को कलकत्ता फिल्म कारपोरेशन तथा 'विचार दोना से

तार्किक के रूप में

वर्मा जी का उपन्यास लेखन का आरम्भ समस्या प्रधान उपन्यास का लेकर हुआ है और समस्या को प्रस्तुत करने के निमित्त उन्होंने तक वितक से अनुप्राणित शली को माध्यम बनाया। १९२२ में उन्होंने बंगालत पास की और उसके बाद के छोटे से काल में उन्होंने चित्रलेखा लिखा। स्पष्ट है उपयुक्त अध्ययन ने लेखक की तकना शक्ति बढ़ा दी। फलतः वर्मा जी ने चित्रलेखा के साथ जब अपना कवि रूप छोड़ा तो उनमें एक नयी प्रवृत्ति भी जाग्रत हो उठी। प्रत्येक बात को बुद्धि से तोलने और तक के माध्यम से व्यक्त करने का उन्होंने अपना एक अलग ढंग अपना लिया। इसलिए चित्रलेखा की भाषा काव्यमय है और उसकी शली तक से अनुप्राणित। इसका प्रत्येक पात्र बुद्धिजीवी है और वह प्रत्येक बात नाप तोलकर अकाट्य तर्कों के माध्यम से कहता है। उपन्यास का आरम्भ विशेष समस्या को आधार बनाकर और पात्रों में वाद-विवाद कराकर होता है, उसी के आधार पर लेखक उपन्यास की कथा का ताना-बाना बुनता है।

श्वेतांक ने पूछा और पाप।

महाप्रभु रत्नाम्बर माना एक गहरी निद्रा से चौंक उठे। उन्होंने श्वेतांक की ओर एक बार बड़े ध्यान से देखा— पाप बड़ा कठिन प्रश्न है वत्स। पर साथ ही बड़ा स्वभाविक। तुम पूछते हो पाप क्या है। इसके बाद रत्नाम्बर ने कुछ देर तक कोलाहल से भरे पाटलिपुत्र की ओर, जिसके गगन चुम्बन करने का दम भरने वान ऊँचे-ऊँचे प्रासाद अरुणिमा के धुंधले प्रकाश में अब भी दिखलायी दे रहे थे, देखा—हाँ पाप की परिभाषा करने की मैंने भी कई बार चेष्टा की है पर सदा असफल रहा हूँ। पाप क्या है और उसका निवास कहाँ है यह एक बड़ी कठिन समस्या है जिसको आज तक नहीं सुलझा सका हूँ पर श्वेतांक यदि तुम पाप जानना ही चाहते हो तो तुम्हें ससार ढूँढना पड़ेगा। इसके लिए यदि तैयार हो तो सम्भव है पाप का पता लगा सको।

चित्रलेखा में लेखक पूरी तरह से तार्किक है। तक के माध्यम से उसने उन जीवन मूल्यों की स्थापना करने का प्रयास किया है जो आज व्यक्ति का

लिए आवश्यक है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को अपनाते हुए भी उसने तत्कालीन व्यक्ति की सौमों में उभरता हुआ विद्रोह का स्वर दिया है। समय प्रतिबल पुराने आशों को पनपाने वाल समाज के सामने उसने एक प्रश्न खड़ा कर दिया है जिसका अनुभव प्रत्येक व्यक्ति करता है। वह पूछता है—क्या नसर्गिक भावनाओं का उपभोग निन्दा की वस्तु है? क्या समय नियम ही समाज के लिए कल्याणकारी है? क्या पाप और पुण्य का निवारण इन्हीं दोषों की तुला पर करना उचित है? और इन्हीं प्रश्नों के उत्तर में चित्रलेखा में वर्मा जी ने

पाप-पुण्य की इन बहु-चर्चित समस्या को उठा कर लक्षक न बड़ी उदारता से अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। यह स्पष्ट है कि अन्तर्गतता लेखक का मन्तव्य व्यक्तिपरक रहा है। चित्रलेखा के द्वितीय संस्करण में वर्मा जी ने स्वयं लिखा है चित्रलेखा में एक समस्या है मानव-जीवन के तथा उसकी अच्छाइयों और बुराइयों के देखने का मेरा अपना दृष्टिकोण है और मेरी आत्मा का अपना सगीत भी। वर्माजी के इसी कथन से ध्वनित होता है कि उनका मत निष्पन्न नहीं रह पाया। स्वभावतः उनका लुकाव व्यक्तिवादी मानव चेतना की ओर हो गया है। किन्तु इनके लिए यह कहना कि लेखक का दृष्टिकोण मात्र उसी के दृष्टिकोण का परिचायक है सवया असंगत है। क्योंकि लक्षक का दृष्टिकोण सामाजिक समाज का दृष्टिकोण न होने पर भी उम विशाल व्यक्ति-समूह के मन्तव्य का प्रतिनिधित्व करता है जो जाने वाले युग में समाज का व्यापक दृष्टिकोण बन जावेगा और महाप्रभु रत्नाम्बर द्वारा यह कहना कर कि अच्छी वस्तु वही है जो तुम्हारे वास्तव अच्छी होने के साथ ही दूसरों के वास्तव भी अच्छी हो लक्षक अपनी जीवन-दृष्टि को व्यापक बनाता हुआ प्रतीत होता है।

चित्रलेखा में वर्मा जी ने हम नवीन दृष्टि दी है। पाप जैसी वस्तु का एक-एक निराकरण कर देना है और इसलिए पुण्य का भी निराकरण हो जाता है। अन्त में महाप्रभु रत्नाम्बर में वे कहलाते हैं ससार में पाप-कुछ भी नहीं है वह बसल मनुष्य के दृष्टिकोण की विषमता का दूसरा नाम है। प्रत्येक व्यक्ति एक विशेष प्रकार की मनप्रवृत्ति लेकर उत्पन्न होता है—प्रत्येक व्यक्ति का रगमच पर एक अभिनय करने आता है। अपनी मन प्रवृत्ति से प्रेरित होकर अपने पाठ को वह दुहराता है—यही मनुष्य का जीवन है। जो कुछ मनुष्य करता है वह उसने स्वभाव के अनुकूल होता है और स्वभाव प्राशुविन है। मनुष्य अपना स्वामी नहीं है वह परिस्परितिया का दास है—विषय है। वह

बर्ता नहीं है वह बेवस साधन है। फिर पुष्प और पाप कैसा? हम न पाप करते हैं और न पुष्प करते हैं हम बेवस वह करते हैं जो हमें करना पड़ता है।

यह तो हुई उपन्यास की समस्या और संतक व दृष्टिकोण की बात। इसका समाधान में बर्माजी ने व्यक्ति स्वातंत्र्य की स्थापना की है। इस व्यक्ति-स्वातंत्र्य को उन्होंने यौन समस्या के माध्यम से व्यक्त किया है। मनु प्रस्तुत कृति का 'उपक्रमणिका' तथा उपसंहार वाले अंश को छोड़ दिया जाय तो स्पष्ट हो जाता है कि उपन्यास की मूल-समस्या पाप-पुष्प की नहीं यौन सम्बन्ध है। पाप-पुष्प की समस्या उठाकर तो लेखक ने अपने विषय को व्यापक बनाने का बहाना ढूँढा है। वस्तुतः लेखक यौन संबंधी स्वतंत्रता की माँग करता है। वह प्रेम को विवाह से ऊँचा ठहराता है। यहाँ वह पुरानी मान्यताओं की अवहेलना कर विवाह की नयी परिभाषा देता है। उसके अनुसार स्त्री और पुरुष के विरथायी सम्बन्ध को ही विवाह कहते हैं। स्पष्ट है बर्माजी परंपरागत आचारों का विरोध करते हुए उपरोक्त भावनाओं को खुलकर खेने का अवसर देते हैं। जीवन के स्वच्छ उपभोग में उनकी आस्था है। बीजगुप्त और चित्रलेखा से वे कहलाते हैं वतमान हमारे सामने है और वह उल्लास विलास है ससार का सारा सुख है यौवन का सार है। अतः चित्रलेखा में योग और अध्यात्मवाद का विरोध कर उन्होंने भोगवाद को प्रश्रय दिया है। लक्षक की भोगवाद में अमित आस्था है। जीवन के मुक्त प्रवाह में न बहकर समय नियम और योग का जीवन विताना अस्वाभाविक है। स्वाभाविक जीवन से मुक्त मोड़ने पर व्यक्ति का स्वस्थ विकास असंभव है। अपनी नैसर्गिक वृत्तियों को दबाना, उससे दूर भागना मनुष्य की दुबलता का द्योतक है। वही व्यक्ति स्वाभाविक जीवन से भागता है जिसमें परिस्थितियों से संघर्ष करने की सामर्थ्य नहीं होती। इस प्रकार चित्रलेखा में बर्माजी ने जो जीवन-दर्शन प्रस्तुत किया है वह वतमान परिस्थिति में अत्यन्त स्वस्थ और ग्रहण करने योग्य है।

चित्रलेखा में अपने दृष्टिकोण का प्रतिपादन करने के लिए लेखक ने एक वितक का सहारा लिया है। उसके तक अकाट्य हैं। बीजगुप्त और चित्रलेखा के वार्तालाप व एक अंश को प्रस्तुत कर इसका उदाहरण दिया जा सकता है। बीजगुप्त कहता है चित्रलेखा! तुम भूलती हो। प्रेम का सम्बन्ध आत्मा से है प्रकृति से नहीं। प्रेम आत्मा से होता है शरीर से नहीं। परिवर्तन प्रकृति का नियम है आत्मा का नहीं। आत्मा का सम्बन्ध अमर है। और इस सत्य का खण्डन चित्रलेखा यह कहकर देती है कि कभी विचित्र बात कह रहे हो बीजगुप्त! जो जन्म लेता है वह मरता है यदि कोई अमर है तो अजन्मा भी

है। जहाँ सृष्टि है वहाँ प्रलय भी रहेगा। आत्मा अजमा है इसलिए अमर है पर प्रेम अजमा नहीं है। किसी व्यक्ति से प्रेम होता है तो उस स्थान पर प्रेम अमर होता है। सबय हाना ही उस सम्बन्ध का अन्त होना है। वह सम्बन्ध अनन्त नहीं है कभी-न-कभी उस सम्बन्ध का अन्त होगा ही। प्रेम और वासना में भेद केवल इतना ही है कि वासना पागलपन है जो क्षणिक है और इसीलिए वासना पागलपन के साथ ही दूर हो जाती है और प्रेम गम्भीर है। उसका अन्तित्व शीघ्र नहीं मिटता। आत्मा का सम्बन्ध बनादि नहीं है बीजगुप्त।

सम्पूर्ण उपन्यास इसी प्रकार के तन्त्र-वितर्कों से भरा पटा है। सभी पात्र मुशिशित एव मुससृष्ट हैं इसलिए उनका तन्त्रपूर्ण वार्तानाप अस्वामाविक नहीं लगता। प्रत्येक के तक अकार्य और किमी-न-किसी अशम सारगर्भित हैं। इन तर्कों का समझने के लिए पाठकों का किंचित बौद्धिक प्रयास भी करना पड़ता है। किन्तु इसका फलस्वरूप उपन्यास की रमात्मकता जरा भी कम नहीं होने पायी है क्योंकि उनमें कविता वाला तत्त्व इतना मोहक है कि उसने तक वितर्क से पूर्ण स्थला को भी सरस बना लिया है।

तीन वय में भी उच्च तार्किक बना हुआ है। समस्या इसमें भी स्पष्ट है। पर इसमें कहानी वाला अशम भी पर्याप्त है और दाना में सतुलन बना हुआ है। चित्रलेखा की भाँति पहला दूमरे से अलग नहीं उभर पाया है। समस्या दोनों की एक ही है। बर्मा जी ने चित्रलेखा में प्रेम-विषयक स्वातन्त्र्य की माँग का कर दी किन्तु इस बात का अनुभव उन्होंने बाद में किया कि इसकी प्राप्ति के लिए सधप भी आवश्यक है। यह हम आप-ही-आप नहीं मिल जाता। इसके लिए हम अपनी वर्तमान स्थिति से सधप करना पड़ता है। चित्रलेखा का प्रणय कल्पना-भोजन की बन्तु था यथार्थ-जगत् में इस प्रेम का कुछ और ही स्वरूप है। लखक के अनुभव ने उसे इस तथ्य का ज्ञान कराया। फलतः लखक अपने स्वप्निल संसार को ध्यान यथार्थ भूमि पर उतर आया। इसलिए चित्रलेखा और 'तीन वय' का विषय एक होने पर भी उनका निरूपण भिन्न है। उसकी पृष्ठभूमि चित्रलेखा में भौतिक-वैज्ञानिक न हाकर वर्तमान के अतिरिक्त आधारित है। यद्यपि चित्रलेखा में पृष्ठ-भूमि की ऐतिहासिकता के अतिरिक्त सभी कुछ वर्तमान का है—उसकी समस्या उसका मनोविज्ञान और उसका समाधान तक। किन्तु 'तीन वय' का सभी कुछ वर्तमान पर स्थित है। एसा प्रतीत होता है कि लखक रामांत से यथाय की आर बढ़ा और तब से अपने-सेवन ज्ञान के आत्र तक के जीवन में वह यथाय से ही चिपका रहा है।

तीन वय का कथानक यथाय भूमि पर निर्मित है उनमें चित्रलेखा की

भाति विशुद्ध काम-भ्रमस्या नहीं है। इस काम-भ्रमस्या को सरस्वती ने आज की पूजावाणी विषमता से जोड़ दिया है। पतन तीन वर्ष की मूल समस्या अर्थ जनित यौन विवृति की है। आज की आर्थिक विषमता ने व्यक्ति में अनेक प्रकार की विवृतियों को जन्म दिया है। असतोष और अतृप्ति के कारण उमरा सतुलन बिगड़ गया है। इस मनोन्शा का शिकार मध्य वर्ग का व्यक्ति सबसे अधिक हुआ है। अपनी वास्तविक स्थिति को मूल वह महत्वाकांक्षी बन गया है और इसके लिए वह अनेक प्रकार के अनतिक्रमण अपनाते को विवश हुआ है। झूठ मिथ्या-आडम्बर छल कपट उसके आचरण के अभिन्न अंग बन गये हैं। प्रेमचर ने इस मध्यवर्गीय व्यक्ति को लक्ष्य बहुत लिखा किन्तु उनका उद्देश्य केवल उसके आर्थिक पक्ष वाली समस्या तक सीमित रहा। उन्होंने मध्यवर्ग के अर्थाभाव जनित सकटा से घिरे व्यक्ति को मनाभाव उनके विचार-चरित्रतन एवं पतन का विस्तृत अंकन किया है किन्तु इस अभाव से जो मानसिक प्रतिक्रिया होती है उस पर उनका ध्यान नहीं गया। वस्तुतः अर्थाभाव के कारण मनुष्य भौतिक दृष्टि से तो असतुष्ट होता ही है इससे भी अधिक असतोष उसकी आत्मा को होता है। तीन वर्ष में पहले-पहल वर्मा जी ने अर्थाभाव जनित मानसिक असतोष का अंकन किया। उन्होंने दर्शाया कि मनुष्य की कोमल वृत्तियाँ प्रेम आदि द्वितीया भाव के कारण शुष्क और दमित ही नहीं क्लृप्त भी हो जाती हैं। उसे लगता है कि इस पूजावाणी युग में उसके हृदयगत भावों का कोई मूल्य नहीं है क्योंकि वे भी क्रय विक्रय के उपकरण बन गए हैं। ऐसी अवस्था में व्यक्ति अपना मानसिक सतुलन खो बैठा है और कभी-कभी अपने उच्चांशों से गिर जाता है। भगवतीचरण वर्मा ने 'तीन वर्ष' द्वारा प्रथम बार इस बात का उद्घाटन किया कि इस वर्ग में आर्थिक विषमताओं के कारण केवल आर्थिक कुंठाएँ ही नहीं हैं वरन् अर्थपरक काम-कुंठाएँ भी बड़े विकृत रूप में विकसित हो रही हैं। अर्थसंकोच के कारण शारीरिक कष्ट की अपेक्षा मानसिक कष्टों की कहानी अधिक बनी और करुण है। शरीर तो इस आघात से केवल छत्पटाकर ही रह जाता है किन्तु आत्मा छत्पटाती ही नहीं बिलरजानी है और कभी-कभी टूट भी जाती है। इसी को आधार बनाकर वर्मा जी ने तीन वर्ष की कहानी निर्मित की है। तीन वर्ष का प्रत्येक पात्र बुद्धिजीवी है और उसका सारा कुछ बौद्धिक-स्तर पर पटित होता है। प्रेम जैसा नर्सागिक उन्मत्त तब बुद्धिजनित मायताओं के कारण कई मोड़ लेता है। प्रेम ईश्वरीय है—प्रेम ही जीवन है वह दो आत्माओं का बंधन है। प्रेम में ही ससार स्थित है—प्रेम जन्म है। प्रेम अनन्त है। प्रेम ही मनुष्य का प्राण है। तीन वर्ष के रमेश की यह आत्मा उचित प्रतीत होती

है। पर प्रमा का यह कथन भी बुद्धि और तर्क की दृष्टि से ठीक प्रतीत होता है कि विवाह स्त्री और पुरुष के बीच में आधिक सम्बन्ध है।

विपलत्वा और तीन वय क बात जब हम 'टेडे मेड रास्ते को पन्ते हैं तो इनमें वमा जी की प्रीढ़ता क स्थान हात हैं। इसमें आकर लेखक क विचार और उपास-कला पूण्ड परिपक्व हो चुकी है। एक साथ अनक विना का सामूहिक रूप में देखने उन्हें परम्पर तुलनात्मक दृष्टि स जांचने और एक वस्तु का विभिन्न दृष्टिकोणों से परखने की व्यापक दृष्टि तर्क को मिल चुकी है। इसमें अतिरिक्त विशाल कथानक का सुन्दर तन्तुजाल में बुनने की लक्ष्मण तन्तु भी वमा जी के हाथ लग गयी है। विपलत्वा और 'तल वय सञ्चित विषय-वस्तु को लेकर लिखे गये उपास हैं। यही नहा, इन सामित विपमा का भी समक अनेक दृष्टिकोणों में नहा न्व सका है। फलतः कथानक भी सधु और माया-माना बनकर रह गया है। परन्तु 'टेडे म' रास्ते में कथानक की यह लक्ष्मण धार सरलता समाप्त हो गया है। व्यापक समस्या को लेकर चलने क कारण लेखक का पात्रों का सख्या में वृद्धि हो करनी ही पड़ी है। उम समस्या की अधिक उभारने उसका विश्लेषण करने क लिए उस विशाल वातावरण और प्रतिक्रियात्मक परिस्थितियों का भी निमा करना पडा है। इन सबका रचना करने में वमा जी लयलत सफल हुए हैं।

विषय और समस्या का तर्क क माध्यम में उभारने की आश्रित वमा जी में पुरानी है। 'तीन वय में तक कुछ धूमिल रूप में मिलता है। परन्तु 'टेडे मेडे रास्ते में वह फिर उग्र रूप में प्रस्तुत है। विविध पात्रों की सद्धान्तिक चर्चा कर क तद्बुद्धिमान सामाजिक, राजनितिक और सामूहिक म्यात का अकन वह कायेसी साम्यवादी और क्रांतिकारी पार्टियों के माध्यम से करता है। कर्नाचित् वमा जी ने कायेसी साम्यवादी और क्रांतिकारी पात्रों आदि की गतिविधिया का सूक्ष्म पर्यवेक्षण किया था उनको कमिया का अनुभव किया था, तभी उनके तक बडे अकाम्य हैं। परस्पर विरानी पात्रों के अकितियों क माध्यम से, जो उच्च शक्ति है और जिनकी तकना शक्ति भी बहुत ऊँची है, उन्हें एक दूसरे क। पात्रों का कमजोरिया का उद्घाटन कराया है। माकण्येय कम्युनिस्ट पात्रों का सख्त करता है और उग्र सख्त का आधार है तक, निमका जवाब दुनिया पूमा उमानाथ नहा पाता। माकण्येय का यह कथन कितना सारगर्भित है

उमानाथ ! तुम बतला सकत हो कि कि क कम्युनिस्ट ने हमरा की घराबी में इविन होकर अपनी सम्मानि उनक लिए दान कर दी है। तुम बतला सकत हो कि कि क कम्युनिस्ट ने एयाशा ना-विनाय छोडे हैं, तुम बतला सकत हो कि

किस कम्यूनिस्ट ने त्याग दिया है ? यह चीज जिनका मतलब है 'नेना'—इन पर तुम्हें विश्वास नहा। तुम्हारा सिद्धांत है लेना—ठीक वही सिद्धान्त जो पूंजीपति का है। कम्यूनियम एक तरह से पूंजीवाण से भी भयानक है क्योंकि पूंजीवाण में जहाँ महज लेना ध्येय है वहाँ कम्यूनियम का ध्येय लन व साथ मारना और पीटना भी है। दूसरे शब्दों में कम्यूनियम पूंजीवाण की हिंसा की एक बिनाशात्मक प्रतिहिंसा भी है जो समाज के लिए वही अधिक भयानक है।

उमानाथ कांप्रेस वाला पर आभेप करता है यद्यपि उमरना अल्पाश ही सत्य है। किन्तु मनमोहन क कथन और तर्क अधिक सारगर्भित हैं। उसका यह कथन कि निबल और सबल की सड़ाई कवल एन तरह से सम्भव है निबल सबल पर जब बार करे पीछे से करे ! तब यह कथन यथाय सत्य बनकर प्रकट होता है जब ताल्लुक्वेदार रामनाथ तिवारी की अहम्मन्यता पर वह पीछे से प्रहार करके करारी ठोकर मारता है।

बर्माजी ने सभी वादों के लोगो को असफल दिखा कर सब में अनास्था प्रकट की है। किसी भी वाण के लिए उनका मताग्रह नहीं दीखता। दयानाथ चुनाव हारकर निराश हो जाता है उमानाथ पकड़े जाने के भय से भाग खडा होता है और प्रभानाथ भी सरकार के चगुल में फन जाने के कारण मौत का धरण करने को मजबूर होता है। किन्तु इतना निश्चय है कि प्रभा हारकर भी अजय रहता है और उसके साथ पाठको की सारी सहानुभूति उमड पडती है। और यही हमें वहा लेखक की सहानुभूति भी प्रच्छन्न मिलती है। दूसरे शब्दों में क्रान्तिकारी माग के प्रति लेखक का लगाव प्रकट होता है। क्रान्तिकारी मनमोहन वीणा प्रभानाथ तथा इस समुदाय के सभी सदस्यों का चरित्र ऊचा उठाकर वह अप्रत्यक्ष रूप से उनका माग को उचित बनाता हुआ प्रतीत होता है। यह स्वाभाविक भी है क्योंकि कितना भी तटस्थ रहने पर, वहां न कही लेखक की आस्था प्रकट हो ही जाती है। टेडे मेने रास्ते में बर्माजी के साथ भी ऐसा हुआ है। क्रान्तिकारी माग क अनुयायियों में असली मानवता के दर्शन कराकर उन्होंने अपनी आस्था को प्रकट होने का अवसर दिया है। मनमोहन दुखी जनता को पीडा-मुक्त करने का निग हत्या करता है तथा डाके डालता है। इसलिए वह यथाय मानव है। उसके सामने रामसिंह आदि व्यक्ति नरक के कीड हैं जो कवल अपना स्वाय देखते हैं। इसी भांति प्रभानाथ और वीणा क्रान्ति का अमानुषिक माग अपनात हुए भी बहुत ऊंचे हैं क्योंकि दूसरा की भलाई के निमित्त वे अपने स्वार्थों का बलिदान करते हैं।

स्वभावतः पाठक क मन म यह प्रश्न उठता है कि वमाजी ने हिंसात्मक आतंकवाद का क्यों उच्छेद समझा ? जब यह प्रश्न मैंने वमाजी से किया तो उत्तर में उन्होंने मुझे जा लिखा वह अन्तरा यह था 'टेन्-मन् रास्ते म पाठक की सहानुभूति स्वभावतः आतंकवाद क प्रति हा जाती है क्योंकि व जनमानस को स्वामाविक और कल्याणकारिणी हिंसा क सबसे निकट है और उसक सामन गांधीवाद का उपाय परिवेश भावनात्मक दृष्टि से कमजोर दिखने लगता है ।

किन्तु अन्त म वमाजी आतंकवाद को भी अत्यन्त निन्दाते हैं क्योंकि वे अन्त म मनमाह्वन क मुख से यह कहलाते हैं कि 'प्रभा अन्तिम समय एक बात में तुमसे कहूंगा—तुम इन प्रान्तिकारी दल को छोड़ दो । यह बड़ा गलत रास्ता है । तब हम यह निष्कप निजालना पड़ता है कि वमाजी का दृष्टि में सभी रास्ते टूट गये हैं । इसका कारण यह है कि टूट गये रास्त में प्रतिपादित प्रत्येक वाद का मूल बौद्धिक रूप से अपन मत का समर्थक या पापक है—भावनात्मक रूप से नहीं । यहाँ पर वमाजी ने टूटे-भेड़े रास्ते में एक सूची पेश कर ली है क्योंकि 'टिडे मने रास्ते का एक विशेष पेश है । तिवारी परिवार का हरक प्राणा विभा बाद का समर्थक अथवा पापक है—कवन बौद्धिक रूप से, भावात्मक रूप से नहीं और उन हरक प्राणा का एक प्रतिरूप (counterpart) है जो शुद्ध रूप से भावात्मक है । रामनाथ तिवारा का प्रतिरूप (counterpart) भगदू मिय है । दयानाथ का प्रतिरूप माकण्य है उमानाथ का प्रतिरूप ब्रह्मन्त है और प्रभानाथ का प्रतिरूप मनमाह्वन है । इन प्रतिरूपों की सहायता से सख्त क अन्तर बाल कलाकार न इन वादों को कम जाँचिये निन्दायी हैं ।

वमाजी क उपन्यास लेखन का आरम्भ समस्या-मूलक उपन्यास चित्रलेखा से हुआ था । किन्तु बीच में वे सामाजिक उपन्यास रचना में रुक गये । इधर साम्य और सीमा (१९६०) क रूप में उन्होंने फिर से हमें एक मशकत समस्या-मूलक उपन्यास दिया है । जिन भाँति चित्रलेखा का बाह्य रूप उनकी क्यात्मक पृष्ठभूमि—भारतीय होने पर भी उनकी समस्याएँ शाश्वत हैं उन्ही भाँति साम्य और सीमा की क्यात्मक पृष्ठभूमि भारतीय होने हुए भी, सार्वभौमिक शाश्वत है । उन्हें हम 'शाश्वत की परिधि म नहीं बाँध सकते । 'चित्रलेखा और 'साम्य और सीमा' दोनों म वमाजी न एक महत्त्वपूर्ण जीवन शान दिया है । किन्तु तदुपस्था और प्रौढ़ावस्था म जितना अन्तर होता है उतना ही अन्तर हम 'चित्रलेखा तथा 'साम्य और सीमा' क जीवन-शान म मिलता है । चित्रलेखा वमाजी की तदुपस्था की एक महत्त्वपूर्ण वृत्ति है और

'सामर्थ्य और सीमा' प्रौढ़ावस्था की। 'सामर्थ्य और सीमा' में वर्माजी के विचारों की परिपक्वता एवम् सूक्ष्म जीवन दृष्टि परिलक्षित हुई है। 'चित्रलेखा' में वह प्रौढ़ता नहीं है और न ही वह आसक्तता थी क्योंकि तरुण लेखक में वह सम्भव नहीं। इसीलिए चित्रलेखा और सामर्थ्य और सीमा दोनों जीवन दर्शन में अन्तर है। चित्रलेखा जहाँ जीवन और उल्लास की वायत है, सामर्थ्य और सीमा मृत्यु और विनाश की। पहले से हम जीवन की प्रेरणा तथा स्फूर्ति मिलती है दूसरे से अवसाद तथा विवशता। फिर भी चित्रलेखा तथा सामर्थ्य और सीमा में जीवन दर्शन परस्पर विरोधी नहीं हैं। वे एक दूसरे के पूरक हैं। "चित्रलेखा के जीवन-दर्शन की पूर्णता 'सामर्थ्य और सीमा' में आकर हुई है। यदि 'चित्रलेखा' के अनुसार जीवन कभी न बुझने वाली एक अविनाश योग्य विधा है तो सामर्थ्य और सीमा के अनुसार भी जीवन का प्रागल्भिक जीवन की वास्तविक सुन्दरता की उपलब्धि है। अन्तर केवल इतना है कि 'चित्रलेखा' में जहाँ लेखक का विश्वास है कि जीवन एक हलचल से परिवर्तन है और हलचल तथा परिवर्तन में सुख और शान्ति का कोई स्थान नहीं वहाँ सामर्थ्य और सीमा में आकर वह सुख और तृप्ति में विश्वास करने लगता है।

चित्रलेखा जहाँ जीवन का अर्थ सत्य प्रकट करती है वहाँ सामर्थ्य और सीमा उसका पूरा सत्य। चित्रलेखा का जीवन दर्शन स्वस्थ अवश्य है पर वह पूरा सत्य नहीं है। तरुण कवि लेखक में जीवन के केवल उल्लास और सृजन वाले अंश को देखने की दृष्टि थी। फलतः उसका जीवन दर्शन एक पक्षीय ही रहा। किन्तु आज के प्रौढ़ लेखक के विचार एवं दृष्टि में परिपक्वता आ गयी है और उसने जीवन के दूसरे पक्षों को भी देखा है। वह जान गया है कि जीवन और निर्माण ही सत्य नहीं है मृत्यु और विनाश भी सत्य है। न जीवन ही शाश्वत है, न मृत्यु ही! जीवन मरण का चक्र तो चलता रहता है। जहाँ आन्ति है वहाँ अन्त अवश्यभावी है। अतएव जीवन और उल्लास चिरस्थायी नहीं है उनका अन्तिम परणति मृत्यु और विनाश है।

प्रस्तुत उपन्यास की समस्या है मनुष्य के 'सामर्थ्य और उसका सीमा' की। मनुष्य अपने को बड़ा और महान समझता है। इसी अहं एवम् दप के बल पर वह दूसरों की प्रवृत्ति की जीर निपति की उपाय करता रहता है। किन्तु एव सीमा आती है और जहाँ उसका यह अभिमान घुसा साजित होता है उसका यत्न क्षण भर में ही जा जाता है और उसे असहाय एवं निर्गल होकर नियति के विधान का शिकार होना पता है।

इस सुनिश्चित यात्रा को लेकर बर्माजी इस उपासना का ताना-बाना बुनते हैं—ममत्ता व विभिन्न पहलुओं पर प्रकारा डालने के लिए बेगमम आठ पात्रों का लेकर कथानक का निमाण करते हैं। सभी पात्र अपने-अपने ढंग से स्वयं का सक्षम और समथ समथते हैं। रतन चन्द्र मन्ना नेश का बहुत बड़ा पूजापति है और इसलिए वह ममज्ञता है कि सारी सामर्थ्य और शक्ति उसका हाथ में है। वह कहता है कि इस दलमान में सारी सामर्थ्य पूजा में है और इसी दल एव अहं का बल पर वह भावना तक का पूजा से खरीना चाहता है। देवन्दर इसा निरर है इसलिए उसकी दृष्टि में मनुष्य अनमर्थ नहीं है। मनुष्य का पात्र बुद्धि है मान है, चेतना है। असमथ तो अचेतन और जड़ प्रकृति है। मनुष्य सभी प्रकृति पर शासन करता है। यह प्रकृति उसका बरा में है। विज्ञान मानव का वह पुरुषत्व है जो प्रकृति का उसका बरा में रखता है, जो प्रकृति का अनगिनती रहस्य खोलता जाता है। हमारा समस्त विकास इस विज्ञान का विकास है। मैं उसी विज्ञान का प्रतिनिधि हूँ। मैं पाना पत्थर आदि निर्जीव तत्वों का साथ खेलता हूँ उन्हें मैं अपने बरा में करता हूँ। मनुष्य ममम और ममथ है वह बर्ता है। इस प्रकार शक्ति सामर्थ्य और आत्म विश्वास का पाण्डपन देवन्दर का व्यक्तित्व में भरा पड़ा है। इसी प्रकार जायननाल सत्ता का मम में स्वयं का सगम ममज्ञता है। पानन्दर राव ५० शिवानन्द शर्मा और ममूर को भी अपनी अपनी शक्ति और सामर्थ्य पर दप है। सभी पात्र समझते हैं कि उन्होंने मम को पा लिया है किन्तु नाहर मित्र का लक्ष्य व मन्त्रव्य का वादक है व शक्ति में व केवल अध-सत्य का जान पाव है मम को नहीं। और यह अर्थ मम असत्य से बड़ा अतिव्य भयानक है। इस समय को पहचान न करने का कारण यह है कि व्यक्ति अपने अहं शक्ति और क्षमता व अभिमान में, समृद्धि और सक्रमता का क्षम में अपनी सीमा और विवशता को भूल बैठता है। लेखक इन सबके झूठे अभिमान और आत्म विश्वास को बिखरते देवता है। सर्वप्रथम इसकी सामर्थ्य की विन्ती तक उन्नी है जत्र व मन्ना पात्र असह्य और निरीह रावी मानकुमारों का हस्तगत करने के लिए बाव की तरफ झटते हैं। पण नहा जिम सामर्थ्य और शक्ति पर इहें मम का अहं आत्मविश्वास या उतर बल पर व दूमरा को तो बना अपने तक का नहीं बचा पात्रे। अन्त में मन्नी पात्र एकी म्यति में पद पात्रे हैं जहाँ उनकी सामर्थ्य और शक्ति कुछ नग कर पाती और व बाल के गाल में चन जाते हैं। पन्नी अन्त में मेरा का अन्ना बन्ना भारण जाता है 'पचरत उ निर्मित इस मनुष्य ने हरण तत्व उ मुक्त किया है परण तत्व पर विजय पाया है।

हर एक तत्व को अपने बरा में करके उग पर शासन किया है। उसका शक्ति जितना बड़ा है उतना ही झूठा भी है। इन तत्व के कुछ रहस्यों को ही जान सका है वह अभी तक इन तत्वों में भी जीवन है इन तत्वों में भी चेतना है इन तत्वों में भी सभावना है। ये तत्व सत्य हैं य। तत्व क्रुद्ध होते हैं ये तत्व रचना करते हैं ये तत्व विनाश करने हैं। ये तत्व कर्त्ता हैं मनुष्य इन तत्वों के बर्तों का उपभोग करता है। हमारे आदि पुरुष याचक थे वे इन प्रकृति की उपासना करते थे। वे इन तत्वों से भिन्ना माँगते थे। और इन पूजा से प्रसन्न होकर याचना से सत्य हाकर इन तत्वों ने मनुष्य को दिया भरपूर दिया। मनुष्य सम्पन्न होना गया मनुष्य शक्तिशाली बनता गया। वह भूल ही गया कि वह याचक है और फिर वह लुटेरे की भाँति प्रकृति के साथ खिलवाड़ करता गया। भयानक रूप से क्रुद्ध हो उठा उसका अह और उसका ज्ञान। इस प्रकार इस कवच के माध्यम से लवक ने भारतीय वैदिक-संस्कृति की पुनर्स्थापना की है।

प्रश्न यह है कि यदि व्यक्ति की सामर्थ्य और शक्ति अर्थात् सत्य मात्र है तो फिर सत्य क्या है? लवक इस सत्य को मनुष्य के सामर्थ्य और नियति के पारस्परिक सघष द्वारा उद्घाटित करने का प्रयास करता है। नियति का सबसे बड़ा प्रतीक है—प्रकृति। प्रकृति पर मनुष्य ने विजय प्राप्त करने का प्रयास किया है और इसमें उसे सफलता भी प्राप्त हुई है। किंतु उसकी भी एक सीमा है जहाँ मनुष्य का सामर्थ्य विवश हो जाता है उसकी शक्ति कुठित हो जाती है। यह सीमा है मृत्यु जो प्राणी मात्र के लिए अनिवार्य है। और यही मनुष्य को झुकना पड़ता है—नियति के सामने भी और प्रकृति के सामने भी यही सत्य है। इसी सत्य का प्रकाशन लेखक नाहरसिंह द्वारा कराता है। नाहरसिंह कहता है— झुको झुको। मनुष्य का यह भ्रम है कि वह लेता है सत्य तो यह है कि वह कवन पाता भर है। और तुममें इतनी सामर्थ्य कहाँ कि तुम ले सको। प्रकृति तो मुक्त हस्त धाँटती है धन धान्य। वह तुम्हें सदय होकर सब कुछ देती है। जब तक वह सदय है तभी तक तुम्हारी स्थापना है, तुम्हारी सम्पन्नता है अन्यथा तुम्हारा कोई अस्तित्व नहीं।

इस प्रकार उस नियतिवाद की स्थापना स्वयं हो जाती है जिसमें मानना पड़ता है कर्त्ता कोई दूसरा ही है जो अदृश्य है हम सब तो उस कर्त्ता के साधन हैं। हमारी यति हमारी बुद्धि हमारा ज्ञान हमारी भावना इनको अपना

लेखक की कविता की पाँच पवित्रियाँ भी मनुष्य के इस क्षाब्ध रूप पर व्यप्य करती हैं ।

अब प्रश्न यह है कि नियति क हाथ में ही सब कुछ है या फिर हमारा यह सपप क्या ? क्या क्या जी हम परिस्थितियाँ का दास हाना नहा सिखात ? हमारा यह प्रश्न निमूल सिद्ध हाता है कर्माँकि निपतिवाँ का सबसे बडा सपपक, लक्षक के दृष्टिकोण का प्रतीक—नाहरसिंह स्थल-स्थल पर कहता है कि हमें परिस्थितियाँ का मुकाबला करना पडेगा । जो बुद्ध जैसा ह, उस वैसा स्वीकार करके उसस लडा उसका बदला वाकी हागा बहो जा भगवान का विधान है । हा अपना कत्तम्य हमें करते रहना है । और जहा अपने को सगम समझने वाल ममस्त व्यक्ति परिस्थिति से लड नहा पाते, वहाँ नाहरसिंह अन्त तक उनस सपप करना है । मृत्यु पर विजय पाने की भरपूर काशिश करता है । उसका यह सपप हम आत्मेप का सबसे बडा प्रतिवाँ है । इस प्रकार सम्पूर्ण उपन्यास विचारोत्तेजक है । लेखक क तक अकाप्य हैं । इसम प्रस्तुत जावन-मत्य की उपेगा हम नया कर मकठ इस देशकान की सीमा में बाँध नहा सकत ।

वर्मा जी क जिन उपन्यासों में तक की प्रधानता है, व सभी विचारोत्तेजक हैं । और इस बुद्धि तत्व की प्रधानता लेखक क विचार तथा उसकी प्रकाशन प्रणाला में ही नहा उसक द्वारा निमित्त पात्रों में भा है । भल ही पाठक यह अनुभव करे कि लेखक क तक का वह काट सकता है परन्तु जिन सदम में य तक प्रस्तुत किय गए हैं उसमें व पूर्णतया युक्ति-सगत बैरुत हैं । भन ही उनस बलग उय तक की काइ मापकता न हो ।

हास्य व्यंग्यकार क रूप म

वर्मा जी के व्यक्तित्व और लेखन दानो म ही हास्य-व्यंग्य की एक अद्भुत चलन है। उनकी आँखो स छलकता हास्य और ओठो पर फूटती हसी जस जीवन और जगत् की निस्सारता और निरर्थकता की ओर सवेन करते हैं एक कटु सत्य की अभिव्यक्ति करते हैं। हास्य और व्यंग्य करने की उनम एक स्वाभाविक प्रवृत्ति भी है। जीवन के जिन सधरों से वे गुजरे हैं उनम कोई दूनरा व्यक्ति होता तो वह टूट जाता बिलखर जाता पर वर्मा जी ने वह सब हनी मे उडा दिया। गम्भीर-से गम्भीर घात को हास्य-व्यंग्य मे उडा देना या हल्की फुल्की बात को गम्भीर रूप दे देना वर्मा जी की आदत बन गयी है। बाट मे यही उनके लेखन-कला का एक अंग भी बन गयी।

स्वभाव मे हास्य व्यंग्य की अतिशय माना होने के कारण जहाँ भी उहे अवसर मिला है (उपन्यास या कहानी मे) उन्होंने अपनी इस प्रवृत्ति का खूब उपयोग किया है। किन्तु यत्र-तत्र हास्य व्यंग्य का अद्भुत सृजन करने से वर्मा जी को सतोष नहीं मिला। फलत उस तृप्ति के लिए उन्होंने हास्य व्यंग्य से आधापान्त ओत प्रीत एक लघु उपन्यास अपने खिलौने की रचना कर ही डाली। अपने खिलौने को वर्मा जी के १८५७ तक के विभिन्न जीवनानुभवो का परिणाम ही कहा जा सनता है। सन् १९५७ तक ललक हिन्दुस्तान के उन सभी प्रमुख नगरो मे घूम फिर चुका था जो नये युग नयी सम्यता और शिशा से पूणतया अभिभूत हो चुके थे। सन् १९३० १९३७ मे वर्मा जी इनाहाबाट म रह १९३७ १९४२ म कलकत्ता १९४२ १९४८ तक बम्बई और १९४८ १९५३ मे लखनऊ और १९५३ १९५५ म दिल्ली मे रहकर उसके बाद स्थायी रूप स लखनऊ मे आकर रहने लगे। अपनी सूक्ष्म अवलोकन दृष्टि के फलस्वरूप व आज के जीवन के विवृत रूप की हलके फुल्के ढङ्ग से, मर्मस्पर्शी रूप मे प्रस्तुत करने मे अत्यधिक सफल हुए हैं। अपने खिलौने क पात्र जीर घटनाओ की शाकियाँ हम इसमे पूव की वर्मा जी की कतिपय कहानिया म मिलती हैं जिसस ऐसा प्रतीत होता है कि उन्ही का प्रतर रूप उन्हनि प्रस्तुत उपन्यास मे

उपस्थित किया है। आचार्य छ आन का टिकट तिजारत का मया ठपेका 'प्रत्रप्टस, मुगला न सत्तनत बन्ध दी' जसी कहानिया क पात्र और घटनाए 'अपने खिलौने को पन्ते समय अनापास पाद आ जात हैं।

'अपने खिलौने का कथानक अन्यन्त सशुद्ध है, परन्तु उसके पात्र अनेक और घटनाए अनन्त हैं। पात्रा क परस्पर मिलन एवम् सभय से कथानक का सामग्री मिली है। सयोग और आकस्मिक घटनाआ की प्रचुरता न उपन्यास म नाटकीयता भर दी है। प्रत्येक घटना चल-चित्र के दृश्या की भाँति घटित हुई है। समग्र उपन्यास म उम्वता और कुतूहल व्याप्त है। बार-बार ऐसी घटनाए घटित हुई हैं जिनकी हमें आशा नहा रहती। सबसे अधिक मजेदार और कुतूहलरूप स्थल वह है जहाँ अशाक मीना का युवराज विरेश्वर प्रताप की पार्टी म जाना पसन्द न करने के कारण ऐसी युक्ति खोजता रहता है, जिसस उम पार्टी का आनन्द किरकिरा हो जाय। सयाग से मीना क जूते को लवर वृष्णन् नाराज हाकर चला जाता है और सयोग स मनाने जात हुए अशाक क हाथ म मीना का जूता चला जाता है और फिर सयाग से ही उसी समय अशाक क मन म एकाएक एक मौलिक विचार आता है—मान लो यह जूता ही गायब हा जाय। ता माना का वह हर रंग वाला शृंगार ही फीका पढ जायगा। बिना हरे जूत क अमनी पन्ते का शानदार सट, वह फ्रच स्त्रिय सिन्ध की जरतारा वाली हरी माडी, वह हरा मकअप—समी बजार। और यह मीना जा बीरेश्वर प्रताप के इसारे पर नाच रही है, यह माता जो बीरेश्वर प्रताप की पार्टी म वही-वही दिख, इयनिये अमरा का रूप धारण करना चाहती है उमनी पूरा तरह स किरकिरी हो जाय। वृष्णन् क बरामद म अशाक अनिश्चित-मी मना दशा म लडा रह जाता है। बाप म कुछ माचकर वह जूता वहा छाड आता है। किन्तु सयाग की बात कि जयन्त भारती वृष्णन् को लने उमक घर जात हैं बार जूता देव उम उग सात हैं—मीना फिर सिन उठती है। अब अशाक का काम और भी अधिक कठिन हा उठता है। पाठक मा साचता है कि अब ता पार्टी अमनी पूरा रौनक पर रहगा कि तमी सयाग स अशाक की निगाह एका एक काडविबर आइन की बाउल पर पडती है और उवे वह सण चान्त म भर दता है। कथावत म और भी अधिक ताजता आ जाती है। मभा मीना स दूर-दूर भागन लगत है और यह सब देखकर अशाक मन-ही मन प्रगल् हाता है। किन्तु अन्त म भू नुन जान स कथावत म एक नया माप आता है—माना मानसिक रूप से अमनुजित हा उठती है।

दूसरा कुतूहलपूर्ण स्यल वह है जब मीना और अन्नपूर्णा फिल्म प्रड्यूसर और डायरेक्टर के घगुल मे फँस जाती हैं। प्रत्येक क्षण सगता है कि अब क्या होगा। यहाँ भी सयोगो की सृष्टि कर लेखक ने अपना मार्ग सरल बना लिया है। एक ओर अशोक तथा राम प्रकाश युवराज वीरेश्वर प्रताप का हवाला देकर छूट जाते हैं दूसरी ओर दिलवर किशन भी उसी की यात्र करता है और मीना तथा अन्नपूर्णा का पता देता है। सारे बिसरे सूत्र एकत्र हो जाते हैं और फिर कहानी अपने ढर्रे पर चलने लगती है। किन्तु कुछ ही देर बाद वीरेश्वर प्रताप की फ़ेब मीगतर सामने आ जाती है। मीना तथा अशोक अन्नपूर्णा तथा रामप्रकाश एक हो जाते हैं।

उत्सुकता के अतिरिक्त कथानक में अतिशय तनाव है क्योंकि एक दूमरे के प्रतिद्वन्दी पात्र मौजूद हैं। मीना का मन अशोक और युवराज के बीच झूलता रहता है और अन्नपूर्णा का रामप्रकाश और युवराज के बीच। कैटा के बीच में आ जाने से तनाव और भी अधिक बढ़ जाता है। कैटा के चरित्र की सृष्टि लेखक ने दो उद्देश्या से की है—एक तो वीरेश्वर प्रताप के चरित्रोद्घाटन के निमित्त दूसरे मीना और अन्नपूर्णा में मानसिक तनाव उत्पन्न कर कथानक में उत्सुकता की सृष्टि करने के लिए। लेखक अपने उद्देश्य में पूर्णतया सफल हुआ है। वास्तव में उपयास में कथा नाम मात्र की है। वह आज के शिक्षित नवयुवक और युवतियों के बहके बहके ख्याल और आचरण का सग्रह है जिन्हें पात्रों की मानसिक तथा बाह्य क्रिया प्रतिक्रियाओं के माध्यम से कहानी के रूप में ढाल दिया गया है। वस्तुतः अपने खिलौने में हम रेखाचित्र और उपन्यास दोनों का आनन्द आता है। एक ओर इसका चरित्र चित्रण रेखाचित्र के चरित्रों की भाँति है दूसरी ओर इसका कथानक और घटना-क्रम उपन्यास की भाँति। दोनों अत्यन्त प्रभावशाली हैं। अतः बड़ा नाटकीय और अप्रत्याशित है। किन्तु नाटकीय घटनाओं के रहते हुए भी उसमें भावात्मक-संवेदना वाली गति की किसी प्रकार कमी नहीं होने पायी है। उपयास की प्रत्येक घटना और प्रत्येक चरित्र हमारे मन को छूना है क्योंकि उनके द्वारा हमें आज के विश्व खलित जीवन मूल्यों से परिचित होने का अवसर मिला है।

अपने खिलौने में कोई मुख्य कथा नहीं है क्योंकि इसमें किसी एक पात्र को मुख्य नहीं कहा जा सकता। प्रत्येक पात्र का अपना महत्त्व है और इसलिए प्रत्येक से संबंधित इतिवृत्त का भी महत्त्व है। मीना को नायिका माने या अन्नपूर्णा को अशोक को नायक माने या वीरेश्वर प्रताप को यह विवादास्पद हो सकता है। किन्तु अपने खिलौने जैसे उपन्यास में यह प्रश्न उठना ही नहीं

चाहिए क्योंकि इसका प्रत्येक चरित्र एक रखाचित्र है। फिर भा हन यह नहा कह सकत कि इसमें प्रासंगिक कथा और अप्रमुख पात्र हैं हा नहा। बन्धुत लखनऊ वाला सारा इतिवृत्त ही प्रासंगिक है। टढे-भेने रास्त म जिस भाँति इनाहावा व साहित्यकारा का लकर लखक ने स्थानीय चित्रण किया है वैस ही प्रन्धुत उन्यास म लखनऊ क कनाकारों को लकर किया है। वहाँ क रेणिया स्पेशन और काफ़ी-हाउस का स्थानीय चित्रण बढा चन्कीला है। वैस मुधाकर जा क वैठकलाने का चित्रण भी प्रासंगिक है। मुख्यत अमरिजन दम्पति, बटेरवाजी और पतंग का एतिहासिक महत्व दिखाकर लखक ने लखनऊ की सम्भृति पर प्रकाश डाला है कथाकि उसक अनुसार बटेरवाजा आर कनकीवा बाजी उन दो शर्लों में यहाँ का सम्भृति की परिमापा दी जा सकती है। ता यह सब प्रसंग स्थानाय रग त्विान क लिए आय है। किन्तु त्विनवर विशान और उसके भाई भाभा वाला प्रसंग निदान्त प्रासंगिक है जा मूल-कथा स बही भी मयुक्त नहा दाखता। समबत इसक तारा त्विनवर विशान क स्वभाव का उद्घाटन करना लखक का उद्देश्य रहा है। इन दो प्रसंगा का छाड कर काइ भी घटना या इतिवृत्त प्रासंगिक नहा बहा जा सकता। सभी घटनाएँ और प्रसंग मुख्य-कथा क अंग हैं। यद्यपि सभी घटनाओं का पृथक अस्तित्व है। लकिन अन्त में व इस तरह स एक मून म बघ जाती है कि व स्वतंत्र नही दीखता। सारास में अपने विलीन का कथानक मुसगठित और रोचक है। उपन्यास लघु है, फलत विशान और पूव निश्चित योजना का लेकर लखक नहीं चला जैसा अपने अन्य उपन्यासों म उनने किया है।

अपने विलीने के पात्रा क चरित्र भी अत्यन्त मनोरञ्जक साथ ही विचित्र हैं। किन्तु उनका आचरण स्वभाविक और प्रकृति युगानुस्य तथा परिस्थिति क अनुकूल है। पात्रों का संख्या उनन्यास क आकार को दखत हुए बहुत है किन्तु किमी भी पात्र की सृष्टि निरर्थक नहीं हुई है। घटनाओं का भाँति ही पात्रा का आगमन उपन्यास क चित्रपट पर बडे नाटकीय ढङ्ग स हुआ है। सभी पात्र एक साथ हमारे सामने नही आ जात बरन् एक-एक कर, परस्पर सम्बन्ध में बडे नाटकीय ढङ्ग स आत हैं। आरम्भ में भीना तथा उसक परिवार का विस्तार स बणन करके लखक उस कथा का कन् बिन्दु बनाता है। किन्तु इस परिवार के चारों ओर ही कथानकभूमता नहा रह जात। माना क सम्बन्ध में अच लागे का धाना त्विाकर लखक आज की विद्वत ससृति के विभिन्न रूप त्विाता है। यह विद्वत मनोवृत्ति केवल मात्र युवक-युवतियों में हा नहा उनक माँ-बाप में भी पाये जाते है। कहना ता यह चाहिए कि इन्ही के कारण नयी पीढ़ी को

वहकन का अवसर मिलता है। नाम सम्मान तथा स्वार्थ के लिए मीना का माँ जानेश्वरी और पिता जयदेव भारती मीना की अनुचित बातों का भी समर्थन करने हैं। जब युवराज बीरेश्वर प्रताप मीना के नाम से कना भारती की घना देते हैं तो जानेश्वरी देवी यह कहकर उसे प्रात्साहन देनी है कि युवराज न तुम्हारे नाम से घना केर कौन सी बुराई कर दी ? मेरे बच्चे की तरह है। इन सब बातों से मीना के चरित्र-यतन को घनावा मिलता है। इसी प्रकार जानेश्वरी देवी अशाक से कीमती पन्ने का सेट खरीन्वा कर मीना का पन्ना वाती हैं।

मीना की मन स्थिति को क्षण-क्षण में बदलने वाले दो कारण हैं—एक रुपये पैसे की चकाचौंध दूसरे प्रेम की मृगतृष्णा। मीना कभी देखती है कि युवराज से विवाह करने पर उसे मान सम्मान मिलगा तो वह उस ओर मुक् जाती है। किन्तु युवराज को अन्य लडकियाँ की ओर आकर्षित देखकर उम ओर से उदासीन हो अशोक पर प्रेम दृष्टि डालती है। फलतः उसके प्रेम के आलम्बन सदैव चलत रहत हैं। उसके जीवन में ऐसे क्षण बार-बार आत हैं। इसलिए उसके प्रेम में स्थायित्व नहा है। उसकी प्रवृत्ति में चञ्चलता उतनी अधिक नहीं जितनी दूसरा से ऊँची दीखने की अन्म्य लानसा। उसके विचारों और आचरण में बचकानापन है। किन्तु उसे वह आधुनिक सम्यता की विशेषता समझती है। अन्नपूर्णा भी इसी श्रेणी की स्त्री है। मीना और अन्नपूर्णा की मनो वृत्ति में अधिक अंतर नहीं है। जो कुछ अंतर दीखता है वह दानों की परिस्थिति और आयु के अंतर के कारण है। अन्नपूर्णा के पास अपार धनराशि है। फलतः धन नहीं प्रेम की मृगतृष्णा उसके मन को डबाडोल किये रहती है। विधवा युवती की अतृप्त आकाशाएँ अपनी तृप्ति का भाग ढन्ती रहती है। अन्नपूर्णा के प्रेम के आलम्बन भी दो हैं—युवराज और रामप्रकाश। युवराज से निराश होकर अन्नपूर्णा रामप्रकाश का सहारा लता है। किन्तु रामप्रकाश के प्रति अन्नपूर्णा का व्यवहार बसा नहा है जैसा मीना का अशोक के प्रति है। किन्तु ये दानों ही नारी चरित्रहीन नहीं हैं। दोनों के चरित्र मर्यादित है।

अशाक एक सीधा सादा युवक है। मीना से वह इतना अधिक प्यार करता है कि हर समय उसके इशारे पर नाचने को तैयार रहता है। उसके आचरण की विचित्रता एकनिष्ठ प्रेम का प्रतिक्रिया ही है। मीना से वह इतना प्यार करता है कि किसी के प्रति उसका शुकव वह सहन नहा कर पाता। इसी कारण वह युवराज से चिडता है। उसकी यह ईप्सा अत्यंत स्वाभाविक है और युवराज की

विभव का लिखने पर भी अशोक वास्तव में आज के युग का फ्रस्ट्रेटेड युवक है। अशाक की कला साधना प्रावसायिक है। यही नहीं ऊँचे आदर्शों की बात करने वाला अशाक पच्छिम शराबी है। इसके विपरीत रामप्रकाश सरल प्रवृत्ति का युवक है। उसका व्यक्तित्व आइम्बरहीन और आज के युग की कुठारा से मुक्त है। उसके मन में जो कुछ है, उसे प्रकट करने में वह किसी प्रकार का दुःख नहीं महसूस करता। वह स्वार्थी है अवश्य किन्तु अपने स्वार्थ के लिए वह दूसरों को किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुँचाता। युवराज कीरेश्वर प्रताप शाही पीता व अवशेष हैं जिनका रियासत चली गयी, पर जिनका स्वभाव की उच्छेद करना आशय देने की परापकारवृत्ति और शान शौकत जया की-स्यो बना हुआ है।

तिलकर किशन जस्मी का चरित्र बड़ा अनोखा है। प्रायः उसने विद्वपक का काम किया है। उसे अपने विद्वानों के किसी भी पात्र में व्यक्तित्व नाम का काँचा नहीं है। घटनावशा या परिस्थिति-बश वे आचरण करते हैं। घटना बतलाने से भी पात्रों की प्रवृत्ति है। जहाँ परिस्थिति उनका साथ नहीं देती, व क्षण का सहारा लेते हैं। 'अपने विद्वानों पर उठे हुए बर्षा कभी लगती है कि अपने पात्र कल्पित हैं। किन्तु प्रत्येक पात्र की प्रवृत्ति दूसरी युगानुरूप और आचरण इतना परिस्थिति अनुकूल है कि उन्हें हम अयथायुक्त नहीं कह सकते। ऐसे चरित्र हम समाज में रोज देने को मिलते हैं। विशेषतः जात का उच्चमध्यवर्गीय और उच्चवर्गीय समाज इस प्रकार की कमनीरिया से बुरी तरह प्रसन्न है।

जैसा कि हम पहले उचित कर चुके हैं इस उपन्यास का नाम ही हम विद्वानों के लिए बड़ा बुरा लगने वाला है और न विशुद्ध उपन्यास। क्योंकि एक ओर इनमें रक्षा चित्र है और चरित्र चित्रण है, तो दूसरी ओर उपन्यास का ब्यापक और घटना क्रम। यही नहीं प्रस्तुत उपन्यास नाटका का भी विशेषताओं से युक्त है। कहानी का आरम्भ, विकास, चरम-सामा और परिष्कार जिन प्रकार हुआ है उनमें नाटक का तत्त्व मन्निहित है। इसी प्रकार चरित्र भी चरित्र चित्रण हुआ है वह कथानक और पात्रों के आचरण एवं व्यवहार के माध्यम से हुआ है। आरम्भ के अनियमित घटनाओं के घटने, जिनमें वेदक न मोना का रक्षाचित्र साक्षात् चरित्र या कथानक के बारे में अपनी ओर से कुछ नहीं कहता। यह रक्षाचित्र वाला अशक बना राजक है और वह तत्काल के विनाश स्वभाव की अभिव्यक्ति करता है। इस अशक में मोना के व्यक्तित्व का वास्तव चित्रण मात्र हुआ है उसके व्यक्तित्व का आंतरिक पक्ष मात्र उसकी रक्षक

आचरण और दूसरे के साथ के व्यवहार न उभरता है। इसी भाँति अथ चरित्रा के सम्बन्ध में भी हुआ है। पात्रों की भाँति भी पात्रानुसूल और बालबाल की है। लोग प्रचलित उर्दू फारसी तथा अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग यथेष्ट हुआ है।

अपने खिलौने का मूल उद्देश्य हास्य और व्यंग्य की सृष्टि करना है। हास्य की उत्पत्ति दो प्रकार से होती है—एक तो स्वयं हास्यास्पद पात्रों को लेकर दूसरे पात्रों को हास्यास्पद स्थिति में डालकर। पहले प्रकार का हास्य साधारण होता है। उमका सृजन भी लेखक के लिए मरन होता है। किन्तु दूसरे प्रकार के हास्य निर्माण में लेखक को अत्यन्त सतर्क रहना पड़ता है क्योंकि बिना हास्यास्पद चरित्रों के ही उसे हास्य विनोद की सामग्री प्रस्तुत करनी होती है। अपने खिलौने का हास्य इसी प्रकार का है। प्रस्तुत चरित्रों में एक भी पात्र हास्यास्पद नहीं है फिर भी संपूर्ण रचना हास्य से ओत प्रोत है। यह उपयास बर्माजी की विशिष्ट कला निपुणता का परिचायक है। उन्होंने अप्रत्याशित घटनाओं और परिस्थितियों के सहारे हास्य का सृजन किया है। हास्य के साथ ही इसमें व्यंग्य भी प्रच्छन्न है। साधारण दृष्टि से देखने पर जो विशुद्ध हास्य ही प्रतीत होता है बारीकी से देखने पर उसमें एक ऐसा व्यंग्य प्रच्छन्न है जो हमारे मन और आस्था को हिला देता है।

अपने खिलौने के लगभग सभी पात्र उच्चवर्गीय मुशिक्षित और शहरी हैं। इसमें उच्चमध्यवर्गीय समाज के सभी स्तर और सभी प्रकार के लोग का चित्रण हुआ है। बर्माजी की प्रखर प्रतिभा ने आई सी० एस० आफ़ीसर मंत्री सज़्जीतज़ बल्लाज़र शायर फ़िल्मी कलाकार (निर्देशक प्राइयूजर) आधुनिक नारी सभी पर व्यंग्य किया है। किन्तु यह व्यंग्य समान-सुधारक या उपदेशक का नहीं है और न लेखक ने इसमें किसी गम्भीर जीवन-दान की स्थापना करने का प्रयत्न ही किया है। केवल लेखक ने इन पात्रों को उनका यथार्थ रूप में प्रस्तुत कर उनको कमज़ोरियाँ और बुराईयाँ को इस ढङ्ग से प्रदर्शित किया है कि उनका वास्तविक स्थिति हास्यास्पद लगे। वस्तुतः इस ढङ्ग के योग ने जीवन का बड़ा सस्ता समझ रखा है—खिलौने के समान—और उमक के खिलवाड़ करता है। यहाँ इस ढङ्ग की हास्यास्पद स्थिति है। इस लेखक ने हास्य व्यंग्य मिश्रित शैली द्वारा प्रस्तुत कर पात्रों का एक निश्चित प्रकार का अनुभूति कराया है। ज़रूर से लगभग इस समान के खोजने पर पात्रों को हसी भी आती है और विद्वेषा भी होती है।

प्रारम्भ में ही लेखक हास्य-व्यंग्य द्वारा आधुनिक युवाओं पर प्रहार करता है। मोना मास्कुटिक एवं सामाजिक समारोहों की शान्ति के रूप में लिखती है।

इन समारोहों में प्रखर तथा आकर्षक व्यक्तित्व की दिखाने वाली माना का वास्तविक व्यक्तित्व कितना बचकाना और थोड़ा है, यह हमें आरम्भ से ही स्थिति मगता है। एक बात अश म नवन मीना क जिस व्यक्तित्व का रखा चित्र थावता है दो म आकर पाठक को उनके मवया विपरीत रूप क दशन हाव है। पार्टी में एकमात्र वही वह दिखे इतने लिए वह अनाप शनाप बच हा नहा करती, उधार भी चढ़ा लती है। समान में ऊंचा उठने की मृग-तृष्णा उसे इतना अनिद प्रहता देती है कि वह फ़िल्म में काम करने को तैयार हो जाता है। स्वार्थी वह इतनी अधिक है कि कभी वह अशाक पर प्यार जताती है कभी युवराज पर। अन्नपूर्णा भी विवृत आधुनिक जारी है। दोनों को हास्यास्पन्न म्मिति में डालकर लखक ने अनक बार उन पर व्यंग्य किया है। अन्नपूर्णा समा सासामग में जाना इसलिए पसन्द करती है क्योंकि वहाँ उनका अवृत्त मन पुरप बग क सम्पक में आकर, सताप की अनुभव करता है। इसके लिए वह दूसरों के सामने झूठ बाणकर, यह दिखाकर कि इनमें उसे कोई दिलचस्पी नहा है, लाग पर एहसान सानने के लिए वह इनम भाग ले रही है वह अपनी मनोविवृति का छिपान की असफल कोशिश करती है।

प्रशाना भवन का वातावरण बड़ा हास्यास्पन्न और व्यंग्य पूण है। एक ता चित्रकला प्रशानी का उद्घाटन शुद्धमन्त्री से कराना स्वय हास्यजनक है, तिसपर उनका अनगत भाषण उनसे भी अधिक हास्यास्पन्न है। शुद्धमन्त्री भाषण देकर अपनी विद्वता स्थाना चाहत है पर भाषण के एक एक वाक्य म उनका अज्ञान और बुद्धि-हीनता प्रकट होता है। न ता उनक वाक्या म किमी प्रकार का तारलम्य है और न कयना में कोई तप्य। इस भाषण का एक अश उद्धृत करना ही पर्याप्त हागा 'इत कलाया में जो चित्रकला है, वह सटी महत्वपूण कना है। हमारे देश म यह कला बहुत अधिक विकसित हा चुना है आज से हजारों बष पहले 'य लाग चित्रकला क नाम पर जानवरों और चिड़िया की भाग धम्वीर बनाउ ये, हमारे देश म महाद् कला का सृजन हा रहा था। अज्ञता क चित्र—दुनिया में चित्रकला का इतना उन्मृष्ट नमूना कहा नहा मिनया। मैं ता अज्ञता क चित्रा पर मुग्ध हू। कवन उन चित्रा का देनने से लिए अना तक पाँच बान अज्ञता हा आया है।' वस्तुतः प्रशाना भवन का नमस्त वाता वरण हास्य और व्यंग्य का सामग्री प्रस्तुत करता है। लखक ने देशता का जिन नीति चित्रा की प्रशंसा करत स्थिताया है और व चित्र जिन प्रकार रिस्त हैं उनसे पैस एकत्र करन में अन्नपूर्णा और राम प्रकाश जिस नीति व्यस्त रहत

हैं, चित्रों को टारीदने के लिए फल और सजी शरीरने वाली भीड़ के समान लोग एकाग्र हो जाते हैं—इस सारे दृश्य में हास्य और व्यंग्य की झलक है।

सखनऊ के साहित्यिक वातावरण का भी वर्मा जी ने बड़ा हास्योत्पात्क चित्रण किया है। यहाँ के काफी हाऊम के वातावरण, कवि नाटककार रेडिया व्यवस्थापक किसी को वर्मा जी ने नहीं छोड़ा है। उनसे इस चित्रण में अतिशयार्थिक नहीं है वरन् यथार्थ की स्पष्ट झलक है। वस्तुतः यह समुदाय भी अनन्क प्रकार की कमजोरियों से ग्रस्त है। सुधानर जी का ऐतिहासिक चीजा का सग्रह करने के नाम पर पतंग का सग्रह और बटेरवाजी का प्रदर्शन भी कम हास्यास्पद नहीं है। बेवकूफ बनने वाले बटलर दम्पति पर भी हम हसी आँसु बिना नहा रहती।

अपने खिन्नोने का हास्य-व्यंग्य पात्रों में भी है और परिस्थितियों में भी। हास्यप्रद चरित्र न होते हुए भी पात्रों को जिस ढङ्ग से प्रस्तुत किया है वह हास्यप्रद है और जिन परिस्थितियों में चित्रित किया है वह भी हास्यपूर्ण है। जूता लेकर जयदेव भारती के घर वृष्णन् के माथ जो काण्ड हो जाता है वह हास्यजनक साथ ही व्यंग्यपूर्ण है वार्ड बड़ा खूबमूरत जूता है क्या वृष्णन्। और भारती ने जूता वृष्णन् की गोठ में रख दिया।

वृष्णन् में ब्राह्मणत्व के सस्कार पूरी तरह से मौजूद थे। जैसे आई सी एस० और भारत सरकार का एक मंत्री होने के नाते वह समाज में जर्क-बक दिखता था लेकिन घर में वह रोज सुबह दस घण्टा पूजा करता था। कमरे में नंगे पैर और लुगी पहनकर रहता था और पाटे पर बैठ कर तथा केने के पत्ते पर परमवा कर सावा रसम और दही के साथ साता था तथा इन्ली डोसा का नाश्ता करता था। उसे अपनी गोठ में जूता रखा जाना अच्छा नहीं लगा यह स्पष्ट था। एक अजीब तरह की कडुआहट अपने मुँह पर लाकर उसने कहा— जूता जूता है। मजदूरी ये पहना जाता है। अगर न पहना जाता तो और भी अच्छा था। यह कहकर वह उठ पड़ा हुआ और जूता जमीन पर खिन्नक गया।

जानेश्वरी ने मुस्कराते हुए कहा— आपका जूता में कोई रुचि नहीं मानूँ मैं हानी वृष्णन् साहब। वृष्णन् ने उत्तर दिया— मैं ब्राह्मण हूँ मिसेज भारती चमार नहीं हूँ। हमारे कुल में आज तक किसी ने जूता नहीं पहना। यह तो अपवित्र हाता है।

जयन्त भारती को अपनी गन्ती का पता चला। उन्होंने कहा अरे वृष्णन् मैं भूल ही गया था कि तुम ब्राह्मण हो। माफ करना जो मैंने तुम्हें जूता

छुग लिया। वस तुम जूता पहने हुए हो इसलिए तुम्हें आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

जयदेव की इस क्षमा-वाचना से वृष्णन् और मा कठोर हो गया पिघलना तो दूर रहा— 'हाँ जूता मैं पहने हूँ, तबिन मैं वेद में पहने हूँ। और इस नौकर ने पहना लिया था। मैंने अपने हाथ से इसे नहीं छुआ। तुमने तो जूता मरी गाँव में रग दिया मुझे स्नान करना पड़ेगा।

इसके बाद वृष्णन् का जयन्त व घर में क्रोध का मार भाग जाना और अशाक्त का उनका पादा करना सभा हास्यपूर्ण है। अतएव वस जी का हास्य व्यंग्य परिस्थिति एवं घटनाओं में है। यह तब तक अद्भुत अला-कारण का परिचायक है कि बिना हास्यात्मक चरित्र के, कवन यथाशक्ति घटनाओं और परिस्थितियों को समझना से उसके अद्भुत हास्य विना-युक्त व्यंग्य की सृष्टि कर ले है। इस पर मा यह कि कवन प्रारम्भ व अतिथय घृष्ठा को छाड़कर सारा हास्य-व्यंग्य पादा व परस्पर बातलाप और क्रिया-शलापा द्वारा अभिव्यजित हुआ है। अतिथय विशय जहमी और प्रीनम कमल अने, खिलाने क समय अधिक हास्यापादक चरित्र हैं। इनके उभयस्थित होते हा बुद्ध एमी स्थिति उत्पन्न हो जाती है कुछ ऐसा बात हा उठती है कि पाठक के मन में बरबस हास्य-वृत्ति का उत्पन्न होने लगता है। इनके चलने फिरने बोलने-बालने यहाँ तक कि इनका प्रत्येक हरकत तथा वाक्य में पाठक का हास्य की सामग्री मिल जाती है। गम्भीर परिस्थिति में भी अतिथय विशय जहमी व शेर और लतीने काठावरण का हन्ना और स्थिति का मनोरजक रना दत है। रामप्रकाश भी हास्य-विनोद उत्पन्न करने वाला पात्र है। किन्तु जैना कि पहलू भी संकेत किया जा चुका है अशाक्त वीरशंकर प्रताप जयदेव भारतीय घृष्मत्री, वृष्णन्, मुषाकर, स्वच्छन् जो मोना जानश्वरी अन्नपूर्णा और बैरा आदि हास्य के साथ लेखक व व्यंग्य के भी सन्ध हैं। मुसलूत विभिन्न अशाक्त का मोना वा जूता लेकर भागना उस पर अतिथय आयन छिड़कना, शराव पीकर रामप्रकाश के साथ प्लेट-पार्क पर मारगट करना आदि जयन वक्तवने और हास्यजनक आचरण हैं। मोना अन्नपूर्णा और बैरा जैसी मुसलूत स्थिती का अमन्य ग्रामाण स्थिती की भाँति लड़ना सगन्ना तथा अन्य विभिन्न आचरण हास्य-व्यंग्य की सृष्टि करत है।

इस उपाय की एक विशेषता यह भी है कि हास्य-व्यंग्य में ओर प्रोव होने पर भी, इसके बिना पात्र व प्रति पाठक की संवेदना विच्छिन्न नहीं होने पायी है। सारा व हास्य-व्यंग्य में बरूता नहीं है। अतएव, इसीलिए यदि

इसका कोई चरित्र हमारी सहाय्युक्ति का पात्र नहीं है तो वह घृणा का पात्र भी नहीं है। इसका कारण यह है कि सगर्व के अनुगार चरित्रों की कमजोरियाँ सस्तरजन्य एवं परिस्थितिजन्य हैं। नये युग के वातावरण ने उन्हें हास्यास्पद स्थिति में लाकर खड़ा किया है। यही कारण है कि अपने तिलोत्तमों के सभी पात्र कल्पित होने हुए भी यथार्थ हैं। समाज में ऐसे चरित्रों की कमी नहीं है।

मन मिलाकर हिन्दी में आने गिनीन योगा हास्य व्यंग्यपूर्ण उन्मत्त मित्रता दुर्लभ है। इसका एक भी पृष्ठ ऐसा नहीं है जो रोचकता से परिपूर्ण न हो। निश्चय ही वर्मा जी के उपन्यासों में सर्वश्रेष्ठ सशक्त और अभिव्यञ्जनापूर्ण शक्ती इसी की है। अपनी ओर से इसमें उल्लेख ने नाममात्र ही कहा है। किन्तु नहीं भी जो कुछ कहा है वह अत्यन्त रोचक और हास्य व्यंग्यपूर्ण है। जूना को लेकर वर्मा जी ने कैसा हास्य-व्यंग्य उत्पन्न किया है यह इस उद्घरण से स्पष्ट है। विभिन्न समाजों और विभिन्न सभ्यताओं में जूते के विभिन्न स्थान हैं और अपने इस श्रृंगारिणी मुनियों के पवित्र देश में जूते का बड़ा हीन समझते हैं। आप निहायत फटा हुआ जूता पहनकर शानदार से शानदार पार्टी में ही आइये और कोई आपकी तरफ उगली तक नहीं उठायेगा और सब तो यह कि मजदूर लोग नया जूता और साबूत जूता पहन कर महफिलों में और बारातों में आने ही नहीं क्योंकि वहाँ जूता चोरी हो जाने का खतरा है। हमारे समाज में जूते का महत्त्व सिर्फ मारपीट में है। और मारपीट में जितना घिसा हुआ जितना फटा हुआ जूता हो उतना ही अच्छा माना जाता है। जूतेवाजी में लोगों का उद्देश्य चोट पहुँचाना उतना नहीं होता जितना इज्जत उतारना होता है। जैसे कुछ जालिम किस्म के राजा रईस जूतों से इज्जत उतारने के साध-साध चोट पहुँचाने का काम भी करते थे। लेकिन इन कामों के लिए एक खास तीर के मजबूत जूत बनवाते थे और उन जूतों को इस तरह तेल पिलाते थे कि बस पूछिए मत मानी आप उसका अदाज नहीं लगा सकते। बहरहाल इतना कह देना काफी होगा कि हमारी सभ्यता और परम्परा में जूते का बहुत निम्न स्थान माना जाता है। लेकिन अंग्रेजी सभ्यता में जूतों का स्थान बहुत ऊँचा है। दावत तवाजा समा-मानाङ्गी नाच माना सभी जगह आपको जूता पहन कर जाना पड़ता है। रोने मुँह नोग-बाग पैने देन्ता पर पून चगने हैं ठीक उसी तरह जूते पर पानिश बरतें हैं। हम बदर चमकाने हैं कि उयम मुख दिख जाय क्योंकि नोगों की नाद सबने पहन आपका जूता पर ही पड़ती है। जूता देखकर आप किसी भी व्यक्ति का समाज में स्थान बता सकते हैं। जूते के माध्यम से

विभिन्न रसों और कानों की सम्मता-सन्धिति का अकन वर्मा जी जैसे कथाकार की ही क्षमता का बाव है।

वमा जी के स्वभाव का पुनर्जन्म विनीत प्रकृति उनका अभिव्यक्ति में जगद-जगद प्रकृत हुई है। एक उदाहरण प्रस्तुत है 'इतना' यह दम के बाव मोना के मन का बाव और रह जाती है। वैच में न जान कितना लडकिया को निभलक टकता कहकर उन्हें प्रमत्त कर चुका हूँ कहीलिए माना का अद्वितीय स्रजता कह कर मैं उन लडकिया का नाराज करने का दुनाहस तो न बरगा लकिन—आ हीं आन मेरा मन्लक तो समन हा गय हने। दूध का-सा मफेरा आर उत पर चहुरा गान गान लम्बा-लम्बा माना गोल और लम्ब के बीच में, जो गान चहुरा पमल करने बाना को गोन दिखे और लम्बा चेहुरा पमल करने बानों का लम्बा लिके। आरों बही-बही कुछ खार् हुई-सी आर कुछ माद हूँ—सी या ता कहा ठहरे ही नहा और आर कहा ठहर जाये तो त्रिम पर ठहरे, उसका काम समम। चेहुरे पर म्वाभ्य की एक लालिमा जो चेहुरे पर गुनावापन की क्षलक पैरा कर देता है। अकनर लोगो को शक हो जाता है कि उन चेहुरे पर लिपाई हुई है। जी, पेष्ट के लिए हिन्दी में लिपाई शक का प्रमाण ही सज्जा है क्योंकि लर लगाने की प्रथा हमारे यहाँ प्राचीन काल में भी थी लकिन लागा का ख्याल गनत है। चेहुरे पर लिपाई-गुताई पग-लिसा लडकियाँ नही करता—ऐसा मुझे एक पढी लिसी लडकी ने ही बत साया है, वैच कुछ अन्य लागा का अनुभव इससे विपरीत भी हो सकता है।

अभिप्राय यह कि वर्मा जी की वणनामक शैली, चरित्राकृत शली और कथन शली तीना में हास्य-व्यंग्य का पुट है। गम्भीर स्थिति तक के अकन में उनका हास्य-वृत्ति छिर नहा पायी है। यही कारण है कि अपने खिलौने का बाई स्पल सरगता और रोचकता में हीन नहीं है। जीवन की बटुता को इनने हक पुत्रक ढग में उडा देता या दूसरे शक में परीण में उसका अनुभव करा देने में मह उरन्याम पूण सफल हुआ है। हिन्दी में एमी कृतिया की बहुत आवरणता है जो आज के अस्त और नीरम जीवन को कम से कम कुछ क्षणों के लिए ता परमता और उत्साह प्रदान कर सके।

साम्प्र और माना यहाँ विचार प्रधान उरन्यास है, वहाँ यह एक तीस व्यंग्य में भी व्यंग्य प्रोड है। इस व्यंग्य में हास्य का पुट कम है इस कारण इसका लम्ब बुद्धि तत्व की घोषिलता में दब सा गया है। इसलिए इन उरन्यास में इन वमा जी का लकिन बाव हा मितता है हास्य-व्यंग्यकार का नहा।

विशुद्ध कथाकार के रूप में

विभी समस्या का प्रस्तुतीकरण या हास्य व्यंग्य का सृजन मन ही बर्मा जी की कृतियाँ में बहुलता से मिलता है। परन्तु उनका मूल उद्देश्य कहानी कथना ही रहा है। यह आवश्यक है कि बौद्धिकता की प्रधानता तथा हास्य व्यंग्य की अति शयता ने उनकी बुद्ध कृतियाँ को विशयस्थगी में डालकर खरा कर दिया है। यह इसलिए कि इनमें उल्लिखित तत्व तथा कहाना वाता तत्र सतुलित नहीं हो पाये हैं। कहाँ बेलक की तरफ़ की प्रकृति ने प्रमुखता पा ली है तो कहाँ उनकी हास्य व्यंग्य की प्रकृति ने। पर बर्मा जी के वह हा उपन्यास सत्रन अधिक लोकप्रिय हुए हैं जिनमें कहानी वाता अश अधिक है। इन उपन्यासों में पाठक उसके विषय पात्र और स्थितियाँ से अपना तात्पर्य स्थापित कर लेता है। उपन्यास कहाना पत्र समय पाठक अपनी बुद्धि अवश्य सजग रखता है पर यह कभी नहीं चाहता कि वह बुद्धि के तत्र बितरक में उतर जाय। आखिरी दाव भूने विमर चित्र तथा रेखा में हमें बर्मा जी का विशुद्ध कथाकार वाता रूप मिलता है।

एक सफ़र उपन्यास में जो गुण होने चाहिए वे सभी हम आखिरी दाव में मिलते हैं। 'टिप्पे मेरे रास्ते' जैसे बृहत् उपन्यास के वाता आखिरी दाव एक माघाटण आकार का उपन्यास लिखता है। किन्तु यह उपन्यास बर्मा जी की श्रेष्ठियों में से एक है। वस्तु विन्यास की मुचासता इतिवृत्त की राचकता तथा बाह्य एवं आन्तरिक द्वन्द्व की तीव्रता—सभी कुछ इनमें मौजूद है। उपन्यास का कथा विकास में नाटकीयता अवश्य है किन्तु वह तभी तत्र प्रतीत हातो है, जब तक हम फिल्म जगत् की दुनिया से परिचित नहीं होते। जैसा कि हम अयत्र उल्लेख कर चुके हैं १९४२-१९४८ के बीच की अवधि में बर्मा जी दम्बड़ में रहते और फिल्म-दुनिया से उनका गहरा सम्बन्ध रहा। वहाँ उन्होंने एक नया समाज देखा एक विशिष्ट प्रकृति के लोग दये। आखिरी दाव उनके उन्हा विचित्र अनुभवों का सजजन है। स्तरीय आखिरी दाव की कहानी में सच्चाई है किन्तु दुनिया का यथाय है।

अपन प्रत्येक उपवास मे वर्मा जी ने नारा का एक विशेष रूप उद्घाटित किया है। 'चित्रनेखा की चित्रनेखा नतकी हात हुए भी सम्मान योग्य नारी है। तीन वर्ष' में प्रभा ममाज की सम्मानित नारी होत हुए भी वेश्या सराज में बहुत गीची है। समाज का उपेक्षित नारियो को वर्मा जी ने बहुत ऊंचा स्थान दिया है। 'आखिरी दाँव की चमेली' जो घर के आभूषण और रुपये चुगड़र गाँव के छना के साथ भाग जाती है, समाज की दृष्टि में भने ही पतित हा पर सख्त ने उसे जिस परिस्थितिबश ऐसा करी को विवश दिखाया है, यदि उस पर हम स्थान दे, तो उस हम पतित नारी की सत्ता नहा दे सकत। 'आखिरी दाँव की चमेली का जीवन कया का पढकर एकाएक हम प्रेमचंद के मवामदन (१९१७) की नाभिना सुमन की याद आ जाती है। सुमन भी परिस्थितिया से विवश होकर वेश्या का जीवन बिनाती है। 'आखिरी दाँव के लेपन काल में तिये यशपाल के मनुष्य के रूप (१९४६) का नाभिना सोमा जी कइ अर्थात् चमेली के चरित्र से साम्य रखती है। समुराल वाता पारा मतायो नामा अत में फिल्म-जगन की कारण गती है। किन्तु उसमे एक प्रवार की कटुता आ जाती है, जो हम 'आखिरी दाँव' की चमेली में नहा मिलती। किन परिस्थितिया में पढकर चमेली का चरित्र पतन जोर चरित्र विकास होता है इसका विवरण यथास्थान किया गया है।

एक ओर 'आखिरी दाँव' जहाँ घटना प्रधान उपवास कहा जा सकता है वहाँ दूसरी ओर हम हम चरित्र प्रधान उपवास भी कह सकन हैं। इनमें घटनाओं के माध्यम से पात्रा की क्रिया प्रतिक्रिया द्वारा चरित्रोद्घाटन हुआ है। दूसरे शब्दों में पात्रो का चरित्रोद्घाटन घटनाओं के माध्यम से हुआ है, तो घटनाओं का निर्माण सयागा के द्वारा। इस प्रकार उपवास के ये तीना तत्व एक दूसरे से हम प्रवार गुंथे हुए हैं कि इनमें से किसी को भी पुख करके नहा देत सकन। प्रारम्भ में ही एक के बाद एक घटना घटित हाता चला जाता है और उसमें कुछ ऐसा सयाग होता है कि पात्रा का विशिष्ट परिस्थिति में पड कर कुछ ऐसा करने का विवश हाता पडता है, जिसके कारण उनका जीवन प्रभ ही बदल जाता है। घटनाबश एक ममोगवरा अनायाम ही पात्र एक दूसरे के सम्पर्क में आ जाते हैं। रामश्वर के जीवन में एक गमी घटना हाता है जिसके फलस्वरूप उसे गाँव छोडकर बम्बई भागना पडता है। अपने स्वभाव के कारण या विधि के विधान से रामश्वर उस दिन जूआ खेने चला जाता है और फिर दुर्घटना के तिर पर ऐसा सवार होता है कि वह धीरे धीरे सब कुछ गार बैटना है, जमीन-आपदा सत्री कुछ। और फिर मुक्त घघनशील होकर वह

अपने गाँव से ताता सोड बम्बई की ओर दौड़ पड़ता है। दूगरी और चमेली के जीवन में भी कुछ ऐसा घटता है कि उगे भी बम्बई की ओर दौड़ना पड़ता है। सयोग से चमेली जिसके साथ भागती है उससे उसरी नहीं पटती और वह उसमें छुटकारा पाने के लिए पुलिस का सहारा लेना चाहती है। तन्तु पुलिस भी वहाँ ऐसी स्त्री को आसानी से छाड़ने वाली है। सयोग से रामेश्वर घन्ना-स्यल पर पड़च जाता है और वह चमेली को पुलिस के चणुल से बचा गया है। यहाँ आकर एताएक पाठा चीक उठना है और उसकी समझ में आ जाता है कि यह सब तेनक की पूर्व निश्चित याजना है जिसके निमित्त वह इन दोनों का एक स्थल पर लाकर मिला देता है और उनका जीवन-भूत्रा को एक में मूथ देता है। यहीं वधा के दो त्रिखरे हुए सूत्र एक स्थल पर आकर मिल जाते हैं और फिर वे कभी अलग नहीं होते। इन दोनों पात्रों को एक जगह बनाये रखने के लिए ललक कुछ ऐसी स्थितियों का निर्माण करता है जिससे ये पात्र अलग नहीं हो पाते। एक के-बाद एक कुछ ऐसे सयोग आ पड़ते हैं कि चमेली रामेश्वर का छोडकर नहीं जाने पाती और फिर जीवन पर्यन्त उसी की बनी रहती है। जिस रात को चमेली और रामेश्वर की गैठ होती है उस रात को सयोग से मूसला धार पानी गिरता है और रामेश्वर भीग जाता है। जिस व्यक्ति ने उसके लिए इतनी ममता दिखायी है उसे वह ऐसी हालत में छोडकर कैसे जा सकती है। और पहले अनिच्छा से बाद में इच्छा से वे दोनों एक-दूसरे के निकट आ जाते हैं। रामेश्वर के जीवन में अनायास ही एक बहुत बड़ा परिवर्तन हा गया। उसने यह कल्पना तक न की थी कि इस उम्र में उसे गृहस्थी जमानी पड़ेगी। उसके जीवन में रम आ गया प्राण आ गया। वह अब किसी को अपना कह सकता था, उसे कोई अपना मानने वाला भी दुनिया में था। और चमेली को ऐसा लगा कि उसे एक नयी दुनिया मिली जो वास्तव में स्वर्ग है। जीवन में प्रथम बार उसे वास्तविक प्रेम ममता मिली। उसकी मुरपायी हुई आत्मा लिल उठी उसकी पथराई हुई आँखों में चमक आ गयी। उसके पास गहने नहीं थे उसके पास कपडे नहीं थे पर उसे इनका जभाव मातूम ही नहीं होता था उसके पास इन सभस बत्कर एक निधि थी—प्रेम।

इस प्रकार सयोग और परिस्थितियों के सहारे चरित्र विकास त्रिाकर चक वधा जग्रमर करता है। यथा म गैमे ही गतिरोध जाने को होना है कि कलत फिर कुछ ऐसा सयोग और परिस्थिति पैदा कर देता है कि कथा फिर गुने वग स आगे बन्न लगती है। तेनक का चमेली को फिल्म जगत में खीचा था इसलिए वह फिल्म कम्पनी में काम करने वाली राधा के सम्पर्क में उन राता

है। राधा बीमार पड़ जाती है और चमेली उसकी सेवा शुरुआत करके उसकी घनिष्ठ मित्र बन जाती है। यहाँ कथानक में स्थित गतिराव आ जाता है कि नवक फिर एसी स्थितिमा का निमाण कर देता है जिसस कथा को अग्रसर होने का अवसर मिल जाता है। किन्तु कहा-कहा आगामी घटनाओं की पूर्व सूचना देकर लखन ने बच्चा नहा दिया, क्योंकि उमम नुनूहन मयाप्त हो गया है। राधा अपने यहाँ नगरात्रिक उत्सव का आयोजन क्या करता है, उसकी ओर लखन यह कहकर पहन से ही सूचना दे देता है कि 'राधा का बाजार अब प्रायः उजड़ चुका था—राधा यह अच्छी तरह समझ गयी थी अतः उम दूसरे स्थान में अपना बाजार जमाना था। राधा के पुराने ग्राहक ठा भौड़ू म पर उन ग्राहकों को नये माल की आवश्यकता थी। नये माल का एस्तित करने के लिए राधा न जगमाहन की सहायता से यह जान बुना था। इस उल्लव, इस राग म के भीतर जो भयानक कुरूपता छिपा हुई थी उसका न चमेली को पता था और न उम उत्सव में भाग लेने वाल किसी अन्य स्त्री-पुरुष को। इस प्रकार पाठक ऐसे क्षण की प्रतीक्षा करने लगता है जिसमें चमेली इस चगुल में पड़ेगी। किन्तु पहले ही दौब पर से चमेली साफ निकल जाती है। अतः लखन दूसरा परिस्थिति का निर्माण कर फिर से उसे फिल्म-जगत में लाने का प्रयास करता है। इस बार वह एक ओर चमेनी के मनाविज्ञान का कुरेद कर उसमें मानसिक हानि उत्पन्न करता है और दूसरी ओर नवीन स्थितियों का निमाण करता है। राधा की ऐश्वर्य भरी जिल्गी देख उमम भी वसा जीवन बिताने की खानमा आप्त हो उठती है। 'उम दिन शाम के समय जब चमेली घर पहुँची, वह बहुत थकी हुई थी। उसने झूठे पर खाना चढ़ा दिया और फिर वह बिस्तर पर लट पड़ी। उसने अपनी उस छागी-सी कोठरी को देखा, जो शायद कई साल से नहा पुती थी, और जिसका छत तथा दीवारें हुए से काली हो रही थी। उमने अपने बिस्तर का देखा उसने रामेश्वर के हूट हूण टोन के टुक को देखा, और उसके प्राणाम एक अजीब तरह की पाडा भर गयी। वह सोचने लगी, क्या यहाँ जिल्गी है? दुनियाँ में इतनी चीजें हैं लेकिन वे सब मर निम बान की? ऊँचे-ऊँचे आलीशान मकान, अच्छे-अच्छे रेशमी और जरी के कपडे, बरामती माने, हीरे माली के गहन। लेकिन यह सब चीजें मर लिए नहा हैं। आधिर कौन सा पाप किया है मैंने? जो पाप करता है वह फलता-फलता है उमके पास महल है उमके पास गुण है। शिवकुमार इतनी दोनत हुए हाप मुग रहा है। राधा भोज से रानी है अन्न खाती है अच्छा प्यनती है। यह अन्न चमेली तक ही सीमित नहा रहता। अपनी यह खानसा

यह रामेश्वर पर प्रकट कर उसमें भी सहायता बनने की अम्य कामना जाग्रत कर देती है। 'ऊपर से यह दिग्गता था जैसे रामेश्वर ने उम रात चमेली के महान बदलने के प्रस्ताव को टाल दिया। लेकिन उम तिन से रामेश्वर व अन्तर भी एक प्रकार की हलचल पैदा हो गई। चमेली ने ठीक ही कहा था कि यह जिन्गी भी कोई जिन्दगी है। रामेश्वर अपने जीवन पर सोचता था। और उम प्राय आता था। अभी तक उसे सताप था क्योंकि वह अरला था। उसे केवल अपने मुग का ख्याल था और पुरुष हान के नात कठोर जीवन में उसे आनन्द मिलता था। तिन तब तो स्थिति बल गयी थी वह अकेला न था उस पर जनसम्बन्ध और उमरा आश्रित एक गौर भी तोड़ था और वह कोई पून था गा कोमन था। उनका मुन्नी बनाना हर तरह से उमकी तकलीफ को दूर करना रामेश्वर का कतथ्य था। और इस जतन्ध के पन्स्वरूप वह जूआ व दूसरे रूप सट्टेबाजी और रेम कोस में भी हाथ डालने लगता है। चमेली को फिल्म जगत में जाने के उद्देश्य से उसके रामेश्वर को हराता चला जाता है और स्थिति ऐसी आ पती है कि या तो चमेली फिल्म कम्पनी में काम करे या फिर रामेश्वर को हमशा के लिए छो दे। रामा के चगुल से चमेली निजल भागी था किन्तु विधाता के इस दाव से वह नहीं बच पातो और रामेश्वर को बचाने के लिए उसे फिल्म कम्पनी में नौकरी करनी ही पडती है। तैलक अपने उद्देश्य में सफन हाता है और फिर वह बडे मनायोग से फिल्म-दुनिया के चित्र खीचता है। यहाँ हमारा परिचय नये नये पात्रो से होता है जो फिल्म-जगत के टिपिकल व्यक्ति हैं। इन लोगो की गुन्बाजी का लेखक ने अच्छा चित्र खाचा है। चमेली धीरे धीरे इस जीवन की अम्यस्त हो जाती है—बिना किसी अन्तन्ध के यद्यपि कभी-कभी उसे मानसिक क्लेश अवश्य होता है। यहाँ आकर चमेली और रामेश्वर के रास्ते अलग-अलग हो जात हैं। रामेश्वर भी स्त्री की कमाई पर जीना पसन् नहीं करता। पन्त अपना अलग रोजगार आरम्भ कर देता है। जब रामेश्वर चमेली को गुफाए दिगाने ले जा रहा था तब सयोगवश उसकी भेंट बम्बई के भया लोगो से हो गयी थी। लेखक ने यह भेंट निरर्थक नहीं टियायी थी क्योंकि बाद में राजगार के लिए रामेश्वर को यही पशा अपनाना पडता है। रामेश्वर परिस्थितियो से विवश होकर तबेन का काम नहीं करता वरन उसकी अन्त प्रेरणा उस यह काम करने को प्रवृत्त करती है। राधा और चमेली के झगडे बाने काड से उसमें पैसा कमाने की अभिलाषा और भी तीखे रूप में प्रज्वलित हो उठती है। रामेश्वर के अन्दर जो तूफान अभी तक धिर रहा था वह फूट पडा में तुसे अभी तक सहारा नहा दे सका

सहारा दिया है ठीके मुझे । तूने मुझे जल जाने से बचाया, मुझे बचाने के लिए तूने अपना शरीर बचना पड़ा तूने मुझे धर बिठाना कर खिलाया, तूने लगा तार मढ़नत करनी पड़ी । और मैं—एक पशु की भाँति अभी तक रहा—धीरे-धीरे का कमाई पर जिन्दा । मुझमें और जगमाहन में कोई भेद नहीं रह गया था । लेकिन अब यह न हागा रामेश्वर के हाथ में अभी इतना पीछे है कि वह काम कर सक । आज मैंने देखा लिया कि दुनिया में पैसा ही ताकत है—सबसे बड़ी ताकत है । पस के लिए इसान को शरीर तक बेचना पड़ता है—कम-कम मरा चमत्ता को तो अपना शरीर बचना पड़ा है । ठीके अभी अपना आमा नहा बचो यह कमी रह गयी नहा तो तू यह सब मुझ से न कहती—और शरीर तो हरेक का बेचना पड़ता है—किसी-न किसी रूप में । मुझे भी बिना आमा के कोई आत्मी नहा बन सकता—तू कमी भी अभी नहीं बन सकती, क्योंकि तू अभी आमा बचाए हुए है । हा-हा-हा जिन्दगी का कितना बड़ा समय इस रामेश्वर के हाथ लग गया । इस मानसिक सघन के फलस्वरूप ही रामेश्वर पाप की कमाई करने को प्रेरित होता है ।

भाग्य और नियति का क्या चीज नहीं भी महत्वपूर्ण माना है । 'चमली' ने देखा लिया कि नियति के क्रम का क्या नहा जा सकता । जो हाना है वह होकर रहगा । आत्मी का बनाने विगाहन का ना कोई दूसरा ही है । चमली और रामेश्वर के पतन का कारण उनका भाग्य ही बनता है । विधाता के विधान के कारण उनके लिए ऐसा परिस्थितियाँ बनती चली जाती हैं कि उनसे बच निकलने का कोई माग अवशेष नहा रह जाता ।

इस मारे विवेचन से यह स्पष्ट है कि 'आविरी' दाव के कथा-संगठन के सभाग और आत्मिक घटनाओं का विशेष हाथ है । 'विद्यन्या' में भी इन दोनों का सम्बन्ध था । तीनों रूप में वह कुछ कम मात्रा में रहा । किन्तु आविरी शब्द में फिर उसके का इन दोनों का सहारा बना पड़ गया । बन्धु आविरी शब्द एक उद्देश्य प्रधान उपन्यास है, और इस कारण उनका सारा बन्धु विधाता सभ्य की अपना पूर्व निश्चित याचना का परिणाम है । अपने पूर्व निश्चय के अनुसार ही वह एक-के बाद एक सभाग तथा घटनाओं का समाजना करता जाता है और उनमें पात्रों का डालकर उपन्यास का कथा-भाग्य बना जाता है । ये एक-के-बाद-एक के सभाग तथा घटनाएँ अन्वयानात्मिक एवं वृत्तिसमय के रूप में पर उनमें उपलब्ध स्थितियों को हम नाकाम नहा कर सकते । एनी परिस्थितियाँ प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में आती हैं जब उन इच्छा या अनिच्छा से विवश होकर आचरण करता पड़ता है । क्या चीज नहीं किन्तु दुनिया

में रचकर इस प्रकार की गाथूरियां को देखा होगा है और उन्हीं अनुभवों को प्रस्तुत उपन्यास में उतारा है। पिन्नी-जीवन के भ्रष्टाचारों की कहानी को उन्होंने अपनी रचना में जिस सूरी से उतारा है वह कहने की आवश्यकता नहीं है।

भूने बिसरे चित्र में हम वर्मा जी का स्थान प्रौढ़ कथाकार के रूप में माना है। कथा की रोचकता भूने बिसरे चित्र का प्राण है। पर बुनूहल तथा उच्चता से अधिक उसमें पाठकों का भावनात्मक संबंध उत्पन्न करने वाला तत्व है। उसी कहानी में पाठक ऐसा खो जाता है उसकी घटनाओं और स्थिति में वह इतना घुल मिल जाता है कि उसे सब कुछ परिचित तथा अपने और अपने निकटतम पर गुजरता हुआ प्रतीत होना है। संक्षेप के चित्रण में गहनता है। इसलिए उससे प्राप्त अनुभूति में गहराई उत्पन्न हो गयी है। कहा वही तक और बाद विवाद के छिटके बिन्दु हम देखने को मिल जाते हैं, किन्तु उससे उपन्यास के धारा प्रवाह में किसी प्रकार का बाधा उत्पन्न हुआ हो ऐसा हमारे देखने में नहीं आता। उनके द्वारा चरित्र और परिस्थिति का अधिक से अधिक स्पष्ट और सजीव बनाने का प्रयास ही हुआ है। वैसे वर्मा जी के तर्कों में एक अकारण सत्य निहित रहता है। जीवनगत सत्य के किसी न किसी पहलू को वे प्रकट करते हैं। किन्तु 'चित्रलेखा' की भाँति भूने बिसरे चित्र का कथा विकास बाद विवाद और तक के माध्यम से नहीं हुआ है। न ही टेढ़े मेढ़े रास्ते के पात्रों की भाँति इनके पात्र किंगी न कभी मत और सिद्धान्त को मानने वाले हैं।

चार पीढ़ियों के माध्यम से भूने बिसरे चित्र में वर्मा जी ने मानव मूल्यों के संक्रमण की रूप रेखा प्रस्तुत की है। युगांतर के फलस्वरूप नतिक मापदण्ड और व्यक्ति के पारस्परिक सम्बंधों में जो भी अन्तर आया उसका सम्पूर्ण अन्तर्गत उपन्यास में हुआ है। उठने हुए मध्य वर्ग और सरकारी नौकरी ने मानव मूल्यों के विघटन की सामग्री प्रस्तुत कर ली थी। तत्कालीन परिस्थितियों में व्यक्ति बना ही विवश और दयनीय हो गया था। गंगाप्रसाद का कर्ण अंत हमें एका बोध कराता है।

'भूने बिसरे चित्र' अपने में महाकाव्य का परिवेश लिए हुए है। उसमें महाकाव्य की विशालता है। वह अपने में एक पूरा युग समेटे हुए है। इसमें हम एक समूचे युग की सांस्कृतिक सामाजिक और राजनितिक छाँवी देखने का मिलती है। पहले खण्ड में हम दूटती हुई सामंतीय परम्परा के चित्र मिलते हैं। दूसरे तीसरे और चौथे खण्ड में मध्य वर्ग के बनने और पतन की कहानी

है तथा पाचवें में मध्य बग के सामाजिक मानव-मूल्या व सभ्रमण का प्रक्रिया देखने को मिलती है। मासूतिक विघटन की पृष्ठ-भूमि में तबक बनी सतकता से सामाजिक विघटन का उल्लेख करता है कि किस प्रकार समाज और परिवार में बहु घटित हुआ। अधिकार और शक्ति के स्थान बर्न जात हैं और इनमें विभिन्न सामाजिक स्तर के व्यक्तिमा तथा परिवार में एक क्रान्ति और छापटाहट पैदा हो जाती है। इस सब का अवन बमा जो न बड़ी कुशलता से किया है। सामंतीय परम्परा के ह्रास के साथ एक ओर मध्य बग पतना और दूसरी ओर पूंजीपति का अस्तित्व सामने आया। गंगाप्रसाद के माध्यम से मध्य-बग के बुद्धि जीवी तथा लक्ष्मीचन्द के माध्यम से पूंजीपति के स्वरूप विकास का चित्रण हुआ है। लक्ष्मीचन्द अपनी जमीन-जायदाद बेचकर मिले खोल लेता है। उस प्रकार वह एक बहुत बड़ा पूंजीपति बन बैठा है। पूंजीपति बनकर उसकी मान्यताएं बन जाया है, उसका स्वभाव बदल जाता है। पूंजीपति बनकर वह माँ से भी लपरी व्यवहार रखता है। पैसा के लिए उस गाली तक देता है। बड़े-स-बड़ा पूंजीपति बनने की उसकी अदम्य इच्छा उसे अनतिक्रमण अपनाते की प्रेरणा देती है। अपने इस अनतिक्रमण कार्य में वह सभी को मिलाये रखता है—विभिन्न रूप में सोणा को रिश्वत देकर। पान प्रकारा ठीक ही कहता है कि यह पूंजीपति जवरन्त मुनाफा उठाता है। उस मुनाफे का एक हिस्सा वह सरकार का देता है, ताकि सरकार में उसे हर भाँति का सुविधाएं मिलें। इस मुनाफे का छोटा-सा हिस्सा वह देता है कौपेस का, ताकि स्वदशी आन्दोलन पार पकड़े और उनका मान जाया व साथ निव। इन मुनाफे का छोटा-सा हिस्सा देता है गंगाप्रसाद ज्वाइट मजिस्ट्रेट का ताकि लक्ष्मीचन्द जा सुट-खमाट, बेईमानी करता है उनका वारे में मरकारी कमचारी आँवें बन्द कर लें। तथा इस मुण की सभ से बड़ी कमचारी है।

तथा के साम्प्रदायिक झगडे और स्वदशी आन्दोलन की नम लखन ने बड़ी सूक्ष्मता से पहचानी है। हिन्दू-मुसलिम साम्प्रदायिक झगडे किम प्रकार व्यक्तिगत स्तर पर उतर आये, अग्रेजों ने किम प्रकार उत प्रास्ताहन किया इन सबकी यथाथ भाँवा हम यहाँ दसने का मिलता है। स्वदशी-आन्दोलन किन कारणों में बनी ता जात पकट लेता था और कभा धीमा पड जाता था—इसकी मफलता और अफलता के मूड में कौन-सी कमजाशियाँ था—इन बर्मा जी की सूक्ष्म दृष्टि ने पहचाना है। तबक ने यह मत्र पाना व वातातान तथा धाँ विवाह के माध्यम में अभिव्यक्त किया है। तीसरे खंड का आरम्भ देश की यन्त्री हुई राजनतिक स्थिति के परिपप से हुआ है जो वातातान के रूप में प्रस्तुत किया

गया है। एन पात्र इग बाव की सूचना देता है कि 'अब हम पूर्णरूप से गुलाम हो गये। इंग्लैंड का ब्राह्मण शाही म अरना दरबार करने आ रहा है हिन्दु सान क राजे महाराजे अपना विर झुकाएंगे, उसका नजरें दोगे उसका आधिपत्य स्वीकार करोगे।

इसके पश्चात् गानप्रसाद गगाप्रसाद तथा मिस्टर प्रिन्सिपस के वार्तालाप के माध्यम में उत्तम उठत हुए स्वदेशी-आन्दोलन के रूप से हमारा परिचय कराना है। ब्रिटिश सरकार को सहयोग मिला स्वयं भारतीयों से बुद्धिजीवी मध्यवर्ग और जमींदारों से। क्योंकि अंग्रेजों ने अपने स्वार्थ के साथ इनका भी स्वार्थ बाँट दिया था। स्वदेशी-आन्दोलन पतनपता तो किस प्रकार? माना कि मिला पञ्जाबिया के बल पर पहले मन्नापुत्र की जीत अंग्रेजों के हाथ लगी। किन्तु जालियाँवाल बाग के हत्याकाण्ड के ही लाग भेद बकरिया की तरह मार गये। देश के बाहर जा नाग शर बने रहें वे अपने ही देश में बकरी के बने बने गये? इसके मूल में कई कारण थे। एक ओर तो उनके पास हथियार नही थे दूसरी ओर हिन्दू-मुसलमान भेद के कारण इनमें आपसी एकता का अभाव रहा। ये निहत्थे लोग इटालियन के बल पर किस प्रकार गानियो की वीर्यता का मुसलमानों को सन्ताने थे। किन्तु जहाँ हिन्दुत्वान में एकता आयी बुद्धिजीवियों ने विदेशी सरकार को सहयोग देना बन्द कर दिया। वही इस स्वतन्त्रता सङ्ग्राम में जोर पकड़ लिया। गगाप्रसाद के पुत्र गानिगोर के जाते आते हम स्वदेशी जादा लत का यह रूप दिखाने लगता है। असहयोग आन्दोलन की बड़ा गहरी झाँकी में भूने बिसरे चित्र में देखने को मिलती है। विदेशी माल की होनी सत्याग्रह आन्दोलन स्त्रियों का उसमें सहयोग देने का उत्साह आदि हमारे सामने गत भारत के भूने बिसरे चित्र को फिर से साकार कर देता है।

इस प्रकार भूने बिसरे चित्र महाकाव्य की कथा सामग्री वाली विशालता चित्रण की गहनता और चरित्र निरूपण की गरिमा लिए हुए हैं। उसे हम एपिक इन प्रोजे (Epic in Prose) की संज्ञा दे सकते हैं। नायक के रूप में इसमें काँ एक नायक नहीं है यद्यपि ज्वालाप्रसाद आरम्भ से अन्त तक बतमान रहता है। कथा संचालन में उसका हाथ बँधे बँधे दूसरे खण्ड तक रहता है। तीसरे और चौथे खण्ड में गगाप्रसाद अपने पिता से अपने हाथ में कथा सूत्र ले लेता है और फिर उसी के चारा ओर सम्पूर्ण कथा घूमती है। अन्तिम खण्ड में यद्यपि गगाप्रसाद तथा गगाप्रसाद दाना ही बतमान हैं किन्तु गगाप्रसाद के पुत्र नवन की स्वच्छा से परिचालित गतिविधियाँ ही इस खण्ड की कथा का निर्माण करती हैं। ज्वालाप्रसाद चाहते हुए भी नवन के कायक्रम में काँ परिवर्तन नहीं पा

में अनादृश्यक क्या विस्तार, अप्रमुख और प्रासंगिक क्या एवं घटनाओं का विवाद की बात आप-ही-आप समान्त हो जाता है। उपवास का एक-एक पात्र छोटी से छोटी घटना और प्रयोग का अपना महत्त्व है। प्रत्येक समाज की किसी न किमा अंग से हमारा परिचय कराता है। उपवास का आगम जिन प्रयोग से होता है वह केवल मुंशी शिवलाल का झूठे इस्तगाम लिखकर तबिकानाजिन से सम्बन्धित नहीं है। इनमें भी ठाकुर और बनिय का बड़ी मध्यम लिखलायी पढता है, जो ठाकुर बरजार सिंह आर प्रमुखायल में आगे चलकर हुआ है। विविधता प्रस्तुत करने के निमित्त लेखक ने एक आर नीच स्तर के ठाकुर और बनिय की लड़ाई लिखलायी है और दूसरी आर ऊँचे स्तर के ठाकुर और बनिय की। दम और अभिमान—इन दोनों स्तर के लोगो में है। मुंशी शिवलाल जब इस्तगामा में झूठ लिख देता है कि मुगमो मैरूलाल ने फिदवी की बुरी तरह मरम्मत की और कुन्नी बनाई तो ठाकुर भूपतिह महक उठता है यू का अनाप-भनाप लिख दान्हेव मुन्सा की ? ऊ सार बनिया की का मजाल कि हम उठाय के पटकी और हमार कुन्नी बनाए। हम तुमका बतवा ना कि हम जा उनिका उठाय के पटका तो उबेर हाय दूगिया। घर में पढा कराह रहा है।'

मुंशी रामसहाय के यहाँ का ब्राह्मणों और पमारों वाला काण्ड एक आर ब्राह्मणा के बोध अभिमान की अभिव्यक्ति करता है तो दूसरी ओर तत्वालान भारतीय समाज में फले अधविश्वास का बोध कराता है। इसी प्रकार छिनकी और उसके परिवार का चित्रण लेखक ने भारतीय समाज के एक महत्त्वपूर्ण अंग निम्नवर्ग का चित्रण करने के निमित्त किया है। किस प्रकार यह वर्ग अपने मानिकता के प्रति बकातर हुआ करता था और मानिक के परिवार में उनका क्या महत्त्वपूर्ण स्थान था—छिनकी, पसा और भौलू के माध्यम से लेखक ने इस हमारा परिचय कराया है। त्रिवेणी संगम पर छिनकी और मुंशा शिवलाल की छुआछूत वाला घटना में समाज में पन उतमध्वनी अधविश्वास की प्रकट हान का अवसर मिला है।

जहाँ तक गंगाप्रसाद आर उससे सम्बन्धित इतिवृत्त का प्रश्न है, वह गंगाप्रसाद के चारों ओर ही घूमा है। किन्तु उन कथानक की सृष्टि करने में लेखक का उद्देश्य गंगाप्रसाद के ब्यक्तित्व का चित्रण करना उतना अधिक नहीं है जितना भारतीय समाज की उखरती और गिरती परंपरा तथा वैभव के अवशेष सिंगाने से है। राजपराना के मित्र हुए अवशय तान रिपुमनसिह महाराजा आर महाराजनी विजयपुर की विनाशिता, काशुनता और उच्छान्त का चित्रण सामिप्राय है, यद्यपि इसका विस्तार आवश्यकता से कुछ अधिक हो हा

गया है। ताल रिपुमनगिह क माध्यम से लगर ने राजपराके उठत हुए प्रबुद्ध नवयुवक का अवन किया है। जने वग की बुराईया ग बन् परिचित है। गगाप्रसात् के सामने अनन वग की यथाऽ स्थिति और मनाविट्टि का उन्नत करत हुए वह कहता है— परिस्थितियाँ मनुष्य का बनाती गिगाती है। यह एश्वय और भोग विनास का जीवन नही काइ चिन्ता नही काई क्रम नही काई जिम्मेदारी नही—इस जीवन म मनुष्य बने जल्दी बहाता है। जहाँ धन है वहाँ धन ही दवता बन जाया करता है क्याकि धन म शक्ति कत्रित छु चुकी है। यह दुर्भाग्य है बाबू गगाप्रसात् कि मैं ऐस कुल म पैदा हुआ जहा चिन्ताओ क अभाव मे विट्टितिया का साम्राय है।

साम्प्रदायिक झगडो से सम्बन्धित इतिवृत्त क माध्यम से तरसम्बन्धी झगडो का विवृत रूप हमारे सामने यथार्थ बनकर आया है। स्वामी जटिलानन्द अल्लामा बहुशी परहनुल्ला अलीरजा और मनका का निर्माण कर लखक ने जिस कथानक की सृष्टि की है उससे तद्दुगीन साम्प्रदायिक झगडे गहरे रग के साथ चित्रित हुए हैं। इसके अतिरिक्त इनसे गगाप्रसात् के जीवन और पद का सीधा सघष हुआ है। मलका तथा सत्यव्रत शर्मा बाल इतिवृत्त का निर्माण भी इसी उद्देश्य से हुआ है।

ज्ञान प्रकाश बाने इतिवृत्त के साथ समूचा स्वतन्त्रता-आन्दोलन चलता है। उसके माध्यम से स्वदेशी आन्दोलन की हलचल और गतिविधि मुखर हुई है। ज्ञानप्रकाश की गतिविधिया की क्रिया प्रतिक्रिया गगाप्रसात् नवलकिशोर और विद्या पर बडे तीव्र रूप म होती है। गगाप्रसाद तो केवल एक उत्तेजना अनुभव कर रह जाता है किन्तु नवल और विद्या के ऊपर इसका इतना अधिक प्रभाव पडता है कि उससे उनकी जीवन धारा ही बदल जाती है।

जहाँ तक प्रेमशंकर बान इतिवृत्त का प्रश्न है उसके माध्यम से लखक ने क्रान्तिकारिया की गतिविधिया की एक धीण रूपरेखा प्रस्तुत की है। विदेश्वरा प्रमाद सिद्धेश्वरी तथा बाबू कामता नाथ के द्वारा लखक ने समाज के स्वार्थी और लालची समुदाय से हमारा परिचय कराया है। इनके सामने भावना का काई मूय नही है। बेइमानी पठ और फरव इनके स्वभाव के अग बन चुके हैं।

समाज को नायक मानकर लिख गाने बाने उपन्यास भूने बिसरे चित्र का क्या विस्तार बितना अधिक है यह इसका परिवेश म निहित जनेका पात्रा विविध घटनाओ और प्रसंगा से स्पष्ट हो जाता है। इतनी विपुल क्या सामग्री बाने उपन्यास का वस्तु बियास बना शिथिल नही जाए ऐसी सभावना

नैव बना रहता है। किन्तु क्या जो मैं विशाल क्या को बड़ी दृष्टता से बाधन का दला प्रारम्भ से ही भी जिसका परिभाषित रूप हम 'टिड-मडे रास्ते' में देख चुके हैं। फिर भी 'टिड-मडे रास्ते' का इतिवृत्त कहीं-न-कहीं तो सीमित है। 'नून-त्रिमरे चित्र' में वह सीमा कहीं नहीं है। समाज की सीमा कहीं तक है इसका कोई निश्चित रूप रखा हम नहीं बना सकते। तो फिर सम्पूर्ण समाज को लेकर निश्चिन्त जान वाच उपन्यास का हम किन्हीं सीमा रखाया तक सामित रहें यह कैसे सम्भव हो सकता है? क्या जो के सामने यह प्रश्न निश्चित रूप से रहा होगा। इसलिए उनके मन्दिप म उपन्यास को एक पूर्व-निश्चित रूप-रखा अवश्य नहीं होगा। अन्यथा उपन्यास का मुमगठित बन्तु विन्यास सम्भव ही न होगा। समाज व किन पहलुओं पर उन्हें प्रकाश डालना है, इसका विचारण उन्होंने पहले ही कर लिया होगा। तो क्या स्थित्यवन परिस्थिति और पात्रों का चित्रण किस रूप में और किस क्रम से होगा इसका भा पूर्व निश्चित योजना उन्होंने बना ली थी? वेसे प्रत्येक लक्षण इस प्रकार की धुंधली रूप रेखा अपने मन्दिप में बना लेता है और क्या जो म तो यह आन्त पुरानी है। किन्तु इसमें उपन्यास व वस्तु विन्यास में वृत्रिमता आ गयी है या उसका क्या विकास स्वाभाविक गति से हुआ है ऐसा हम नहीं कह सकते। विशेषतः नून-त्रिमरे चित्र के सम्बन्ध में तो हम ऐसी धारणा किसी प्रकार नहीं बना पाते। इसमें बन्तु-सीपठव की सवन बड़ी विशेषता यही है कि स्थित्यवन परिस्थिति निर्माण और घटनाओं की संयोजना, सभी कुछ स्वाभाविक रूप में और स्वाभाविक गति से हुई है। इसका कारण यह है कि क्या जो न जो कुछ चित्रित किया है वह स्वाभाविक है भारत का यथार्थ शक्ति है। फलतः पाठकों का इस प्रकार का विविध भाव आभास नहीं होता कि लक्षण कोई पूर्व निश्चित योजना लेकर बना है।

संयोग तथा घटनाओं की नियोजनता क्या जो ने प्रस्तुत उपन्यास में आव श्यावतानुसार की है। विशेष कर संयोग निर्माण को पूर्व निश्चित योजना का शक्ति आना हमें पढ़ने से हा हा जाता है। तब ही म तो संयोग तथा घटनाएँ इतनी अधिक हैं कि उनकी वृत्रिमता पाठकों से छिप नहीं पाती। संयोग वश ट्रेन में साल रिपुन्मनसिंह राधाकिशन और सन्तो से गंगाप्रसाद की भेंट और फिर बाद में उस भेंट का निकटतम सम्पर्क में ब्रह्म जाता सभी कुछ वृत्रिम स्थिति तथा बाधावरण की सृष्टि करत हैं। यहाँ पर लेखक का उद्देश्य स्पष्ट रूप में प्रकट हो उठा है जो किसी भी प्रति प्रशासनाय नहीं कहा जा सकता। इस प्रकार की वृत्रिमता उपन्यास की अन्य घटनाओं में नहीं पायी जाती है।

गान के झगड़े जमीनरा को मरफिर्न राज पराना का ऐश्वर्य, स्वयंशी आगलन के क्रिशात्मा रर का स्थिरयवन इतना सजीव एर साहार बनकर आया है कि हम मसक की चित्रण शली और दृश्य विधान की बला चारना की दादनी पढती है ।

कथा की राचकता भूले बिसरे चित्र का प्राण है। पर कुतूहल तथा उन्मुक्तता से अधिक उसम पाठक का भावनात्मक संवेचना उत्पन्न करने वाला तत्व है। उमकी कहाना मे पाठक ऐसा खो जाता है उमकी घटनाओ और स्थिति म वह इतना घुल मिल जाता है कि उस सब कुछ परिचित और अपने तथा अपने निवृत्तम पर गुजरता हुआ प्रतीत होता है। लेखक के चित्रण मे गहनता है। इसलिए उससे प्राप्त अनुभूति मे गहराई उत्पन्न हो गयी है। कही-कही तक तथा वाग विवाद के छिन्के बिन्दु हमे देखने को मिल जाते हैं किन्तु उससे कथा के धारा प्रवाह मे कोई व्यवधान आया हो ऐसे स्थल हमें देखने को नहीं मिलते। उनके द्वारा चरित्र और परिस्थितियों को अधिक से अधिक स्पष्ट और सजीव होने का अवसर मिला है। वैसे बर्मा जी के तकौ मे एक अकाट्य सत्य निहित रहना है। जीवन सत्य के किमी-न किसी पहलू को वह प्रकट करता है। किन्तु चित्रलेखा की भाँति 'भूले बिसरे चित्र का कथा विकास वादविवाग और तक के माध्यम से नहीं हुआ। न ही टेढे मेढे रास्ते के पात्रो की भाँति इसके पात्र किसी-न किसी मत और सिद्धान्त को मानने वाले हैं जिससे उनका वाद विवाद बौद्धिक स्तर का बन गया हो। पात्रो के तक व्यावहारिक हैं और उनमें प्रतिदिन का जीवन सत्य प्रकट हुआ है।

रेखा (१९६४) में भूले बिसरे चित्र-सा कथा विस्तार नहीं है—एक सीमित इतिवृत्त और गिने-धुने पात्रो को लेकर उसका कथा-सञ्चलन हुआ है। उपन्यास मे एक समस्या है और उस समस्या को उभारने के लिए लेखक राचक कथा का निर्माण करता है। चित्रलेखा और तीन वष की भाँति रेखा की रचना भी काम समस्या को लेकर हुई है। उपन्यास का आरम्भ नायिका रेखा के परिचय से कर जैसे लेखक समस्या से हमारा परिचय कराना है। यह परिचय काफी लम्बा है और उसे हम रेखा और प्रोफेसर प्रमाशकर क विवाह तक मान सकते हैं। विवाह के पश्चात् कथा का आरम्भ होता है और फिर बिनास बडी तीव्र गति मे होता चला जाता है। अपनी काम-कुण्ठा को लेकर रेखा अनेक पुरुषा से शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करती है। प्रत्येक बार शारीरिक भूल शान्त हो जाने के पश्चात् वह पश्चात्ताप करती है और निश्चय करती है कि वह केवल मात्र अपने प्रोफेसर अपने देवता की होकर रहेगी।

परन्तु प्रत्येक बार वह अपने सत्य से डिग जाता है। प्रत्येक बार रेखा का एक-मा आचरण एकरसता उत्पन्न करता है। उसमें विविधता नहीं है। किन्तु फिर भी उसमें कुतूहल और राचकता पर्याप्त है और उसके प्रस्तुतीकरण की मौखिक कला भावनात्मक सचेतना उत्पन्न करने में सफल हुई है।

कथा में धारा प्रवाह है और प्रासंगिक कथाएँ नहा के बराबर हैं। पानवती रत्ना चावला, शारा चावला से सम्बंधित इतिवृत्त भी रेखा की मनोप्रति छीलन में सहायक हुए हैं। पानवती के विवाह पर डाक्टर योगेन्द्रनाथ मिश्र रेखा का मनोप्रति दो चार वाक्यों में हाथ माल देते हैं। आपकी सखी पानवती वही गलती कर रही हैं जो आपने दो-तीन साल पहले की थी और इसलिए पानवती के प्रति आपके अन्दर एक सचेतना है लेकिन उस सचेतना के साथ एक प्रवार की छुशी भी है आपके अन्दर। रेखा का सचेतन मन जिस सत्य का स्वीकार नहीं करता, उसका मनोविश्लेषण डाक्टर योगेन्द्रनाथ कुछ हाथ माल में कर देते हैं। इसी भाँति शीरीं चावला का सगाई वाला इतिवृत्त सोद्देश्य है। इस सारे उत्सव में रेखा की मन स्थिति कुछ विचित्र-सी रहती है। समवयस्का का विवाह उसके मन में ईर्ष्या उत्पन्न कर देता है क्योंकि स्वयं वह इमसे अधिक रही है। बाद में जब वह निरजन को स्वयं पा जाती है, तो उसे असीम आनन्द आता है और रेखा कितनी प्रसन्न थी। उसने निरजन का रत्ना से छीन लिया था हमेशा के लिए वह जानती थी। उसने शीरीं की जान नहीं बचाई शीरीं के लिए वह निरजन को रत्ना के जान से निकाल लाई। लेकिन इस सब में उसकी भावना भी कुछ है उसके शरीर की भ्रम का ही इस सब में प्रमुख स्थान है—रेखा अपने उत्सव में इसका अनुभव नहीं कर पा रही थी।

रेखा कर्मी जी की सोद्देश्य रचना है, किन्तु उसमें कथानक और चरित्रों में किसी भाँति की कृत्रिमता नहीं आने पायी है। कथा अपने स्वाभाविक ढंग से अग्रसर होती है। घटनाओं का स्थिति इसमें नहा के बराबर है। कथाकार उन्मत्त-नखन के अनेक आवन में तमक न अनुभव किया कि घटनाएँ घमन्तार उत्पन्न करने में भरे ही सहायक हा भावनात्मक सचेतना वाला असा उनमें बहुत कम हावा है। घटनाओं के स्थान पर रेखा में गथात्मक अर्थ है और इन सचयों का निर्यात भी है एक के नवीन पात्रों का प्रकाश में आकर। जब कर्मी कथा प्रवाह अवच्छेद हो जाता है एक पुरुष में रेखा की शारीरिक भ्रम शान्त हो जाती है और प्रासंगिक स्वयं वह उस स्थिति से विच्छेद कर प्रभासकर की सेवा में लीन हो जाती है ता तमक एक

नये पात्र को उसके जीवन में सागर क्या प्रवाह की गति प्रदान करता है। सबसे पहले उसके जीवन में सोमेश्वर आता है फिर ममूरी में अचानक निरजन से उसका परिचय हो जाता है। उसमें साथ उसका शारीरिक सम्बन्ध रहता है। किन्तु जब प्रोफेसर का इसका पता लग जाता है तो रेखा उनसे क्षमा-याचना कर समय का जीवन बिताने लगती है। अब क्या-न की गति एकदम धीमी हो जाती है क्योंकि रेखा का जीवन में मूनापन और उगामी के अतिरिक्त कुछ नहीं रहता। रेखा का पिछले तीन-चार महीने बड़े समय में साथ बीते। इस समय में उसे सुख मिला सतोष मिला लेकिन सुख और सतोष में भी तो एकरसता है जो उमा देने वाली होती है। यह एकरसता अब उसके प्राणा का अखरने लगी थी। यह एकरसता धीरे-धीरे रेखा में एक तरह की वितृष्णा का रूप ग्रहण कर रही थी। निम्न और शान्त वातावरण का अस्तित्व जैसा उसे कान्ठे का दौड़ रहा था। और इस एकरसता को दूर करने के उद्देश्य में जब नवन शक्तिज्ञान से रेखा का परिचय कराता है तो फिर से रेखा में शारीरिक भूख जाग उठती है। फिर तो इसके बाद उसने जीवन में और भी अनेक पुरुष आते हैं।

उन आकस्मिक संयोगों के साथ मानसिक संघर्ष को जोड़कर उसके अपने चित्रण में स्वाभाविकता पाया है। उपन्यास में क्या प्रवाह की तीव्रतम गति प्रभाशकर के बीमार पड़ जाने से आती है क्योंकि तभी रेखा को प्रोफेसर की निरीहता और बेवसी का अनुभव होता है यह मनुष्य कितना असहाय है कितना निरीह है कितना दयनीय है। रेखा को ऐसा लगा प्रभाशकर का सारा अहम् उनकी समस्त हिमा—य सब नियति के एक घटक में टूट गये हैं। उसके सामने एक असमर्थ और टूटा हुआ आत्मी पड़ा था। और इस ममत्व के कारण वह प्रोफेसर को छोड़कर नहीं जा पाती। बीच-बीच में जब कभी वह प्रोफेसर की कटुता को नहीं सह पाती तो फिर से उसमें मानसिक संघर्ष होने लगता है। फलतः प्रोफेसर की देव भान के लिए दबकी की व्यवस्था कर वह योगेश्वर नाथ के साथ जाने का निश्चय कर लेती है। इस क्षण उसका हृदय-मालन बड़ा तीव्र हो उठा है। प्रभाशकर की मनाव्यथा उससे सहन नहीं हो पाता। प्रभाशकर जब कहते हैं मैं बुरी तरह टूट गया हूँ रेखा। फिर सदन तकूंगा इसकी काद आशा नहीं। मैं अपनी निराशाओं और अमकलताओं से निराश हो गया हूँ और अपने ऊपर से अपना अधिकार खो बैठा हूँ। तुम मरी वाता का बुरा न मानना। मेरे कोई नहीं है एक तुम्हें धाँककर एक तुम्हारा ही सहारा है मुझे।

ता रेखा को अनुभव हुआ था कि एक टूटा हुआ आत्मा उसके सामने लगा हुआ है—कितना निरीह और कितना दयनीय। इस आत्मी का मृत्यु क मुख में और बेमहारा छोड़कर वह जा रही है। वह प्रभाशकर का ही नहीं अपना आत्मा की हत्या करने पर तुल गयी। फलतः वह अपने सकल्य पर दृढ़ नहा रह पाती। वह योगेन्द्रनाथ से साय जाने क लिए मना कर देती है। किन्तु फिर प्रभाशकर का आत्मकेन्द्रित और स्वार्थी के रूप में दम, वह समस्त साहस क साय योगेन्द्रनाथ क साय जाने के लिए निकल पड़ती है। पर निप्रति उसक साय क्षिप्तवाण करती है और वह नहीं जाने पाती। योगेन्द्रनाथ चला जाता है उस छाडकर प्रभाशकर बन जात है उस छाडकर और मानसिक सन्तुलन भी उसका साय छाड दता है। वह पागल हो उठती है। इस प्रकार उपन्यास की चरम सीमा बड़े भावनात्मक विन्दु पर आता है। महा उपन्यास का सबसे आकर्षक स्थल है। इस प्रकार 'रेखा का क्या महत्त्व उठना महत्त्वपूर्ण नहा है जितना क्या का प्रस्तुताकरण। विषय और अभिव्यक्ति दोनों ही दृष्टि से रेखा एक मौलिक कृति है।



द्वितीय खण्ड

- प्रमुक्त उपयास

चित्रलेखा

'चित्रलेखा बर्मा जी का पहला सफल उपन्यास है। इसके पूर्व 'पतन' में उन्होंने उपन्यास-लेखन में प्रवेश अवश्य किया था, पर स्वयं बर्मा जी उस एक प्रयोग मात्र मानते हैं और अपना पहला उपन्यास चित्रलेखा को ही मानते हैं। 'चित्रलेखा' से पूर्व बर्मा जी कवि की शैलियत से ही जाने-माने जाते थे। वे छायावाद के प्रमुख प्रवक्तृका में से थे। पर गद्य के विकास और पद्य में ह्रास ने उन्हें उपन्यास लिखने का प्रेरित किया। इसके अतिरिक्त अथर्जनित जीवन संपन्न के फलस्वरूप उन्हें जीविकाजन की चिन्ता ने भी घेर लिया और उन्हें यह अनुभव हुआ कि कविता उनकी आजीविका की समस्या नहीं मुलझा सकती।^१ परिस्थितियों से विवश होकर या अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति जैसी ना हा बर्मा जी ने 'चित्रलेखा' के साथ कथा-क्षेत्र में जो प्रवेश किया, ता फिर वे हमारा क लिए इसी क्षेत्र के हा गये। और 'चित्रलेखा' का पाकर हिन्दी साहित्य-समाज ने अनुभव किया कि कवि बर्मा के अन्दर एक कथाकार सोया पड़ा था, जा उनकी तरुणावस्था के साथ एकाएक जाग उठा।

पर छायावाद का प्रमुख कवि कविता का कितना मोह छाठ पाठा या छाठ पाया। यह विचार रहित है कि उनकी 'चित्रलेखा' उपन्यास हाउ हुए भा गद्य में एक छायावादी कविता ही है। 'चित्रलेखा' का प्रत्येक अवयव छायावादी कविता के आवरण से ढंका है। भाषा शली बणन वातालाप, तक आति तो कवित्व मय है ही पात्र घटनाआ और परिस्थिति का ग्रहण करने की उमरी अनुभूति तक कविन्वमय और भावपूर्ण है। किमी घात का प्रस्तुत करने का शला किमा घात को कहने का ढग हम एक गद्यकार से नहीं कवि से परिचिन करता है

घनकउ हुए मन्त्रि के पात्र का चित्रलेखा क मुख से उगतन हुए बीजगुण ने कहा— चित्रलेखा जानता हा जावन का गुण क्या है ।

१ 'रणों से मोह' की प्रस्तावना

चित्रलेखा की अधशुला आँगा म मतवानापन था और उमक अरण कपाता म उल्लाम था । यौवन की उमग म मूर्त्य विनाश कर रटा था आनिगनपारा म वासना हैम रही थी । चित्रलेखा ने मन्त्रि का घट पिया—इमन म् मुम्न रायी । एन मण के लिए उमके अधरा ने धीजगुप्त क अधरा स मौन भापा म कुछ गान कयी फिर धारे म उगने उत्तर गिया— गस्ती ।

पाश्रो के वार्तालाप और वाग् विवाग् ता कवित्वमय भाषा म हैं ही भाषा का प्रस्तुतीकरण भी काव्यमय है । कुमारगिरि की कुटी म वाजगुप्त और चित्रलेखा अतिथि के रूप में जाकर विश्राम करते हैं तो कुमारगिरि स्त्री का दखकर निचविचाता है क्यकि उसक अनुसार स्त्री अधकार है मोह है माया है और वासना है । चित्रलेखा कुमारगिरि क इन विचारा से तिलमिला उठती है और इसका उत्तर वह ऐसी तीखी पर कवित्वमय भाषा म देती है कि यागा तिलमिला उठता है ।

उसने कुमारगिरि के वाक्य समाप्त होने पर उनके सामने अपना मस्तक नमाकर कहा— प्रकाश पर लुघ पतग को अधकार का प्रणाम है ।

वाक्य तीर की तरह पैना तथा घातक था । स्वर सगीत की भाँति कोमल सौंदर्य म कवित्व था वासना की मस्ती मे अधकार ।

चित्रलेखा की वस्तु उस उपन्यास का रूप प्रदान करती है तो उसकी अभिव्यक्ति उसे कविता का । उसकी एक एक पक्ति मे कवि बोलता है

महासागर के शान्त वसस्थल पर भयानक म्गावत उठने के पहल एक घोर निस्तब्धता छा जाती है । उस समय वायुमडल उत्तजित हा उठता है और सारा वायुमडल भावी प्राति की आशका से शून्य-सा हो जाता है ।

और उसके बाद ? वायु के प्रचण्ड क्षवि—सहरा त्रा ताण्डव नतन तथा विप्लव गायन ।

आकाश के वसस्थल पर ज्वालामुखी के फटने के पहले एक घोर दबी हई अशान्ति पन जाती है उमका नीला रग धूमिल हो जाता है और विनाश के भय स सारा आकाश मण्डल वायु स रिक्त हो जाता है ।

और उसके बाद ? अग्नि क शोन और विनाश ।

स्पष्टतया चित्रलेखा मे वमा जी अपनी कवि प्रवृत्ति नहा छाड पाये । छाग् तो वे आज तन नहा पाये हैं पर उस समय उन पर कस्तुरा प्रभाव अधिक ही था । तब तक को कविता क माध्यम स ध्यवन करने का अपना ढग उहूने

अपना लिया था। 'चित्रलेखा' के लक्षण से कुछ ही समय पूर्व उन्होंने वज्रालत पाम की थी। पर व्यवसाय के क्षेत्र में तो वह इसका उपयोग नहीं कर पाये, साहित्य में इसके उन्होंने तक के माध्यम से किसी बात को कहने विषय को प्रस्तुत करने की अपनी एक शला बना ली। तक के माध्यम से लक्षक सच झूठ अच्छे बुर मत का सशक्त प्रतिपादन करता है। इसके एक प्रकार का चमत्कार उत्पन्न हो जाता है। झूठ को भी हम तरह प्रतिपादित करना कि वह सच लग—तक का विशुद्ध परिभाषा है। 'चित्रलेखा' में इस प्रकार का चमत्कार जगह-जगह है। पर हममें तक की यह प्रक्रिया प्यसारमन न होकर रचनात्मक है। समाज विरोधी तत्वों का प्रतिपादन लेखक तक द्वारा नहीं करता। तर के द्वारा वह बस एक चमत्कार उत्पन्न करता है, और उस चमत्कार से पाठक चमत्कृत हो भी जाता है। बीजगुप्त और चित्रलेखा का एक वार्तानाय प्रस्तुत है

बीजगुप्त ने धीरे से कहा— आज हम शोना क परिवेष क बाल पहला अवसर उत्पित हुआ है, जब चित्रलेखा बीजगुप्त से अपनी बात छिपा रही है। चित्रलेखा का हृदय बदल गया है, इसका बीजगुप्त को कुछ क्षीण आभास हो रहा है।

इस परिवर्तनशील ससार में किसी भी चीज का बला जाना अस्वामाधिक नहीं है।

बीजगुप्त स्तब्ध-सा रह गया। इस उत्तर के लिए वह तैयार न था। क्या कहा इस परिवर्तनशील ससार में किसी भी चीज का बला जाना अस्वामाधिक नहीं है? तो फिर यह समय लूँ कि चित्रलेखा का प्रेम बलन सकता है?

नहीं बीजगुप्त का अनुमान मिय्या है। चित्रलेखा का प्रेम सागर की भाँति गम्भार है, उसका बदलना असम्भव-ना है पर साथ ही मैं यह मानती हूँ और उसको ठीक भी समझती हूँ कि प्रेम परिवर्तनशील है। प्रकृति का नियम परिवर्तन है प्रेम उभी प्रकृति का एक भाव है। प्रकृति का नियम प्रेम पर भी लागू हो सकता है।

बहु हावे हुए भा चित्रलेखा ने जो कुछ कहा, वह किमी जय तक सत्य था—इसका बीजगुप्त ने अनुभव लिया। बात मत्य थी, कहने का अवसर उपयुक्त था और बात का प्रगम भी समयोचित था।

चित्रलेखा तुम झूठी ना। प्रेम का सम्बन्ध आभास है, प्रकृति से नहीं। जिस वस्तु का प्रकृति से सम्बन्ध है वह वासना है, क्योंकि वासना का सम्बन्ध बाह्य से है। वासना का सधर वह शरार है, जिस पर प्रकृति न कृपा करत

उमका मन्त्र बनाया है। प्रेम आत्मा स होता है शरीर से नहीं। परिवर्तन प्रकृति का नियम है आत्मा का नहा। आत्मा का सम्बन्ध अमर है।

चित्रलेखा हृदय पत्नी— आत्मा का सम्बन्ध अमर है। बनी विचित्र वान कह रहे हा वीजगुप्त। ता जम लेता है वह मरता है यदि कोई अमर है तो अजमा भी है। जहाँ सृष्टि है वहाँ प्रलय भी रहेगा। आत्मा अजमा है इस लिए अमर है पर प्रेम अजमा नहीं। किसी व्यक्ति स प्रेम हाता है ता उम स्थान पर प्रेम जम लेता है। सम्बन्ध होना ही उस सम्बन्ध का जम लेना है। वह सम्बन्ध अनन्त नहीं है कभी-न-कभी उम सम्बन्ध का अन्त हागा ही। प्रम जीर धामना म भेद बवल इतना हा है कि वासना पागलपन है जो धार्मिक है और इतीलिए वासना पागलपन के साथ ही दूर हा जाती है जीर प्रम गम्भीर है। उमका अस्तित्व शीघ्र नहीं मिटता। आत्मा का सम्बन्ध अनादि नहा है वीजगुप्त।

वीजगुप्त ने देखा कि चित्रलेखा की तकना शक्ति बहुत बढ गयी है। वीजगुप्त ही चित्रलेखा के तकों से चमत्कृत नहीं हाता पाठक भी उससे चमत्कृत हा उता है। और इस प्रकार के चमत्कार क कारण चित्रलेखा मे एक सशक्त जीवन दर्शन निहित है। कवित्व तक और दर्शन के समुक्त चमत्कार ने चित्रलेखा म एक अनोखा भावनात्मक वातावरण पैदा कर दिया है। यही चित्र लेखा की सबसे बडी विशेषता है।

चित्रलेखा स्वच्छन्द प्रकृति के तरुण कवि की रगीन कल्पना की कलात्मक अभिव्यक्ति है पर उसमे एक सशक्त जीवन दर्शन भी निहित है। यह जीवन दर्शन उमे किसी अनुभव या अध्ययन मनन से प्राप्त नहीं हुआ वरन् उसे सस्कार क रूप म प्राप्त हुआ है। अनुभूति स सामान्य भारतीय उस पा जाता है या दूसर शत्रु मे उसे यह सस्कार के रूप मे मिलता है। हिन्दू-परम्परा मे निवृत्ति और प्रवृत्ति माग दर्शन की दो धारा-जा के रूप म मिलता है। निवृत्ति तपस्या साधना आर सायास पर बल देती है तो प्रवृत्ति कर्म पर। प्रवृत्ति माग की भी दो धाराएँ हैं—एक गीता का कर्मवात् और दूसरा चावान का भोगवात्। चित्र लेखा म लेख का जीवन-दर्शन जहाँ कर्म पर बल देता है वहाँ भोग के प्रति भी उसकी अपार आस्था है। किन्तु वह चावान के भोगवात् से सवया भिन्न है। चार्वाक क भोगवात् म अच्छे बुरे सत्-असत् का कोई भेद नहीं है। वह जीवन के भौतिक मुस्ता पर बल देता है। वमा जी भौतिक मुस्ता का महत्त्व तो देते हैं पर वे उमने उतात्तीकरण को भी आवश्यक वतनात हैं। इस जीवन दर्शन का प्रतिपादन लेखक ने वीजगुप्त क माध्यम से किया है। वह जीवन का भरपूर आनन्द उठाता है। वह

जीवन जाता है, उससे भागता नहीं है। वह पूणत भोगवाणी है। लेशक के शब्दों में बीजगुप्त भोगी है उसका हृदय में जीवन की उमर है और आत्मा में मान्यता की लानो। उसका अद्वैतनिश्चय म भाग-विलास नाचा करते हैं, रत्न-अद्वैत मंदिरा के पात्रा म हा उसका जीवन का सारा मुख है वैभव और उल्लास की तरंगों में वह डेलि करता है एश्वर्य का उसका पास कभी नहा है। उसमें सौंदर्य है और उसका हृदय म सत्ता की ममस्त वासनाओं का निवास। उसका द्वार पर मातंग नूमा करत हैं उसका भवन में सौंदर्य के मद से मतवाला नृतकिया का नृत्य हुआ करता है। ईश्वर पर उसे विश्वास नहा शायद उसने कभी ईश्वर क विषय म माना तक नहा है। और स्वर्ग तथा नरक की उस कोई चिन्ता नहा। आसोद प्रमा ही उसके जीवन का साधन है और सत्य भी है। स्पष्टतया बीजगुप्त भोगी है पर पतिव नहीं है। उसने जीवन से सहयोग कर लिया है अपनी भावना का उगातीकरण कर लिया है।

निश्चितता वमा जी व जावन-शान का एक भाग है। पर उनका निश्चितवाद परिस्मितिया का दास होना नहा सिखाता उसम कर्म का विशेष महत्व है। 'मनुष्य स्वतंत्र विचारवाला प्राणी होते हुए भी परिस्मितियों का दास है। मनुष्य की विजय बड़ा समझ है जहाँ वह परिस्मितिया के चक्र म पडकर उसी के साथ चक्कर न खाए बरन् अपनी कतव्य-अकतव्य का विचार रखत हुए उस पर विजय पाय।

चित्रलया व माध्यम से वमाओं ने प्रेम क क्षत्र म भी एक नवीन मान्यता स्थापित की है। इस क्षत्र म उन्होंने पवित्र-स्वातन्त्र्य की मार्ग का है। बीजगुप्त व माध्यम से उन्होंने स्वच्छ प्रेम का महत्ता का प्रतिपादन किया है। बीजगुप्त स्वच्छ प्रेम म विश्वास करता है और वह इसे विवाह से कम पवित्र नहा मानता। 'प्रेम एक-दूसरे म भेदभाव नहा दखता, प्रेम ग हृदय का अभिजापा का घातक है।' इसलिए सत्य का दृष्टि म अविवाहित होते हुए भी वह अरने का विवाहित समझता है।

जहाँ तक चित्रलया व कला-यग का सम्बन्ध है इसकी क्या परम्परागत विभाग बनारर चलता है। एक सुवती और उससे प्रेम करने वाला दा सुवती। पर इसका निश्चय, प्रस्तुतीकरण और अभिव्यक्ति इन नवानता प्राप्त करता है। उदयग एक अत्यन्त रोमांटिक कालज का सहर बनता है और इसकी अभिव्यक्ति म कमनीयता और अनगना माधुर्य है जो पाठक का बरबस स्वप्नित पाठाकरण में ला देता है। चित्रलया तरंग कवि का आत्मा का सगात है। आत्मा का गगीत हा नहीं चित्रलया म जीवन की कविता है। जीवन का

माधुय और प्राणा का उत्थास है जाने की प्रेरणा है। अपनी कविबलमय कलना को साकार कराने के लिए ही वेगल ने बतमान समाज के बटार मधार्थ से बचकर ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का आँवल परका है। यहा चित्रनखा की अद्भुत सफनता दिसती है। एक रोमानी बानाररण का सृष्टि कर लगन ने बतमान समस्या को बतमान मनाविज्ञान के परिप्रेक्ष्य में बतमान तर्का के द्वारा युगा नुरुप ढग से सुलथाया है। अत गाममात्र की एतिहासिकता के अतिरिक्त चित्रनखा में सभी कुद्ध बतमान का है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि गपनाने से लखरु काल्पनिक पात्रा और काल्पनिक परिस्थितिया का ययाय रूप दकर उनमें मन मान जीवन दशन का प्रतिपादन कर सका है। चित्रनखा ययाय भूमि पर नहा आदश की भूमि पर चलती है और इसका कारण कदाचित् बर्माजी का जीवन-दशन है। शाश्वत समस्या का लकर बतमान ही पृष्ठभूमि कुद्ध अधिक उपयुक्त नहा बैठती। उसमें ततक स्वतत्र नहा रह पावा। पर ऐतिहासिक पीठिका में लखरु सन कुद्ध कहन और चित्रण करने के लिए स्वतत्र हो जाता है।

जहाँ तक औपयासिकता का सम्बन्ध है चित्रनेखा की रचना बर्मा जी ने सोद्देश्य की है। फलत इसका इतिवत्त कथा सगठन घटनाआ का सगठन एक पूव निश्चित याजना द्वारा निमित्त है। उपयासकार इसलिए एक राचक कहानी की सृष्टि करता है जिससे वह पाप-गुण्य तैसी पुरातन मायता का निराकरण कर अपना जीवन दशन प्रस्तुत कर सके। फलत अपने जीवन दशन की सफलता आर विपरीत जीवन दशन की असफलता दिसाने का उसका पूव निश्चय उससे इम उद्देश्य के अगुरुप ग्यानक की रचना करता है। निश्चित स्थितिया में रखकर वह उन चरित्रा का ता उधान लिखाता है जा उसके जीवन दशन का समथन करते हैं और उन चरित्रो का पतन दिखाता है जिस जीवन दशन में वह अनास्था रखता है। तेलरु के मस्तिष्क में रचना प्रक्रिया इसी रूप में रही होगी। ऐसी अवस्था में उपन्यास के वस्तु त्रियास और चरित्राकन में वृत्रिमता आने की पूरी पूरी सभावना थी। किन्तु चित्रनखा का कथा प्रवाह और चरित्र चित्रण स्वाभाविक गति से हुआ है और उसमें किसी प्रकार की वृत्रिमता नहीं आने पायी है। उपन्यास का सपूण कथा विकास भाव विकास के माध्यम से हुआ है। इम सफनता का कारण यह है कि बर्मा जी ने चित्रनेखा में चरित्र और परिस्थितिया (परिस्थितियाँ जा वस्तुत घटना द्वारा सम्पन्न की गयी हैं) को एक दूसरे से उलझा कर उनकी त्रिया प्रतिक्रिया उत्पन्न की है। घटनाआ का अपने में कोई स्वतत्र अस्तित्व नहा है, वे किसी पात्र की चारित्रिक विशेषता का उद्घाटन करने का

माय्यम बना है। यह सब सैर है किन्तु प्रमुख उपन्यास को कुछ भावमिक्त घटनाएँ बना अस्वानाविक भा लगता है। जगल म राम्ना नून जान पर कुमार-गिरि और चित्रलता को मंत्र अस्वानाविक बना है किन्तु अमन उद्देश्य का पूर्ति क निर्मित अत्र लक्ष्य बाध बार एन जाना क पारस्परिक सम्बन्ध क अवनर क निण महाराज चन्द्रगुप्त की समा और मृच्युदय क प्रातिमात्र-सुख का निपादना करता है, ता महया विज्ञान नहा हाता कि जावन म इस प्रकार की घटनाएँ घटित भा हा सकता है। उन स्थलों पर स्पष्ट आनाम हान लगता है कि लक्षक न इन घटनाओं की स्यादना पहल म ही कर रखा थी। फिर ना एक रावक कहानी का आवरण चित्रलता की म्र कमी का पूणतमा बन लगता है।

लक्षक ने उतने हा पात्रा का सूत्रन किया है जितने अभीष्ट सिद्धि क लिए उत आवश्यक मानून हुए। एक भी पात्र निररफ नहा है। किन्तु प्रश्न पात्र क अनारश्यक हान का नहा इस बात का है कि वह अन्य पात्रों आर घटनाओं न घुनमिन पाया है या नहीं। बाजगुप्त कुमारगिरि और चित्रलता, यतान उपन्यास क प्रमुख पात्र हैं। यशागरा का निमाण भा सादेश्य कहा जा सकता है। अत्राक आर विशालत्व श्रष्टा बनकर आय है। विज्ञानत्व तो अन्य एक स्पष्ट हा बना रहता है किन्तु श्वत्रात दूसर पात्रा की जावन पारा क साम बह जाता है। अतिए कहा जा सकता है कि चित्रलता म विज्ञानदेव की स्थिति अनावश्यक है और उसकी उन्स्थिति से कथानक में सिद्धिगतता भा गया है।

पूत्र निश्चित जान क कारण चित्रलता का कथानक गुणगठित है। फलन-सममें प्रागिक घटनाएँ या कथाएँ अधिक नहा है। प्रसंगवश इसम दो कथाएँ आयी हैं—एक निररफ है और दूसरी मादेश्य। यशागरा क सम्मुख बाजगुप्त न जिन अनोकिघ घटना का कथान किया है वह समय अनावश्यक है आर यथावत म सिद्धिगतता उपन्न करने का कारण बनो है। दूसरी प्रागिक घटना मादेश्य अवश्य है किन्तु बह प्रमाण कथानक का महापरक नहीं कहा जा सकता। बाजगुप्त की मनःस्थिति जब चरम माया पर पहुँच जाती है तब लक्षक यह प्रागिक घटना लाता है। बागी क गण-सूत्र की घटना बाजगुप्त क मानसिक मध्य जान में ठारा उन्स्थिता को कम करने का साधन बना है, इससे अधिक इसका उपायगिता कुछ नहीं है।

चित्रलता क कथा-मात्र क सम्बन्ध में एक बात और अवशिष्ट रह जाता है। यह यह है कि जहाँ-तहाँ भी कथाओं को अवसर मिला है परिच्छेद क

आरम्भ में उन्होंने एक दार्शनिक टिप्पणी जोड़ने का ध्यान मूल कथानक को पकड़ा है। इससे क्या प्रवाह में एक प्रकार का अवरोध उपस्थित हो गया हो ऐसा नहीं है क्योंकि चित्रलेखा का दार्शनिक विचार उपन्यास में घुनमिल ही नहीं गये, वे उपन्यास के आधार बन गए हैं। चित्रलेखा का विमुख हो जाने पर बीजगुप्त को जो दुःख होता है उसका घणन सीपा न कर नयक इस प्रकार करता है। दिन का बाद रात और रात का बाद दिन।

सुख के बाद दुःख और दुःख के बाद सुख।

बिना रात के दिन का कोई महत्व नहीं है और बिना दिन के रात का कोई महत्व नहीं। बिना दुःख का सुख का कोई महत्व नहीं है बिना सुख का दुःख का कोई मूल्य नहीं है।

यही परिवर्तन का नियम है। ससार परिवर्तनशील है। मनुष्य उसी ससार का एक भाग है। बीजगुप्त मनुष्य था—उसने सुख देखा था उसके लिए दुःख को भी जानना आवश्यक था। पर बीजगुप्त अपने दुःख के भार से विचलित हो उठा। जिस बात को उसने कल्पना तक नहीं की थी वही हो गयी। उस आश्चर्य यह था कि वह जीवित क्या है। बीजगुप्त के लिए उसका जीवन भार हो गया।

ऐसी दार्शनिक टिप्पणियों का कथानक अथवा पात्रों की मनस्थिति से सीधा सम्बन्ध है इसलिए वे थिगली सी प्रतीत नहीं होती। ये वस्तुस्थिति को और भी अधिक उभारने और स्पष्ट करने में सहायक हुई हैं। स्थिति और मनोभावा को इतने मोहक ढंग से अभिव्यक्त करने का तरुण कवि लेखक का यह भौतिक प्रयास है।

चित्रलेखा में अनावश्यक विस्तार वाले अंश नहीं हैं। लेखक ने उतना ही क्या विस्तार किया है जितना आवश्यक है। परिस्थिति और वातावरण के भी उसी अंश का चित्रण और विवरण दिया है जो पात्रों के चरित्र और उनके विकास से सीधा सम्बन्ध रखता है। उपक्रमणिका एवं उपसंहार वाले अंश भी सोद्देश्य हैं निरर्थक विस्तार के उपादान नहीं। पाप पुण्य की समस्या का प्रस्तुतीकरण प्रथम भाग में कर अन्तिम भाग में निष्कष दिया गया है। इस अधिक इन दोनों की कोई उपयोगिता नहीं है। इन दोनों अंशों को निकाल देने से भी उपन्यास के कथानक में कोई अन्तर नहीं आता। मूल कथानक का भाग भी हम इन दोनों को नहीं मान सकते। न तो ये भाग कित्ती घटनाओं से सम्बन्धित हैं और न ही किसी पात्र के चरित्र विकास और मानसिक संघर्षों के उत्थान-पतन से। वस्तुतः चित्रलेखा और बीजगुप्त के उत्थास विलास की मादकतापूर्ण शक्ति

के माय चित्रनला का आरम्भ होता है। और उनक एक दूसरे स विलग होने पर अर्थात् चित्रनला बाजगुप्त और कुमारगिरि स मानसिक तनाव आ जाने पर उपन्यास की चरम-सीमा आ जाता है आ अगन्त आक्षय है। फिर कुमारगिरि क चारित्रिक स्वलन और बाजगुप्त क विराग स उपन्यास की परिममाप्ति आ जाती है। इसक बाद कुछ कहने को नहीं रह जाता। इसक बाद घटनाओं और चरित्र सषय में ताश्रता नहा रह जाता। फलत पाठक की उन्मुक्तता वही समाप्त आ जाता है। यह अवश्य है कि यदि उपन्यास वाला अश न हाता ता पाठक स्वभावतः बाजगुप्त का पुण्य-वृत्ता और कुमारगिरि का पाप-वृत्ता मान उता किन्तु महाप्रभु रत्नाम्बर का जतिम निगम पाठक का नवीन जीवन दृष्टि उता है। मसार स पाप कुछ ना नहा है वह बचन मनुष्य क दृष्टिका की विषमता का दूसरा नाम है। प्रत्येक व्यक्ति एक विशेष प्रकार की मन प्रवृत्ति लेकर उत्पन्न हाता है—प्रत्येक व्यक्ति उस समाज क रगमब पर अनि नय करने आता है। अपने मन-प्रवृत्ति स प्ररित हाकर अपने पाठ को वह उगता है—यही मनुष्य का जीवन है। आ कुछ मनुष्य करता है वह उमक स्वभाव के अनुकूल हाता है और स्वभाव प्राकृतिक है। मनुष्य अपना स्वामी नहा है, वह परिस्थितियों का दास है—विवश है। वह कता नहा है वह केवल मापन है। फिर पाप और पुण्य केना ?

मसार में इसालिए पाप की एक परिमापा नहा आ सती—और न आ सकती है। हम न पाप करते हैं और न पुण्य करते हैं हम केवल वह करते हैं आ हमें करना पडता है।'

'चित्रनला स नाटकीयता स पूरा घटनाओं की बहुलता है। इसकी घटना भी केवल परिस्थिति उत्पन्न करने का मापन बना है। विशिष्ट परिस्थितियों स आतकर व्यक्ति क मनाविधान का आ निगमन समक ने कराया है वही महत्वपूर्ण है। आताकरण और परिस्थितियों व्यक्ति-भाव की मूलप्रवृत्ति और प्रवृत्ति का उद्घाटन कर देती हैं। इस तथ्य को परककर सभी जी न यह चरित्र प्रधान उपन्यास निगा है। एक स्थिति एकी-भी आती है जब विलास और अनुराग से विराग और उत्र पैग हो आती है और मन सात्विक जीवन ध्यतीत करने की आशोषा करने लगता है। दूसरी ओर इच्छाओं पर नियन्त्रण रखनेवाला ही नहा उन्हें उत्पन्न तक न होने देने वाल व्यक्ति क जीवन में भी चरमसीमा क एत्रे सग आता है जब वह अपनी इन्द्रियों पर स नियन्त्रण ना देता है और उसकी स्वभाविक आवनाएँ उमुक्त होकर उच्छ्वसता की सीमा पर पहुँच आती हैं। और यह मन ही उी है जो बह आता है, आ

आकषक बिन्दुओं के चुनाव करने में। ऐसे हृदयान्मूलन को अभिव्यक्त करने में यह उपन्यास अमूर्तपूर्व समर्थ हुआ है।

उपन्यास में चित्रलेखा का मनोविज्ञान सबसे अधिक विचित्र है। ऐश्वर्य में आकृष्ट हूँकी बीजगुप्त के अनुराग से अनुरजित होते हुए भी चित्रलेखा क्या योगी कुमारगिरि की ओर आकर्षित हुई यह एक विचित्र पहली है। प्रथम दृष्टि में चित्रलेखा सोचती है कि वह कुमारगिरि से प्रेम करती है किन्तु कुमारगिरि के पास पहुँचने पर उस जा अनुभूति होती है, वह विचित्र है चित्रलेखा ने अपने को टटोला—उसने अपने में एक विचित्र परिवर्तन पाया। वह पहल चली थी कुमारगिरि से प्रेम करने—उसने अब अनुभव किया कि वह कुमारगिरि से प्रेम न कर सकती थी, न उनकी पूजा कर सकती थी और न उनसे सीख सकती थी। नगर के अशांन्तमय जीवन से वह घृणा गयी थी निजन की शान्ति में सात्विकता की आभा में विश्वास के पर्दे पर उनमें सुख देखा। जीवन के आमाम् प्रमाद से वह ऊँच गयी थी अति सुख उसके लिए उत्पीडन हो गया था। कुमारगिरि की कुटी के प्रशान्त वातावरण में चित्रलेखा ने सुख देखा तृप्ति देखी।

चित्रलेखा का मनोविश्लेषण उसकी मनोवृत्ति का एक पक्ष हो सकता है किन्तु उसके इस आचरण में नारी मनोविज्ञान का एक दूसरा तथ्य भी निहित है। अपने सौंदर्य के बल से अपना स्वागत कराने वाली रूपगविता नारी पाटलिपुत्र का जन समुदाय जिसके पैरों पर सोटा करता था, उसके सौंदर्य की उपेक्षा कोई व्यक्ति कर जाय यह इस नारी को कैसे सह्य होता? सबके आकर्षण की केंद्र यह नारी कैसे मुन सकती थी योगी का उपेक्षापूर्ण वाक्य कि स्त्री अधकार है मोह है माया है और वासना है। ज्ञान के आलोक में स्त्री का कोई स्थान नहीं। फिर महाराज चन्द्रगुप्त की सभा में, जहाँ उसकी हमती हुई दृष्टि की एक क्षलक से सामंतों का उत्साह प्रतिध्वनित ही उठता हो वहाँ कुमारगिरि का अनासक्त होना चित्रलेखा के अहं को तिलमिला देता है। और फिर उसके नृत्य की धिरकन में प्रत्येक व्यक्ति मन्त्रमुग्ध-सा बला के सर्वोच्च प्रदर्शन को निरख रहा हो उस समय योगी के विप्र से उसके नृत्य को रोक दिया जाना उसमें क्रोधाम्नि जगा देता है। इसके प्रतिकार स्वरूप वह योगी की विजय को पराजय में बदल देती है। इसके बाद चित्रलेखा का अचेतन मन योगी कुमारगिरि के मन को जीतने के लिए कटिबद्ध हो जाता है। फलतः उसका चेतन मन कुमारगिरि से प्रेम करने का ढाग रचता है। चेतन मन उसके अचेतन मन के इस व्यापार को नहीं समझ पाता और इसलिए चित्रलेखा समझती है कि वह

कुमारगिरि स प्रेम करने लगी है। किन्तु जब वह कुमारगिरि को जीत लेती है, तबउमकी समझ म आता है कि वह कुमारगिरि से प्रेम नहीं करती थी। कुमार गिरि के यह कहने पर कि 'नठकी, मैं तुमसे प्रेम करता हूँ।' वह हस पडती है और कहती है मैं जानती हूँ कि तुम मुझसे प्रेम करते हो पर मैं तुमसे प्रेम नहा करती। एक क्षण के लिए मरी इच्छा तुम पर आधिपत्य जमान का हुई था और मैंन उमका प्रमत्त किया। मैं सफल भी हुई पर उमसे क्या? पुरुष पर आधिपत्य जमाने की इच्छा स्त्री के पुण्य स प्रेम की द्योतक नहा है प्रकृति न स्त्री का शासन करने के लिए नही बनाया है। स्त्री शासित होने के लिए बनाइ गई है, आत्म-समर्पण करने के लिए। स्त्री अपने स निबल मनुष्य स प्रेम नहा कर सक्ता जिम पर उसन आधिपत्य जमा लिया वह मनुष्य उमके प्रेम का अधिकारी हा ही नहा सक्ता। स्त्री का क्षेत्र है आत्म-समर्पण अपने अस्तित्व को प्रेमी के अस्तित्व म मिला देना, इसीलिए स्त्री उसी मनुष्य से प्रेम कर सकती है, जो उस पर विजय पा सके, जो उस पर आधिपत्य जमा सके। यागो कुमारगिरि महा पर विपमता है। पुरुष का प्रेम आधिपत्य जमाना है, स्त्री का प्रेम अपने का पुण्य के हाथ में सौंप देना है। पर यहाँ बात दूसरी है। यहाँ मैं स्वामिनी हूँ तुम दास हा। मैंन तुम पर आधिपत्य जमा लिया है, तुमने आत्म-समर्पण कर लिया है। किस बल पर तुम मेरा प्रेम चाहते हा ?

नारी के इन मनोविधान का क्या जो ने चित्रनेत्रा के माध्यम स अभिनयकृत किया है और व इन मनोविधानमें पूरा सफल हुए हैं। चित्रनेत्रा के चरित्र की जगहविषा म एक अद्भुत मनोविधान निहित है। उपर्युक्त मनोविधानमें स्पष्ट हा जाता है कि मैं तुमसे प्रेम करने आई हूँ।' कहने वाली चित्रनेत्रा विरन्त यागी का साधना के विफल होने पर उसकी भक्तना करती है यह अस्वाभाविक नहा है। ज्ञान के अभाव भावनेका म उमका कुमारगिरि को अपना शरीर नौपना भी अस्वाभाविक नहा है। चित्रनेत्रा के मानसिक-दृष्टि ने उमके चरित्र का अत्यन्त मनोवैज्ञानिक बना लिया है। अनेक मानवाय बुधत्ताएँ रम्य हुए भी वह पठित नहा है। चित्रनेत्रा के रचना न था वह कवन सतरी थी— यह कवल लम्बे का निगम नहा—उमके चरित्र के सम्बन्ध में अन्त म पाठकों की भा यही धारणा बनती है।

चित्रनेत्रा के उप-शान की वह पुरी है जिसके चारों ओर उमका कमान ही नहा समस्त पात्र भी चकार लगाउ हैं। चित्रनेत्रा का व्यक्तित्व बड़ा मज्ज और प्रभावशाली है। लेखक के शब्दों में कुछ इस व्यक्ति हाउ है जो दूरदर्शी की अपनी ओर आकर्षित कर सउ है जो दूरदर्शी व्यक्तित्व का आकर्षण

करके उसको दया देते हैं और उसको अपना दास बना लेते हैं। चित्रलेखा का व्यक्तित्व भी ऐसा था। धीजगुप्त और कुमारगिरि जैसे दो प्रभावशाली व्यक्तियों का उत्थान पतन चित्रलेखा के द्वारा ही होता है।

योगी कुमारगिरि वस्तुतः एक कुष्णप्रसन्न व्यक्ति है। उसकी कृष्ण एग्नम वही है जो जैनेय की मुनीता से हरिप्रसन्न की है। हरिप्रसन्न की कृष्ण का कारण है उसकी जीवन गति का स्वाभाविक विकास न हो सकना। छुटपन से ही वह अपने पिता के घर से नाता तोड़कर भाग आया और इस तरह घर उसके लिए अपरिचित हो गया। फलतः हरिप्रसन्न सदैव नारी से दूर रहा और उससे डरता रहा। नारी से वह सिक्कुड़ा रहता है। उसके सम्पर्क से दूर रहने की वह सदैव काशिश करता रहता। किन्तु इस पलायनवादी युवक की यह प्रथि तब एकाएक छिड़ककर खुल पड़ती है जब वह नारी मुनीता के सम्पर्क में आता है। यही गार्थ कुमारगिरि भी है। अतः कवन इतना है कि हरिप्रसन्न जहाँ क्रांतिकारी है वहाँ कुमारगिरि यागी है। किन्तु दोनों की कृष्ण एग्न ही है। कुमारगिरि भी स्वाभाविक जीवन से पलायन करता रहा और नारी से डरता रहा। श्री अधकार है मोह है माया है वासना है। यह उसकी धारणा है और इसलिए वह नारी के सम्पर्क तक से बचता रहा। वासना पाप है जीवन को बलुपित बनाने का एकमात्र साधन है। इसलिए वह उहे उत्पन्न होने देना भी पाप समझता है। उसने अपनी इद्रियों को बश में कर रखा है। इच्छाओं को दबाने का तो प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि वह इच्छाओं को उत्पन्न ही नहीं होने देता। किन्तु जीवन से भागे हुए इस व्यक्ति की प्रथि तब एकाएक खुल जाती है जब वह नारी चित्रलेखा के सम्पर्क में आता है। तब उसकी धारणा बदल जाती है। वह कहता है : 'आज मैंने एक नयी बात सोची है देवि चित्रलेखा ! विराग मनुष्य के लिए असम्भव है क्योंकि विराग नकारात्मक है। विराग का आधार शून्य है कुछ नहीं है। और वह चित्रलेखा को पाने के लिए शठ तक बोलता है। प्रथि के खुल जाने से एक ही चोट में वह देवत्व के उच्च शिखर से गिरकर पशुवत् आचरण करता है। उसने अपनी आत्मा का हनन उस सीमा तक किया है कि फिर परिस्थिति का सामना करने की सामर्थ्य उसमें बिल्कुल नहीं रहती। विषम परिस्थिति से टकराकर एक बार में ही उसका सारा अहंकार चूर चूर हो जाता है उसकी बर्षों की साधना मिट्टी में मिल जाती है।

कुमारगिरि के इस पतन के सम्बन्ध में प्रायः लोग यह प्रश्न उठाते हैं कि कुमारगिरि का पतन लिखाकर लेखक ने भारतीय संस्कृति और अध्यात्मवादी

पर कृत्तरापात किया है। किन्तु यह कथन भ्रातिपूर्ण है। हमारे महीं सर्व स निवृत्ति माग और प्रवृत्तिमाग को लेकर वा विवाद हाता रहा है। भिन्न भिन्न प्रवृत्ति क व्यक्ति इनम से एक माग को अपनात आम हैं। अपना-अपना दृष्टिकोण है। यहीं भी लखन ने किसी दशन की खिली नहा उटाई है। इसक द्वारा उसने केवल अपना मवा क अति वाणी दशन पर अनास्था प्रकट की है। उसस ध्वनित लेखक का स्वर यही है कि जीवन म सनुवन बना रसन क लिए मनुष्य का अपनी भावनाया तथा च्छाजा स महभाग करना आवशक है। यही जीवन-दशन वतमान परिस्थिति म हमार लिए उपमाग है, उभयुक्त है।

चित्रलता का नायक बीजगुप्त लखन क जीवन-दशन का प्रतिनिधित्व करता है। यह उन्म्याम का मन स स्वस्थ पात है। इसके मन म बाद कुष्ण या यथि नहा है क्यकि इनका विनाम जीवन की स्वाभाविक गति क साथ हुआ है। उसने जीवन स महभाग कर लिया है। उसम सभी माननाम गुण और अवगुण हैं। चित्रलता स वह प्यार करता ह उस काम-वाचना की वन्तु नहा समता। वह एक अत्यन्त म्बच्छ ह्य का मानव है। उनम धन-वप, छिनाव-दुराव की प्रवृत्ति नहा है। एक स्थल पर वह स्वय कहता है 'मर जीवन की काई बात गुप्त नहा है। गुप्त वे बातें रखा जाती हैं, जो अनुचित हाती हैं। गुप्त रचना भय का चोतक है और भयमात हाना मनुष्य क अपराग होने का चोतक है। मैं जा करता हूँ उस उचित समझता हूँ। इसलिए उस कभी गुप्त नहीं रखा।' स्पष्ट है बीजगुप्त की अतरचेतना निमल है। लोक की दृष्टि म अविवाहित हाठ हुए भा वह अपन का विवाहित समझता है। वह कहता है 'चित्रलता मरी पत्नी है यद्यपि चित्रलता का पणिग्रहण मैंने शास्त्रा नुसार नहीं किया है, और समाज के नियमों के अनुसार कर भा नहा सता हूँ फिर भी मेरा और चित्रलता का सम्बन्ध पति और पत्नी का-सा है। मैं प्रेम म विश्वास करता हूँ। और अन्त तक उनका प्रेम पवित्र और स्थायी बना रहता है। यशापरा की आर उनका आर्षित हाना प्रेमजन्य न होकर ईष्याजन्य है। यह जानकर कि चित्रलता उस छारने क बाद प्रसन्न है वह यशापरा से विवाह करने का निश्चय कर लाता है। किन्तु उसका यह निश्चय धर्षित ही रह जाता है, जब वह चित्रलता स बला सने की भावना त्याग दता है। वन्तुत धात्रगुप्त का प्रेम एरनिष्ठ और शाशवत है।

प्रम क दोन में ही नहीं, मानवता क दोन में भी धात्रगुप्त का ह्य विश्वास है। व्यक्ति-स्वातन्त्र्य वह अनेक लिए ही नहा चाहता दूसरों की भा दता

है। वह जानता है कि प्रेम करने का जितना अधिकार उसे है उतना ही श्वेतांक को है। दूसरों के सुख में घायक होना—बैवल अपने सुख की आशा कायरता है नहीं नीचता। मैं अघाय कर रहा हूँ दूसरा के साथ और स्वयं अपने साथ भी। हमारे हिस्से में सुख और दुःख दोनों ही पद हैं—हमारा कर्तव्य है कि हम दोनों को ही साहमपूर्वक भागें। अतएव बीजगुप्त जिस जीवन-दर्शन का लक्ष्य बनता है वह अत्यन्त स्वस्थ है। वह परिस्थितियाँ का दास नहीं है परिस्थितियों पर विजय प्राप्त करने की सामर्थ्य भी रखता है। इसी स्वस्थ दृष्टिकोण का परिणाम है कि बीजगुप्त का आचरण कभी उच्छ्रद्धाल नहीं होने पाता।

कुमारगिरि और बीजगुप्त जैसे विरोधी प्रवृत्ति के पुरुषों के कारण चित्रलेखा के पात्रों में उत्कट मानसिक तनाव उत्पन्न हो गया है। चित्रलेखा इन दोनों विरोधी वृत्ति वाले व्यक्तियों के सम्पर्क में आती है और ये व्यक्ति चित्रलेखा के प्रभावशाली व्यक्तित्व के सम्पर्क में। फलतः इन तीनों में सघर्ष और हृदयान्दोलन के अनेक क्षण आते हैं जिससे इनके जीवन में उतार-चढ़ाव के नये माड आप ही आप आ जाते हैं। इस मानसिक तनाव और सघर्ष को समाप्त करने के अग्रतपूर्व कौशल से चित्रित किया है। इससे उनकी मानव मन का परखने की सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि का पता चलता है।

चित्रलेखा में लेखक ने आन्तरिक सघर्ष के क्षण वहाँ उपस्थित किये हैं जहाँ दो विरोधी वस्तु या भाग में से एक को छाड़ दूसरे को ग्रहण करने का प्रश्न उठता है। सबसे पहला चित्रलेखा में मानसिक सघर्ष आरम्भ होता है और यन्ने अम पात्रों में भी आन्तरिक तनाव उत्पन्न करने का साधन बनता है। अतर्मन को जिस मनोवृत्ति के कारण चित्रलेखा कुमारगिरि की ओर आकर्षित होती है उसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। मन की उस असाधारण अगति के कारण वह कुमारगिरि से प्रेम अवश्य करने लगती है किन्तु बीजगुप्त का प्रेम उस अपने इस निष्पक्ष से बार-बार विचलित करता है। 'कुमारगिरि की कुटी में पहुँच जाने के बाद भी एक बार उसकी इच्छा हुई कि वह उठ खड़े हो और बीजगुप्त के साथ चल दे पर वह एकाएक रुक गई। वह बहुत दूर चली आयी थी उसका पीछे जाना असम्भव था।

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कभी-कभी ऐसे क्षण आते हैं जब वह दूसरा का ही धोखा नहीं देता अपने से भी आत्म प्रवचना करता है। चित्रलेखा कई बार ऐसी परिस्थितियों में गुजरती है। चित्रलेखा कुमारगिरि से प्रेम करने लग गयी इस बार अपने प्रेम के आधार—बीजगुप्त के उपस्थित रहते हुए।

इसलिए चित्रलेखा को कुमारगिरि के पास जाने का साहस नहीं हुआ था। पर मृत्युञ्जय के भवन के उत्सव की बाल ने उसे साहस दिया, साहस के साथ मनुष्यता को घोषा देने का एक वहाना भी दिया, उसने मन म कहा वीज गुप्त को सुखी बनाना भरा कतव्य है उसे मुक्त कर देना ही मेरा महान् दायग होगा और उसके जीवन का मायक बनाना होगा। मुझे वीजगुप्त को छ्द्र हा प्नेना पड़ेगा सदा क लिए छ्द्र देना पड़ेगा।' किन्तु जब उस कुमारगिरि का प्रेम मिन जाता है तत्र भा उन् सत्ताप नहीं हाता और फिर से वीजगुप्त को पाना चाहती है। यहाँ फिर स एक बार उमम मानसिक सघष क क्षण आन है और नाच और श्रुठे पशु वामना क काठ कह कर वह कुमारगिरि ना भी छोड़कर बली जाती है।

नारी का कुमारगिरि और वीजगुप्त के जीवन में आना एक बचकर उरस्थित कर दता है। ससार स विरक्त और आत्मा का हृनन करने वाला योगा कुमारगिरि इन्धियों का दाम बन जाता है। चित्रलेखा को अपने मामन पाकर सहसा वह साकार की पूजा करने लग जाता है। यहाँ जलक न कुमारगिरि का मानसिक सघष नहा दिखलाया और यह उचित है क्योंकि एमी प्रतिक्रियाण सहसा हुआ करती है।

किन्तु चित्रलेखा के इस कथन स कि 'गुरुदेव, आन भाग-व्युत हो रहे हैं— आप अपनी साधना स विरत हा रह है।' कुमारगिरि के हाप का बन्धन टूट गया। वह चौक कर पीछे हट गया। उनकी आँखा का पागलपन एक क्षण म ही लप हा गया। उनका मुख पीला पठ गया—'अरे, मैं क्या कर रहा था।' कुमारगिरि कह उठे— मुझे मया करना देवि, इम आचरण क घाट ही उनमें मानसिक सघष के क्षण आत है। कुमारगिरि कुत्ती मे बाहर निकल कर मुन मदान म घूमने लगे। कुछ देर पहले उनका शरार जल रहा था अब उनका मस्तिष्क जल रहा था। पहली जलन म मुग था दूसरी जलन म इ ल था। इन काय-मेत्र से ओर अपनी साधना से वे दुरी तरह से गिर रह थ। अपनी नियतना पर विजय पाना उनका कतव्य था।

मामने गहरा अथकार था। पीछे पाटलिपुत्र के दीपक टिमटिमा रहे थे। कुमारगिरि क पैर उस अथकार का और उठ गये— नहा मरे लिए अपने का रोकना अगम्भव है गिरना अतिवाय है। अपन का बचाना हा हागा। वे यह कह उठे। क उम समय तक अपनी कुत्ती स कानी दूर निकन आवे थे।

एकएक उनके अन्दर से किमी ने कहा— क्या तुम कायर नहा हो ?

उन्होंने पूछा—'क्यों ?

उत्तर मिला— तुम वहाँ जा रहे हो ? अपनी निरलता पर विजय पाना ही तो सबसे बड़ी साधना है । जब तक तुम स्वयं अपने को जीत नहीं लेते, जब तक तुम अपूण हो, इमोलिण ता चित्रलेखा तुम्हारे पास आयी है कि तुम अपने पर विजय पाओ । क्या तुम चित्रलेखा से भय खाते हो ? निरलता तुम में ही है उम दूर करो । साधना तुम्हारे पास ही है, तुम जाते वहाँ हो ?

कुमारगिरि रूठ गये ।

तो फिर ऐसा ही मही— उन्होंने धारे से कान और वे अपनी कुटी की ओर लौट पड़े ।

यह निश्चय पर वे अपना हृत्पान्दोष रोकना चाहते हैं । किन्तु उहे सफलता नहीं मिलती । इस बीच कुमारगिरि ने अपने को समत रखा किंचित कमजोरी का भी प्रदर्शन उन्होंने न होने दिया । कुछ दिनों के लिए उनका यह विचार हो गया कि वे चित्रलेखा को अपने पास रखते हुए भी विषय-वासना को दूर रखने पर यह भावना स्थायी न रह सकेगी । एक बार जो आग प्रज्वलित हो चुकी थी वह आहुति माँग रही थी । कुमारगिरि अपने निश्चय पर दृढ़ न रह सके । और कुमारगिरि का मानसिक सघप एक बार फिर उत्तेजित हो उठता है । कुमारगिरि को चित्रलेखा के व्यवहार से अधिक आश्चर्य अपने व्यवहार पर हुआ । उसने चित्रलेखा को अपने से दूर रखने का भरसक प्रयत्न किया था । फिर उसने क्यों चित्रलेखा को स्वीकार कर लिया था ? क्या इसलिए कि वह अपने अविश्वास को दूर करना चाहता था ? कुमारगिरि का क्षेत्र विजय का था—पराजय की भावना उसके लिए नहीं थी । शायद कुमारगिरि को अपनी कमजोरी का पता था—उसी कमजोरी को दूर करने के लिए ही उसने चित्रलेखा को स्वीकार किया था । उसने प्रयोग किया वह असफल रहा । असफलता भी वितनी भयानक थी ? वह अपने से तो हारा ही वह हारा एक साधारण नर्तकी से—स्वयं अपने से पराजित होने पर उसे दुःख था पर उम दुःख की भावना को नर्तकी से पराजित होने पर क्रोध की भावना ने दबा लिया । कुमारगिरि बह उठा— नहीं नर्तकी चित्रलेखा को बश में करना ही होगा । पर किस प्रकार ?

और यह मानसिक सघप एक दूसरी करवट नेता है । वह नीचे आचरण पर उतर आता है । चित्रलेखा को वीजगुप्त की ओर से विमुख कर उने स्वयं पाने के लिए उससे झूठ बोलता है ।

इस प्रकार कुमारगिरि का मानसिक संघर्ष बड़ा स्वभाविक है। ब्रीजगुप्त में मानसिक द्वन्द्व की सम्भावनाएँ कम हैं, इसलिए लक्षक का उल्लास हृन्मानस-निधान का अवसर भी कम मिला है। ब्रीजगुप्त का द्वन्द्व जो कुछ हुआ है वह यशासदा और चित्रलला का लहर हुआ है। किन्तु इस द्वन्द्व की सम्भावनाएँ भी कम हो जाती हैं, श्वेतक व यशासदा की आर आकर्षण और चित्रलला व प्रति ब्रीजगुप्त व अशुष्क प्रेम व कारण। वस्तुतः ब्रीजगुप्त एक फ्लैट (Flat) चरित्र है, जो अप्रत्याशित आचरण कर ही नहीं सकता।

जहाँ तक चरित्र चित्रण शैली का प्रश्न है चित्रलला में उत्सव-धी प्रौढता नहीं है। चरित्रों से पाठका का प्रथम परिचय ब्रजजी इन विस्तार से करा दत्त है कि फिर उनके सम्बन्ध में कुछ और जानना अवशेष नहीं रह जाता। रत्नाम्बर विशानन्द और श्वेतक का कुमारगिरि तथा ब्रीजगुप्त का परिचय दत्त हुए उनके चरित्रों की तमाम विशेषताएँ एक बार में ही बता दत्त हैं। पर फिर भी लक्षक को जैसे इससे सतर्प नहीं होता और वह अपना आर से भी उनका विस्तृत परिचय दे बैठा है। कुमारगिरि व व्यक्तित्व का अनावश्यक परिचय दत्त लक्षक ने विषय की पुनरावृत्ति हो नही पाठका का अनुभवता भी समाप्त कर दी है। रत्नाम्बर एक बार पहले कह ही चुके होते हैं कि कुमारगिरि योगी है उसका दावा है कि उसने संसार की समस्त वामनाथा पर विजय पा ली है। संसार से उसका विरक्ति है और अपन मठानुसार उसने मुक्त को भी जान लिया है, उसमें तज है और प्रताप है उसमें शारीरिक बल है और आत्मिक बल है। जैसा कि लोगों का कहना है उसने ममत्व को बशाभूत कर लिया है। कुमारगिरि युवा है पर मौन और विराग ने मिलकर उसमें एक अनीति-शक्ति उत्पन्न कर दा है। समय उसका सारन है और स्वयं उसका सत्य।' सब लक्षक का अपनी ओर से यह बताने की क्या आवश्यकता रह जाती है कि 'कुमारगिरि पापा था। हाँ, क्योंकि उसने संसार छूट लिया था। और शत्रुओं व हर-केर शत्रु वह बड़े पृष्ठों में फिर बही दुहराता है। कथाविद् भावुक कवि-लेखक शत्रुओं का इन्द्रजाल बुनने का नाम संवरण नही कर पाया।

फिर भी कहा-कहीं पात्र व जीवन का परिचय-मह विवरण उसका मना-निधान का समझने में सहायक सिद्ध हुआ है। चित्रलला के विगत-जीवन का सगमग ढाई पृष्ठों का विवरण हमें उसके चरित्र की अद्युक्ति और मनाप्रिय का समझने में सहायता पहुँचता है। इस प्रकार जहाँ-कहाँ बर्नाबा न पात्र का

मानसिक सघप स्थाने के लिए उनके मनोविचार और मनोशांति का अपनी आर से विश्लेषण किया है वहाँ चरित्र चित्रण में गरिमा आ गयी है ।

जहाँ वही पात्रों को आत्म विश्लेषण का अवसर मिला है वहाँ उन्होंने उसे सचाई से अभिव्यक्त किया है । विशेषतः चित्रलेखा और बीजगुप्त के आत्म विश्लेषण बड़े महत्वपूर्ण हैं । बीजगुप्त के जीवन से चित्रलेखा एकाएक चली जाती है तब उसकी मन स्थिति किस प्रकार की हो जाती है उसे वह स्वयं व्यक्त करता है बीजगुप्त को अपने ऊपर आश्चर्य हुआ । वह बिना अपनी इच्छा के जाने हुए यशोधरा को आर आर्कषित हाना जा रहा था—और सम्भवतः वह यशोधरा को अपना भी लेता यदि उस दिन श्वेताक की मुद्रांकित भावनाओं ने उसको सावधान न कर दिया होता ।

वह काशी आया था अपने दुःख को भूलने के लिए अपनी हलचल को दूर करने के लिए । पाटलिपुत्र में रहकर चित्रलेखा के निवृत्त रहकर अपने ऐश्वर्य की परिस्थितियों में रहकर उसके हृदय का घाव अच्छा नहीं हो सकता था पाटलिपुत्र में उसने यही सोचा था । यही सोचकर वह वहाँ से निकला था—विराग की भावना उसे वहाँ खींच लायी थी । एक लक्ष्यहीन पथिक की भाँति वह घर के बाहर निकल पड़ा था ।

लक्ष्यहीन पथिक ? बीजगुप्त की विचारधारा बतल गयी । बीजगुप्त ने फिर सोचना आरम्भ किया— मैं कल पाटलिपुत्र चला रहा हूँ । क्या ? वह सोचने लगा— चित्रलेखा से मिलने के लिए चित्रलेखा को अपने यहाँ खींच लाने के लिए । उसे अपने ऊपर विश्वास था वह जानता था कि यदि वह हठ करे तो चित्रलेखा उसका विराध न करेगी— नहीं चित्रलेखा के पास अब न जाऊगा, क्या जान ? क्या मैंने चित्रलेखा का ध्यान है ? नहीं चित्रलेखा ने मुझे छोड़ा है । यह क्या ? सम्भवतः यही विधि का विधान है । मुझे अपना कर्तव्य करना चाहिए—मेरा कर्तव्य क्या है मैं पैदा हुआ हूँ कर्म करने के लिए । मेरा कर्तव्य है कि मैं गृहस्थ जीवन यानीत करूँ सम्भवतः चित्रलेखा मेरे जीवन से इमीलिए चली गयी है । विवाह करूँ—एक धार गृहस्थी का अनुभव करूँ । और विवाह के योग्य पात्रों में है यशोधरा । सौंदर्य में चित्रलेखा से यशोधरा कितना भी अशक्त कम नहीं है । फिर यशोधरा ही सही । पर क्या सम्भव है ? मैं एक धार यशोधरा को अम्बीकार कर चुका हूँ । नहीं—सम्भव । अब यशोधरा से विवाह की बात नहीं सोच सकता बल्कि विलम्ब हो गया है—बल्कि विलम्ब हो गया । चित्रलेखा वस चित्रलेखा ही मेरे जीवन में है ।

कथानकथनों के माध्यम से दूसरे पात्रों द्वारा भाषण न चरित्र की मनो-
वृत्ति और आचरण का विश्लेषण कराया है। कुमारगिरि चित्रनमा की मन-
स्थिति का उद्घाटन करता है और चित्रनमा कुमारगिरि के 'मनाविकारा' का।
चित्रनमा जब कुमारगिरि के पास आ जाती है और स्वयं से आत्म-ध्वनना करके
कहता है कि मैं विराग का जीवन बिताने आया हूँ तब कुमारगिरि उसके मयाय
मनाभाव का प्रकाशन यह कह कर करता है कि नतकी मच कहना। मैं
तुमसे झूठ नहीं बोलता हूँ, कहता हूँ कि मच कहना, तुम क्यों क्यों आया हा ? क्या
बान्धव में तुम जान प्राप्त करना चाहती हा ?

चित्रनमा की निम्न भाव हूँ। उसने कुमारगिरि की ओर दया समक नत्र
कुमारगिरि के मत्रा से मिल गया। उनसे शान्त भाव से उत्तर दिया— मागी।
अपना विराग और पराजय को अवहनना करके एक बार तुम मुझसे मच बान-
ध। मैं भी तुमसे मच हा कहूँगा—मैं तुमसे प्रेम करने आया हूँ।

निरपेक्ष और उदास होने का सवाँ चित्रनमा में नहीं के बराबर है।
सवाँ में कोई उद्देश्य अवश्य निहित है। या तो वे चरित्र प्रकाशन में
मन्यकर हुए हैं या फिर स्थिति चित्रण में। अन्त में स्थिति पर उन्होंने क्या क-
रिबरे मूपा की भी जान है। तब ओर दशन से बाधित हान पर भी सवाँ
में रावण की कमी नहीं है। यशाधरा और बाजगुप्त के वाटिका का म-
त ओर दशन से मुक्त हान पर भी विचने रोचक हैं। यशाधरा ने हाथ में
फूल ल बाजगुप्त को बुलाया—'आय बाजगुप्त दना—प्रकृति के इन मुन्दर
में की ता गया। यहाँ विचने उन्नास है विचने शान्ति है, और विचने सौम्य
है। सार जगत् की विचने तुष्णा और अनिगात से गरा हनचल में दूर अति
दूर यहाँ पर निष्पन्न जीवन विजलिमा के रगीन परा के सामे अठमनिर्वा खन
रहा है।

बाजगुप्त पास आ गया। वह यशाधरा के पास में गया। उसने
एक बार अपने धारा और दया—'देवि यशाधरा मुझे ता प्रकृति में कोई
मुन्दरता स्थिताया मच देती।

'प्रकृति में आरका कोई मुन्दरता नहीं स्थिताइ दता ? यशाधरा ने आचम
चरित मत्रा से बाजगुप्त का दना—आय बाजगुप्त क्या आय मच कर रहे हैं
या हसी कर रहे हैं ? 'हृषा नहीं कर रहा हूँ कि। मैं मच कह रहा हूँ। तुम
कह रहा हा कि प्रकृति मुन्दर है, मुझे प्रकृति कुल स्थितानी देती है।

यशाधरा बाजगुप्त की बात मानने की ऐमार न थी—आय बाजगुप्त
दना। यह पूर्वान किचने कोमल है, किचने मुन्दर है। मरी तो दया होती

है कि मैं यही द्रम दूर्वात्ल पर रहूँ यहाँ बैठूँ और इसी पर विश्राम करूँ । 'हाँ प्रकृति अनूण है । प्रकृति के अनूण होने के कारण ही मनुष्य ने कृत्रिमता की शरण ली है । दूर्वात्ल कोमल है गुन्डर है पर उमम नमी है, उमम कीड़े मकोड़े मिले हैं । इसलिए मनुष्य ने मखमल के गढ़े बनवाए हैं प्रकृति मनुष्य की मुविधा नहीं देखती इसीलिए वह अनूर्ण है ।'

चित्रलेखा के कथा प्रवाह का गति देने में उमकी भाषा का महत्वपूर्ण योग है । भाषा में चित्रात्मकता और कवित्व की मात्रा इतनी अधिक है कि पाठक उस धारा प्रवाह में बहता चला जाता है । पाठक की भावात्मक संवेदना भाषा की सरसता से उभरती चली गयी है । इसीलिए चित्रलेखा में उसके कथा संगठन की कतिपय कमियाँ को देखते हुए हम अनुभव होता है कि लेखक कथा बुनने या कथा निर्माण में इतना निपुण नहीं है जितना कथा कहने में । कथा कहने का उसका ढंग निराला है ।

अन्त में चित्रलेखा के सम्बन्ध में एक बात अवशेष रह जाती है । वह यह कि जहाँ चित्रलेखा का विषय उसकी समस्या का समाधान उसका कला-सौष्ठव आधुनिकता तथा नवीनता लिए हुए है वहाँ उमके अन्त के प्रति पाठक शकानु हो उठता है । ऐसा प्रतीत होता है कि लेखक की दृष्टि अत्यन्त आधुनिक होती हुई भी उसके संस्कार पुरातन हैं जिसके फलस्वरूप चित्रलेखा 'सु और कु को निश्चित परिधि से बच नहीं पायी है । पाप और पुण्य का निराकरण करते हुए भी जैसे लेखक भारतीय कर्मवाद को अपनाकर इन दोनों की प्रतिष्ठा बनी रहने देता है । माना कि बीजगुप्त को उसने पापी नहीं ठहराया माना कि कुमारगिरि का पतन परिस्थिति दश होने के कारण पाप नहीं है, फिर भी जैसे कृति में एक स्वर ऐसा है जिसे लेखक पाठकों से छिपा नहीं पाता । अच्छे कर्म का जन्मा फल दिवाकर लेखक अनायास ही अपने निराकरण वाली वस्तु को पुनः स्थापित कर देता है । क्या यह आवश्यक है कि बीजगुप्त को चित्रलेखा फिर से मिल ही जानी चाहिए ? या अपने परिताप और प्रायश्चित्त की ज्वाला में जलकर चित्रलेखा का चरित्र निखर हो आये और बीजगुप्त उसे क्षमा कर दें ? न तो यह अन्त उपन्यास के प्रधान के स्वाभाविक विकास से प्राप्त होता है और न विषय वस्तु के वास्तविक समाधान से । यह लेखक की अपनी दृष्टि का परिणाम है जिससे यह सिद्ध हो जाता है कि लेखक यहूतचित्त आदर्शवाद से बच नहीं पाया है ।

तीन वर्ष (१९३६)

चित्रनवा की ख्याति ने बर्मा का वह खिच उपन्यास लखन में बसायो ।
 लाहौर आकर अब वह एक दूसरे समाज से परिचित होत जा रहे थे । वहीं
 विद्यार्थी-समाज उनका मामला था । उनका प्रकृति विशेषताओं और विविध
 ता व अब तक बसत कुछ समझ चुके थे । दूसरे स्वयं भा उस विद्यार्थी-समाज
 का भाग होने और अर्थात् सदा में पढ़े जाने के कारण इस समाज से उनका
 भावना-मत्त लगाव भी हो गया था । फलतः उपन्यास रचना के लिए अब उन्हें
 एनि-विश्व दृष्टि में नया दृष्टि पड़ी । यद्यपि विषय वही 'चित्रनवा' वाला
 रहा किन्तु अब उन्होंने उसके विभिन्न पानुओं का ना लिया । चित्रनवा की
 भाँति तीन वर्ष का समय विशुद्ध सामाजिक न होकर अत्यन्त ही है ।
 इसीलिए समय अर्थात् मुद्रा ही है । इनके अतिरिक्त चित्रनवा में
 लखन जिस जात्या में हुआ हुआ था तीन वर्ष में उसकी आस्था कम हो गया ।
 दूसरे शब्द में लखन में अन्तर्गत का भाव हो गया ।

समस्या का आरम्भ उम्र से प्रस्तुत करने के लिए लखन ने बसा मुद्रा
 कथित निमित्त किया है । जिस प्रकार राक्षस इतिवृत्त का संपादन समाजी
 चित्रनवा में का था, वही ही राक्षसता हमें तीन वर्ष में मिलता है ।
 समस्या का तो के माध्यम से मुद्रा-मत्त रूप में लखन की भा उनमें प्रकृति
 रही है जिससे उनका अभिप्राय अर्थात् से अर्थात् स्पष्ट हो रहा । तीन
 वर्ष में उन्होंने ऐसा ही प्रयोग किया है । यद्यपि वह विद्या का रूप, तब
 की प्रकृति लखन 'चित्रनवा' में कम है । प्रस्तुत उपन्यास में समस्या का अर्थात्
 उन्मूलन के लिए उन्होंने दो विपरीत स्तरों और विरोधा प्रकृति के पात्रों का
 रखा है । एक ओर अतिरिक्त एसा पात्र है जो 'उन्मूलन' का व्यक्ति है और दूसरे
 विद्या का अर्थात्-बड़े शब्द जैसे-जैसे समाज का जीवन संश्लेष कर चुका
 है । जो जीवन में अर्थात् अनुभव रूप है जो जो जानता का परम है ।
 दूसरा जो लखन एसा पात्र है जो निम्न मध्यवर्ग का व्यक्ति है जो लखन
 अन्तर्गत का रक्षा शब्द में विद्या प्राप्त करने के लिए बड़े शब्द में आया

है। वह अबोध है जिसका एक मात्र लक्ष्य विद्याअध्ययन मात्र है नतार के मनोरंजन और प्रीडाआ में जिसे कोद रुचि नहीं है। जब ये शाना विराधी मस्कार और सामाजिक स्तर में व्यक्ति परस्पर सम्पर्क में आते हैं तो बड़ी अजीब स्थिति उत्पन्न हो जाती है। अजित रमेश में ममार में भावपन की उसकी सरलता की और उसकी कोमलता की एक मूर्ति दगना है। हृदय की वह स्वच्छता देखता है जो सम्पना के वानावरण में नाव दग्ने पर नहीं मिलती। और रमेश उच्चवर्ग के स्वच्छ वातावरण में उमकी निरन्तरता में एक प्रकार का सम्मोहन अनुभव करता है जिसमें वह बरतम लिपटता चला जाता है। इस वर्ग के जीवन को देख उममें भी महवाशानाए जाग्रत हो उमती हैं। फलतः वह अपनी वास्तविक स्थिति को भूलकर अपनी परिधि को लापकर उच्चवर्गीय जीवन में घुल भिन जाने का दुम्माहम करता है और अपने आवरण में बसे ही रग-ढग अपना लेता है। किन्तु उसके विश्वास और सस्कार तो अपने वर्ग वान ही रहते हैं जो उसका पीछा नहीं छोड़ते। फलतः स्थिति बड़ी दुविधापूर्ण हो जाती है। वह न तो अपने वर्ग की विशपताआ को छोड़ पाता है और न ही दूसरे वर्ग को पूणतया अपना पाता है। इसका परिणाम बड़ा बुरा होता है। जब उच्च वर्ग का अह उससे आकर टकराता है तो जैम उसके जीवन में एक विस्फोट हो उठता है। उसका विश्वास धूर धूर हो जाते है उसकी आस्था हिल उठती है। और तब वह समाज के प्रति ही नहीं अपने प्रति भी बटु हो उठता है। यह आघात रमेश को लगता है—अजित द्वारा नहीं—प्रभा द्वारा जो उच्च मध्यवर्ग की आधुनिक युवती है रमेश जिससे प्रेम करने लगा था। और यहाँ हम उच्चवर्ग के दा भिन प्रवृत्ति के व्यक्तिया की तुलना करने का अवसर मिलता है। अजित अपने वर्ग की समस्त मुविधाओ हास विलास का उपभोग करते हुए भी विशान हृदय व्यक्ति है। वह अपने वर्ग की कमजोरियो से परिचित है और इसलिए जैम उस परिनाप में ही वह रमेश को अपना मित्र बनाकर अनेक सुख-मुविधाए देता है। किन्तु प्रभा की प्रवृत्ति दूसरी है। वह अपने वर्ग की जीती जागती तस्वीर है। हास विलास ही उसका जीवन है। उसके लिए प्रेम खेल और मोज की वस्तु है इससे अधिक कुछ नहीं। इसलिए निघन रमेश को वह यह कहकर ठुकरा देती है कि विवाह को मैं स्त्री और पुरुष के बीच में आर्थिक सम्बन्ध के रूप में मानती हूँ। यह सुनकर विशुद्ध प्रेम के सम्बन्ध में रमेश की जो सात्विक धारणा थी वह धूर-धूर हो जाती है और वह अपना मानसिक सतुलन खो देता है।

प्रस्तुत उपन्यास के पूर्वादि की यही कथा है। कथानक आकर्षक है इसमें कोई मदेह नहीं। किन्तु उपन्यास के इस भाग की अपनी कुछ कमजोरियाँ भी हैं। सबसे पहली तो यह कि इस भाग में रमेश की अपेक्षा अजित प्रमुख पात्र प्रतीत हान लगता है और हम यही आशा रखते हैं कि वही इस उपन्यास का नामक होगा। रमेश उमक सामन फीका पाना और व्यक्तित्वहान मा लगता है। या हम यह भी कह सकते हैं कि अजित क प्रखर व्यक्तित्व के सामने रमेश का व्यक्तित्व छिप गया है। प्रभा का प्रभावशाली अजित की आर आकर्षित न हाकर, रमेश की ओर आकर्षित हाना ऊपर स कुछ विचित्र मा लगता है। किन्तु यह अस्वाभाविक नहीं है। एक तो जब अजित को मालूम हाता है कि रमेश प्रभा स बुरा तरह प्रेम करता है ता स्वयं उस आर से हट जाता है। इसक प्रतिरिक्त प्रखर बुद्धि म रमेश सब विद्यार्थियों स आगे है इसलिए प्रभा का उनकी आर आकर्षित हाना अस्वाभाविक नहीं है। फिर कर्णाबि प्रभा क अन्तमन में रमेश की ओर आकर्षित हाते समय यह बात भा उठी हागी कि जहाँ अजित उसे अपन इशारे पर नवायगा वहाँ रमेश उसने इशारे पर नायेगा।

किन्तु प्रभा का रमेश की आर आकर्षित हाना ही रमेश का महत्त्व देने के लिए यथेष्ट नहीं है। वस्तुतः प्रथम खण्ड तक हम यह निश्चय नहीं कर पाते कि उपन्यास का नायक अजित है या रमेश। लेखक कथानक तक म रमेश को प्रमुखता देने म असमर्थ रहा है। सम्पूर्ण कथानक रमेश के चारु आर नहीं, अजित क साथ-साथ धूमता है। पहले छठ के आठवें नवें और दसवें परिच्छेद की कथा का केन्द्र अजित ही है रमेश नहीं। अजित और सीता को प्रणय-श्रीडा का प्रथम देने के निमित्त ही लेखक प्रभा क जन्मदिन का उत्सव और मुन्नावनी रात म अजित, सीता और अविनाश का भ्रमण लिखा है। लेखक क सतता तथा अजित एवं रमेश की परस्पर बातचीत स यह अवश्य प्रतिभासित होता है कि रमेश और प्रभा में प्रेम का आगमन प्रदान हो रहा है किन्तु इसका क्या एक भी चित्र हमारे सामने नहीं आता जैसा अजित और सीता की गति विधि का चित्र गता है। रमेश का लज्जशील स्वभाव इसका एक कारण अवश्य है।

तान कथ क प्रथम खण्ड म विद्यार्थी जीवन यूनियनिस्टों का उदय की सत्य निर्मा यही मसार्थ और भवहारण है। लयक ने स्वयं यह जीवन बिताया है। कर्णाबि वह उपन्यास क पात्रा क सम्पन्न में भी रहा है। फलतः उक्त चित्रण और कथन म मजबूती है। कथन म स्थानीय रंग भरकर ता उगने उपन्यास का आरपण और भी अधिक बढ़ा लिया है। कई स्थानों पर उतान बुना क प्रथम गलाह म यूनियनिस्टों बुनने क न्ति का उत्साह स कथन रिया है 'जिन्हें

कुछ लोग प्रयाग का यूनिवर्सिटी ठरिया कहते पर जन साधारण में जा मुन्न कटरा और बनलगाज क नाम से प्रसिद्ध है मान में दा महीन बिबुन उगाइ रहते हैं । इस स्थान पर चहन-पहन जोर इतना जीवन विद्यार्थियों क कारण है ।

जुलाई क प्रथम सप्ताह में ही फिर से एम स्थान पर कुछ-कुछ जानन का स्पन्दन मानूम होने लगता है । टगानगरा के चन्ने पर कुछ हूप आ जाता है सन्को पर हमी के ठहाक उरने लगते हैं और साथ ही प्रयाग की भयाङ्क गर्मी में भी वर्षा क कारण कमी आने लगती है ।

विद्यार्थियों क परस्पर वार्तानाप और उनका वानचीन के विषय तथा हाम्टल जावन की गति विधि में और विद्यार्थी जीवन मुफर हो उठा है । विशेषता यह है कि विद्यार्थियों की परस्पर बातचीत स्वाभाविक होने पर भी निरुद्देश्य नहीं है । प्रसंगवश बातचीत का जो विषय उठ खडा होता है वह अजित या रमेश के चरित्र प्रकाशन का अवसर देता है । पाप और पुण्य प्रेम और विवाह क सम्बन्ध में दाना क विचार क्या हैं और इन धारणाओं की प्रेरणा से वे कैसा आचरण करेगे या करेते हैं यह व्यक्त हा जाता है । इसके लिए वर्मा जी बडा मुदर प्रसन्न रहने हैं जिसमें वानचीन में वृत्रिमता न आ जाय । प्रेम और विवाह के सम्बन्ध में रमेश क विचार जानने क लिए लखक वृष्णानन्द नामक विद्यार्थी की सगाई का प्रसङ्ग उठता है । वह अपने पिता द्वारा चुनी हुई लडकी से विवाह कर ले या नहा इस समस्या को लेकर वह रमेश और अजित क पास आता है और तब रमेश कहता है कि प्रेम इश्वरीय है—प्रेम हा जीवन है दो आत्माओं का बन्धन है । प्रेम में ही ससार स्थित है प्रेम आदि है प्रेम अनन्त है । प्रेम ही मनुष्य का प्राण है । और फिर अजित से यह पुछवानर कि रमेश ! क्या तुम वास्तव में प्रभा से प्रेम करते हो ? लखक यन् भी उद्घाण्टित कर देता है कि रमेश प्रभा से प्रेम करता है ।

किन्तु तीन बय में एक स्थल पर वार्तानाप वान विवाद और भाषण के रूप में हो जाने क कारण अस्वाभाविक हा गया है । वृष्णभूति का भाषण मुने के वान विद्यार्थियों में विवाद विवाङ्क उरना स्वाभाविक है किन्तु उन विवाङ्क का आठ पृष्ठा में लम्बा बनाकर लखक ने नीरमता का सृजन ही किया है । यह स्थान उपयाम क कथानक में शिथिलता उत्पन्न करने का कारण बना है ।

तथापि ईम बात का अस्वीकार नहा किया जा सकता कि प्रस्तुत उपयास क पहल खड क कथानक की गति अत्यन्त तात्र है । इमक कथानक में नवीनता

एव वृत्तुह्य व्याप्त है। किन्तु उन्व्यास क दूमरे मह म लक्षक विद्या प्रकार का मार्मिकता नहीं द पाता है। यह चण्ड पूणतया शरत्चन्द्र क दिव्यास क उत्तमय वान ना पत्र वाधारित है। प्रम म निराश हा दिव्यास का भाति हा रमश शरती और दन्वागमा बन जाता ह। अनपन प्रम का प्रतिविम्ब-स्वरुप स्वाम श्रो रमश गना बनता मानसिक अनुबल का वेष्ठ है। अन्तर कवन इतना है कि जहाँ दिव्यास स्वय बनन इन परिणाम का उत्तरणाया है वहाँ रमश की परिस्थितिया उसका दुगति का उत्तरणाया है। जहाँ दिव्यास की प्रमिता पारा प्यार, त्याग और ममता का मूर्ति है वहाँ रमश की प्रेमिका धन का गुनाम है। इन अन्तर क अतिरिक्त दिव्यास और तान वष क इस सण्ड तान क्यातक में काइ भिन्नता न्हा है। दिव्यास जिस भाति बरषा चन्द्रमुखी का आमान और प्रतापना करता है ठान उसी आशय क वाक्य बहुकर रमश बरषा सराज का तुलागता है। अद्भुतल दिव्यास का चन्द्रमुखी प्यार करन लगती है वैस हा सराज रमश का प्यार करन लगता है। दिव्यास क मन क विद्या वान म विम नाति चन्द्रमुखी क निष् प्यार उनहन लगता है रमश क हृष्य म ना ऐसा हा कुट्ट हाता है। दाना का कहानी क अन्त मन हा भिन्न भिन्न हा, किन्तु उसक वाच वान इतिवृत्त म विचित भाव भी अन्तर न्हा है। यह अनर्थ है कि दिव्यास क अन्त म जगै मन नारा क प्रति उठता स नर उठता ह वहाँ 'तान-वष म उसक विनृणा हाता २। रमश कारण यह है कि दिव्यास का पारा प्राप्त का निमन हुआ मुठता है तान वष का प्रना आधुनिक मन्मता म पना शरीर स्वपुवता जियन अन वातावरण का तमाम विवृतिपौ योत्र है। इतना माम्प हान पर भी दिव्यास और तीन वष का सवना म अन्तर है। तान वष म मार्मिकता अदर्श है किन्तु वह दिव्यास की मन प्राप्ता का छे वानी भवदना उत्पन्न न्हा कर पाता। जहाँ तक क्या सङ्गठन का प्रश्न है पत्तन सार की अगता दूमरे सण्ड का क्या-मङ्गलन अधिक क्या हुआ है। पहच सण्ड में नाश अजित और अविनाश वाने प्रनङ्ग मवया अनावदन म न ही न्हा कह जा सकत हों किन्तु अजित का मण्वाजी में मचनऊ वाता घटना का उचल करना और मगर का मारन की कहानी गना तपा अविनाश का शर का शिखर वान की कहानी मुनाग राचक म न हा हा क्यातक में क आवदन न्हा है। किन्तु उन्व्यास क दूमरे सण्ड में क्यातक में सिद्धिवाता उत्पन्न करने वाली गानपी का अनाव है। विना क माया इनाम विहार और वाताच की हस्तों क प्रति रमश का प्रति-विम्बामय-आवरण रूप न्हा है उनक अग्नि प्रकाशन का मारन बना है।

आवारा, शराबी और वेश्यागामी समूह का चित्रण करने में वर्मा जो अत्यन्त सफल हुए हैं। इससे इस वातावरण का यथार्थ चित्र हमारे सामने आया है। दवदास में इस वातावरण का चित्रण करने के प्रति सख्त उत्साहीन रहा है। तीन वष में इस चित्रण में मजबूती और स्वाभाविकता उत्पन्न हुई है।

तीन वष के आदि और अन्त वाले भाग अत्यन्त आकर्षक हैं। कथानक लेखक के मस्तिष्क में निश्चय ही मुनियोजित है फिर भी सम्पूर्ण कथा का विकास अपना स्वाभाविक गति में हुआ है। पात्रों के आचरण का क्रिया प्रति क्रिया ने कथा विकास को अप्रमत्त किया है। जहाँ तक वस्तु विन्यास का प्रश्न है उसमें यथेष्ट कसाव है। अनावश्यक इतिवृत्त और पात्रों का निर्माण जहाँ तक हो सका है लेखक ने नहीं किया है। वह स्थिति के उसी अंश का चित्रण करता है जो कथानक तथा किसी पात्र से सीधा सम्बन्ध रखता है। संयोग तथा आकस्मिक घटनाओं का सहारा इसमें भी उमने यथा-सम्भव लिया है। किन्तु इसके संयोग और घटनाएँ वैसी नाटकीयता लिए हुए नहीं हैं जैसी चित्रलेखा और बाद के उपन्यास आखिरी दौर में हैं। इनमें कृत्रिमता का बोध हम किसी प्रकार नहीं होता।

तीन वष में यह बात सबसे अधिक खटकती है कि रमेश शहरी वातावरण और उच्च वर्ग की सम्मिता में इतनी जल्दी घुलमिल जाता है जैसे वह मत्स्य से उसका आगे रहा हो। क्या इसके लिए उसका बाह्य और आंतरिक संधर्ष दिखाना अपेक्षित नहीं है। नित्य विधिवत पूजा-पाठ और निरामिष भोजन करने वाला सीधा-सादा युवक कैसा एकाएक अण्ड गोस्त खान लगता है इस लेखक ने बड़े साधारण ढंग से अजित की हसा में उदा लिया है।

रमेश ने चाय पाठ हुए बक की तश्तरी की तरफ इशारा करके पूछा यह क्या है ?

मिठाई। हिन्दुस्तानी नहीं बल्कि जयोजी मिठाई। लेकिन मुझे बड़ी अच्छी लगती है।

रमेश ने फिर पूछा यह किमते बनाया ?

मिरे कुक ने

रमेश ने बक आरम्भ किया। अच्छी बनी है इसे क्या कहते हैं ?

इसे बक कहते हैं।

‘यही बेक है। रमरा का मानो बिच्छू ने टक मार लिया हा, कब में तो अडे भी पढत हैं ?’

हा इनम हज क्या है ?

रमरा उठ खडा हुआ। ‘आपने मुझे पहिच हा क्यों नहीं बतलाया ? आपन मुझे अडा सिनाकर भरा घम न लिमा। आप ता विनायत में प्रष्ट हा खुब हैं, तकिन मुझे आपका बतला दना चाहिए था।’

अपन खान स कहा घम भी जाता है ? अजित कुमार न आश्चय स पृथा। पर एक क्षण में ही आश्चय दूर हा गया आँखा में शगरत की चमक आ गई ता फिर गाय का मूठ और गाबर पा लना अच्छा। इस वार उसन आमने का बार सकत किया कब छाड दा। यह काश्मीर की नयी तरकारा ता सात्रा।

रमरा न चाय का प्याना रख लिया नहा में आपके पहाँ कुछ भी न माऊंगा।

अजित कुमार ने खड हाकर रमरा की ठोडी पर हाथ लगात हुए कहा भाई गलत हा गई, माफी माँगता हूँ। अब ता खाया, देखा इतना नाराज न हा।’

रमरा बैठ गया, उसन आमने खाता आरम्भ किया। यह बडा अच्छी तरकारा है इसका नाम क्या है ?

इस प्रकार खाना अजानता और बेवकूफी स पढकर रमरा यह सब खाना मास जाता है। सडकियों स बैठकर घणों बातचीत करता, मिनेमा दखना और निमित्त साइम क चकरत लगान का भी वह एक ही तिन में एमा अन्वयत हा जाता है, जैसे बचपन स बपू वैना जीवन बिताता आना हा। माना कि अजित की अवराम्ती क सामने उसकी कुछ नहा चल पाता। अजित स एक एसा आक्षय है, एसा सम्माहन है कि उसकी बार वह बरक्स त्रिब जाता है। किन्तु उाक विंग मानविक सपन न उठना सवपा अम्बानाविक है। यह मन ही हा कि यह स्वच्छ आवन और बातावरण रमरा का आशपक लगता है और इमलिए वह उस अरनाता खना जाता है। बाद में वह इस जीवन का इतना अन्वयत हा जाता है कि अरनी बाम्बविक पिपति तक उस मा नही रहती। उसन बाह्य आचार-विचार एन्म बान जात है, किन्तु उसकी आमा नही बनती। और एकनिष्ठ प्रेम पर विरवात करन वाला यह माना माना नव सुबक प्रमा स प्रेम-याचना कर डैला है। किन्तु आसा क विरतीत जब वह प्रभा

स अपमानित होता है तो उसका सारा उन्माद जाता रहता है। रमेश की मग मानसिक प्रतिक्रिया और मगस उत्पन्न अमनुलित आचरण का सगक ने बडा सफन चित्रण किया है। तीन बप या यह स्पल सगस अधिक सजीव है। प्रभा की ओर स निराश होकर उसे अजित पर प्रोध आता है जिसने उस नय वातावरण म डाल कर उसका अम्यस्त बना दिया। वह अजित की जत्र म पिस्तीन निवान उस मारने के लिए क्षपट पडता है और कत्रश स्वर म बहता है अजित तुम मनुष्य नहा हा शतान हा। मैं इम समय पागल हा गया हू और गानत हा मर पागलपन का उत्तरदायित्व तुम पर है। तुम मर जीवन म क्या आय ?

रमेश का स्वर आवेश से कांपने लगा।

मैं सुखी था—अगान क अचकार म ओर विश्वास की गो म पल रहा था मेरे जीवन म शांति थी। मैं जिस समाज मे था वह अजा था। तुमने मुझे उससे क्यों निजाला—तुमने मुझे एक सुंदर स्वग के समान समाज म निजालकर सनरक के कृत्य समाज म क्यों डाल दिया जहाँ लाग पशाभा स गए धीते हैं धन का पिचाश तहाँ सब का गुनाम बनाए हुए है। तुम्हारा यह अभिशापित समाज तुम्हारी यह अभिशापित सस्टति मुझे न चाहिए थी, मनुष्यता से निवान कर तुमने मुझे पशुता म क्यों डाल दिया ? जाने हो अजित तुमने मेरे विश्वासी को चूर चूर कर दिया मेरी आत्मा का तुमने गाा घाट दिया—यह सब तुमने किया। तुमने मेरा मानभिक हत्या की है यदि अब तुम मेरे सामने से नही चले जाते तो मैं तुम्हारी शारीरिक हत्या कर दगा।

ओर उसके मन की यह प्रतिक्रिया यगी समाप्त नही हो जाती। कानपुर जाकर भी उसे शांति नही मिलती। उसके जीवन का यह अनुभव उसे बतताता है कि दुनिया म पैसे का ही साम्राप है प्रत्येक व्यक्ति को पैसे की गुलामी करनी पडती है। ऐसी हालत म अपने ब्यक्तित्व को बनाए रखना अपने को पीडित करना है दुखा होना है। फिर वह अपने अतीत को पूरी तरह भुना देता है। वह अपनी इच्छा स अपने को गिराकर पशुवत् आचरण करने का प्रयाम करता है। इसके लिए उसे शराव पीनी पडती है जिसम वह अपनी मनुष्यता को भूल सके और नरक के कीडा के साथ जिना ग्नानि क विचर सके। व म अपना पतन अपने हाथों करता है स्वाभिमानवश अहमयतावश। प्रेम पर स उगवा विश्वास उठ जाता है और जत्र मराज कती है कि वह उमग प्रेम करती है तो उसके मन की कोमल रेखाए लोप हो जाती हैं और उमक जीवन की कटुता एवं भयानक तथा ककश ब्यग्न बनकर उबन पडती है प्रेम।

सराज ! दुनिया में प्रेम है कहाँ ? का कुछ है वह पैसा है । पैसा सब कुछ तराज सकता है—मनुष्य की आत्मा तक । तुम झूठ क्या बोलता है ?
 गया हा शक्ति है क्या ही मुक्ति है । और प्रेम—ढकामना है । आर
 इसीलिए 'प्रेम हा जीवन है' कहने वाला रमेश अनास्थावादी बन जाता है
 और सराज के मन्त्रों के कारण का दुःखदायक बना जाता है । कर्मों का ठोकर वह
 का चुका है उनमें उसमें प्रेम का पहचानने की समता नहीं रह जाती । रमेश
 के इस तरह का चरण में मनावानिर्वाता और स्वामाबिर्वाता है ।

लेकिन न अजित का सुनने रमेश के लिए परिस्थिति उत्पन्न करने के साधन
 के रूप में किया है । किन्तु उनका अपना व्यक्तित्व है, जो रमेश से कहा
 अधिक आकर्षक है । उसका आचरण अन्तःकर्म का है किन्तु हृदय का स्वच्छता
 और निरुद्धता उनका व्यक्तित्व का सबसे अधिक आकर्षक गुण है । उसका
 मायताण स्पष्ट और विचार सुव्यक्त हुए हैं । विभिन्न दशाओं और विभिन्न स्तरों के
 व्यक्तित्वों के सम्पर्क में आकर उनमें जीवन का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त कर
 लिया है और इसलिए उच्च स्वस्थ जीवन जीना आता है । लखन के शांति में
 अजितकुमार ने समारंभ दशा पा, अज्ञानता और दुःखदायी दशा का अनुभव के
 बाद अनुभव एक दूसरे के विपरीत अजित कुमार किंसा अंश में इन अनुभवों के
 प्रति उत्पन्न हो गया था । पर उसका उत्पन्नता अक्षमता की न थी
 उनकी उत्पन्नता का एक दार्शनिक रूप था । अजित कुमार अजित या बड़े
 जीवन को पहचानता था, और पहचानने के साथ ही उस अनजानता भी जानता
 था । उसका प्रत्यक्ष ज्ञान उनका लिए गया था, प्रत्यक्ष ज्ञान में उनका उत्पन्नता
 उमड़ी पड़ती थी । एक क्षण में नया अनुराग और नया जीवन था ।

अजित का व्यक्तित्व बड़ा प्रभावशाली है किन्तु उनका अजित का एक
 अनगति हमें बार-बार सन्तुष्ट है । वह भीतर से कुछ और है और बाहर से कुछ
 और । उनका व्यक्तित्व के दो रूप हैं—एक आन्तरिक, दूसरा बाह्य । उनका
 आन्तरिक व्यक्तित्व पुरातन भारतीय-संस्कृति का अंग है और बाह्य
 पश्चात्-समयता के रूप में रखा हुआ । हृदय में वह पुरातन भारतीय आदर्शों
 का अजित मानता है, किन्तु वह बाहर से उच्च-जल आचरण करता है । वह
 स्वच्छ प्रेम पर विश्वास नहीं करता । वह झूठा है पर जिन हम प्रेम कहते
 हैं वह विश्वास के बांधों का है उनका पहलू का रूप । दूसरा और वह
 माना में प्रणय प्रोत्साहित करता है और करता है कि मैं तुम्हें प्रेम करता हूँ
 भले ही वह मौज और घेब के लिए प्रेम करता है । किन्तु क्या यह उच्च
 स्वभाव और आचरण की अनगति नहीं है ? क्या नहीं वह स्या का सम्पत्ति

समझता है गुलाम समझता है क्योंकि वह पुरुष से दुबल है। इसलिए स्त्री पुरुष के समान अधिकार पर वह विश्वास नहीं करता। उपयुक्त विचारों के हाथ हुए भी वह प्रभा और लीला व साथ स्वच्छ विवरण करता है। यह भी उसके चरित्र की असंगति है। उपयुक्त स्वभाव के जिसे अजित का मुनितिया स बातें करने में मनोरंजन होता हो, वह विवाह जैसे सयत विधान को कैसे मान सकता है? और रमेश के साथ तो जैसे वह अभिभावक बनकर आता है। इसलिए कुछ आलाचको का यह आरोप ठीक प्रतीत होता है कि अजित रमेश का भाग्य निर्माता बन बैठा है।

अहा तक नारी चरित्रों का सम्बन्ध है प्रभा और सरोज के रूप में एक न दो विपरीत प्रकार की स्त्रियाँ का चित्रण किया है। प्रभा सम्य-समाज की सम्मानित नारी होठे हुए भी वेश्या से गयी-बीती है और सरोज समाज उपेक्षित वेश्या होने पर भी प्रेम के मूल्य को जानती है। दूध का जला धाँध पूँ पूँ कर पीता है—रमेश प्रभा जैसी नारी के सम्पर्क में आकर सरोज के प्रेम की पवित्रता को नहीं समझ पाता। किंतु बाद में उसे ज्ञात होता है कि सरोज का प्रेम रूप पैसों से नहीं खरीदा जा सकता। उसका प्रेम रूपया से बहुत ऊँचा है।

चरित्र चित्रण प्रणाली की दृष्टि से तीन वष में भी बर्माजी पात्रों का औपचारिक परिचय देने से अपने को नहीं रोक सके हैं। रमेश और अजित का उन्होंने विस्तार से परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत किया है। प्रभा और उमकी महिला लाला आदि का भा उन्होंने औपचारिक परिचय दिया है। इससे पाठक चरित्र के सम्बन्ध में पूर्वाग्रह से अनायास ही ग्रस्त हो उठता है। पात्रों का आन्तरिक विश्लेषण भी उसने बहुत कम मात्रा में दिखलाया है। किन्तु आत्म विश्लेषणात्मक चरित्र चित्रण भले ही न हो पर पात्रों के बाह्य और मानसिक दृष्टि का उल्लेख ने उनकी प्रिया प्रतिक्रियाओं द्वारा ही व्यक्त किया है। वहाँ उसे अपनी ओर से अधिक कुछ कहने की आवश्यकता नहीं हुई है। पात्रों के वधापकधनों द्वारा चरित्रों का प्रकाशन हुआ है। यहाँ लेखक की अपनी ओर से टीका टिप्पणी नहीं है। कई स्थलों पर उसने दूसरे पात्रों द्वारा भी चरित्र पर प्रकाश डलवाया है। अजित रमेश और प्रभा के चरित्रों की कितनी ही विशेषताओं का उद्घाटन करता है। आत्म प्रलाप के रूप में भी कतिपय स्थलों पर पात्रों की मनोरंजा और मनोप्रथि का परिचय मिला है। रमेश अपनी मानसिक प्रतिक्रिया व नियम स्वयं कहता है कि 'मैं शराब इसलिए पीता हूँ कि जिससे अपने को भूल सकूँ अपनी बेहोशी में ससार को भुला सकूँ—छुद नरक का कीड़ा बन सकूँ।

कतिपय आशाओं ने तीन वष पर कुछ आराम लगाय है। उनका कथन है कि तीन वष क पात्र स्थितियाँ और भावनाएँ निराल्प अस्वानाविक और अमल्य है। किन्तु इस आराम में सत्य का अन्वेषण ही निहित है। वस्तुतः 'तीन वष में हम युग-मल्य की जाँच मिलता है। पूजावाणी सम्मत्ता म पैसा हा सब कुछ है और एत वातावरण में पढकर व्यक्ति पय पष्ट हा जाता है यह यहाँ स्पष्ट प्रतिबिम्बित है। यह अवश्य है कि वमा जी ने औपचारिक परिस्थितियाँ में पढकर पात्रा का चरित्रादधान्त किया है। किन्तु आपचारिक स्थितियाँ कौन-सा रचनाकार निमित्त नहा करता? चरित्र क आचरण का एकाएक पूर पढन क लिए प्रेरित करने क लिए किसी-न किसी वाग्य या मानसिक स्थिति का निमाग ता उस करता हो पढता है। यह तत्व क कता कौराज पर निभर है कि यह इन स्थितियाँ का कहीं तक वृत्तिन हान स बचाय रणता है। वमा जी ने अनौपचारिक तथा औपचारिक अनेक स्थितियाँ का निमाग अवश्य किया है पर वे वैसी अस्वानाविक एवं वृत्तिन नहा बन पायी है जसा कि आनासक उन्हें बतता है। इन स्थितियाँ में पढकर पात्रा का चरित्र धीर-धीर प्रकारा में आया है। अजित रमेश तथा प्रमा का पारम्परिक परिवय और चारिक स्थितियों स आरम्भ हाता है और अन्त तक उसा रूप में बना रहता है। यह स्वामाविक है क्वाकि सकोची स्वभाव का रमेश युवती स अनौपचारिक मेट कर ही नहीं सकता। अजित अनौपचारिक मेट अवश्य कर सकता पा किन्तु तिस सभाज में बह रहा है, उममें औपचारिकता जीवन का अभिन्न अंग बन चुकी है। फिर यह जानत हुए कि रमेश प्रमा की आर आकर्षित है वह उस आर पग बना ही नहीं सकता। उपास्य क उत्तराय की घारी स्थितियों अनौपचारिक है, क्वाकि तब तक रमेश एतन्म वल्ल गया हाता है।

'तीन वष एक रासक उपन्यास है और उसका आनन्द उतान क लिए पात्रक का उत प्रकार का बौद्धिक प्रयास नहा करना पढता जेसा 'विश्रलता' क लिए करना पढता है। पात्रक का गच्च बनाय रचन क लिए उतम पदात्त उन्मुक्त बुद्धूत, मनारजन का सामग्रा है। इसमें सामान्य पात्रक का भावनामय संवेचना वाला अशा भी प्रचुर मात्रा में है। सम्पूर्ण कथानक म एक प्रवाह ह जा आने साथ पात्रका को बहा ल जाता है।

टेढे-मेढे रास्ते (१९४६)

टेढे मडे रास्त विशुद्ध राजनतिक उपन्यास है और तत्कालीन राजनतिक उपन्यासा मे अत्यन्त विशाल और प्रौढ वृत्ति भी । प्रेमचन्द न अपने उपन्यासा मे भी राजनतिक समस्याए उठायी है पर वे सामाजिक समस्याया की अग मान हैं अर्थात् दाता समस्याए एकाकार हो गयी हैं । दूसर शब्दा मे प्रेमचन्द न राजनतिक समस्याया को छुआ भर है उनका महन एव विस्तृत अरुन नहा किया । यशपाल के उपन्यासा का छाडकर जय सिमा मे राजनतिक समस्या का महन अरुन नहा मिलता । यशपाल ने भी एक विशिष्ट बाट को लकर लिखा है । टेढे मेढे रास्त इस अर्थ मे अपनी विशिष्टता रखता ह । तद्पुगीन राजनतिक परिस्थिति का गितना यथाथ अरुन इसमे हुआ है वह अन्यत्र दुलभ है । वर्माजी ने तत्कालान प्रत्येक राजनतिक दल की नस को पहचाना है । इसलिए वे उनकी गतिविधिया और षयक्रमा का इतना सच्चा अरुन कर सके हैं जैसे उनमे उन्हाने भाग लिया हा । यही नही तत्सम्बन्धी शिबरण बडे साकार और राचक बन पडे हैं । कांग्रेस की मीनिंग उसके जूस उसके कार्यकर्ताआ की गति विधिया और पारस्परिक विचार विनिमय मनोरञ्ज हाने के साथ साथ यथार्थ भी हैं । सरकार काश्मिया को गिरफ्तार करती जा रही है और जेल मे भरती होने के लिए लोगो की कमा पड रही है इस समस्या को कैसे हा किया जाय इस पर वर्मा जी ने वैसा किनात्पुण पर यावहारिक हल के साथ व्यंग्यात्मक चित्र खीचा है

हमारे सामने सवान यह है कि क्या किया जाय । हम तैयार रहना चाहिए कि सरकार तापो को गिरफ्तार करती जाय और लोग बराबर सामने आते बने जाय । जिस समय लोगो का आना बन्द हो जायगा हमारा हार हो जाएगी ।

यागी देर तक वहाँ मौन छा गया । सब सोच रहे थे । इस मौन को माकण्डे ने भंग किया । लोगो को तैयार किया जाय अधिक से अधिक आदमी दगातो मे भरती किये जाय ।

‘सामों का किस तरह ठेकार किया जाय’ समझिहार ने पूछा।

उन्हें राम देखर। उन्हें बलवान के काम पर नाकर रखकर माकूम न मुन्दात हुए कहा।

‘मैं थका विराम करता हूँ। तिरा = आगिया व मुकमेट बनाना हमारे नविकता का पवन चाहिए करता है। नावुकता के वा में आकर श्री रामरुम बाल रहे।

माकूम्य बना तक नाव रहा था। उनमें क्या ‘जान बहार नावुकता = चक्कर में पड़ है जरा काजों का ठाक तरह से देखण और नन पर ठा त्रिमा न गौर का लिए। अगर आरका लान = लिए त्रिमाही नहा मिल रह है ता दानें नागों का काइ गन नशा आर न हिमगान की नविकता का हा काइ बाव है। काश्चि य जेन जान बाव वाकूमिपर त्रिमा हा ता हैं। तैतास बराब आम्बियों म स आर मनी आम्बी लान के लिए आता आ जान सभा मरन निम्न का ठेकार हा जाय ता हम ना विरव विरवी हा सकत हैं। त्रिन्त दुनिया में बहा भी य सम्मन नहीं। आर तैतास बराब आम्बिया म तैतास सा आम्बा मुक्त काम करने और लान का मिल जाय ता बरुत बहा बाव हागा। दुनिया के उन्नत स उन्नत राष्ट्र म ना मुक्त काम करने बाल नहा मिले। सभा जाह उनस्वाहों पर त्रिमाग नैकर रख जाव हैं। और इतलिए अगर फायेम मजबूरी का हानत में उनस्वाहू देखर लान बाल त्रिमाहा रचता है ता इनमें हज हा क्या है ?

इसी भाँति लबर मुकमेट मजदूर सनामा और शक्तिकारियों की मोर्चा का ना दृश्य क्या जा न प्रस्तुत किए हैं, वे तम्पूग हैं। ब्रह्मन्त की कुछ समन के लिए जेन जान स राकन के लिए उमाताय ब्रह्मदत्त स जा जनिनय कराता ट बह ह्याम्पाय हाव हुए भा, उन समय का परिस्थिति के अनुकूल है। उना प्रकार प्रमाताय और उवक माया जावकवागिया का सभाएँ और हवचल ना लम्कानन वातावरण के अनुकूल हैं।

ट-भेदे राम का कथानक अत्यन्त विशाल है। यद्यपि इसमें विस्तार के सम्भावना अधिक नहा थी। फिर ना विषय में सन्नता चरित्राकन में मूकमेट और सवन्नसन्नता लान के लिए लवक न अनन अशान्तर घन्नाओं और इति वृत्त का निमाचना कर टाना है। परन्तु इस प्रकार का प्रत्येक इतिवृत्त अना महत्व रपता है। बहा भी बह नीरम नहा हुआ है। यद्यपि एक-दा स्थलों पर अनाशयन विस्तार अवश्य निम्न सगाता है। कथानक का विस्तार हमें प्रारम्भ

से ही दिखने लगता है। दयानाथ की बैठक में काफ़ेस के दम सन्सों का विस्तृत बणन रोचक भव ही है। पर है वह अनावश्यक ही। इमक बाट आता है प्रभानाथ का कनकता भ्रमण। इमम ता नमन ने आन अत्रातर घटनाआ और प्रसंगो की सृष्टि कर दी है। किन्तु इम विस्तार का हम किसी भी भाँति अनाश्यक और निरुद्देश्य नहा कह सकते। प्रभानाथ का कनकता पहुँचाकर वर्माजा यडी रवि के साथ कलकत्ते का विस्तार-पूर्वक बणन करने लगा है। १९३७ ग १९४२ तत वे कनकता में रहे थे और वहाँ उहने जा अनुभव प्राप्त किय उनको यकन करने का माह वे नही छाट सके। फतत इम उपयाम म उमता उपयुक्त अवसर उहने निकाल ही लिया। कलकत्ता के स्थानीय बणन चने चटकील और सूक्ष्म है। अपने अनुभव के आधार पर सीता पृष्ठा म विश्लेषणात्मक शली मे लेखक ने कलकत्ते के जीवन का ययार्थ चित्रण किया है। हिन्दुस्तान के बडे शहरो—विशेषकर औद्योगिक शहरा म उच्च, मध्य और निम्न बग का सामाजिक और पारिवारिक जीवन क्या है—इससे हम यहाँ परिचय प्राप्त करत है। और ऐसे शहर मे जाकर एक नवागत को जो अनुभव प्राप्त होने चाहिए वे सब प्रभानाथ को होत है। यहा वर्माजी ने सयोगों का सहाय लिथा है। भारत की गरीबी लूट खसोट बेकारी दिखाने के लिए प्रभानाथ को झकझोर देने वाली घटना एक के बाद एक सयोग-वश होती जाती है। रिक्शा वाले का दम तोडना बगाली युवक की आत्महत्या प्रतिभा का बलिदान प्रभानाथ को एक नयी दुनिया दिखते हैं जिससे अभी तक यह अबाध युवक परिचित न था। वीणा प्रतिभा वह बगाली युवक जिसका नाम सोमेन था— और वह रिक्शा वाला। इनमें स हर एक ब्यक्ति अपना ब्यक्तित्व लिए हुए था हर एक ब्यक्ति हिन्दुस्तान की ही नही मानवता की दुरावस्था पर प्रकाश डाल रहा था हर एक ब्यक्ति प्रभानाथ को सोई हुई चेतना पर प्रहार कर रहा था। होटल का खाना होटन का सुख। यह सब पार्श्विक हसी हस रहे थे, मानवता का उपहास कर रहे थे। और इसी पार्श्विकता के वातावरण म प्रभानाथ की आत्मा मनुष्यता का मनन कर रही थी उसको ममझने की कोशिश कर रही थी उसको अपनाते का सक्ल्प कर रही थी।

स्पष्ट है प्रभानाथ का कनकता भ्रमण किसी भी अर्थ मे निरुद्देश्य नहा है। इमम उपन्यास के कथानक को प्रवाह मिला है चरित्र विकास का अवसर मिता है। उपन्यास के कई मुख्य पात्रा का परिचय भी इसी सदर्भ मे हुआ है। प्रभानाथ वीणा के सम्पर्क मे यही आता है और उसक चरित्र की मूल विशेषता

स परिचित हाता है। उमानाथ और उनके साथ मारीसन व विचार गति विरियों तथा कायश्रमों का स्वरूपा भी यहा बनती हैं।

उमानाथ व प्रत्येक पात्र की अपनी शिक्षा और अपना काय-श्रम है। फलतः उनका काय-श्रमों व अनुसार कथानक एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमता रहता है। प्रमानाथ, उमानाथ और बाबा में बाबा जब कतकता छाँहर आ जाते हैं तब कथानक फिर से कायम चलकता नहीं जाता। वहाँ से आकर इन तीनों और इनके सहयोगियों का कायस्थान कानपुर बन जाता है। कानपुर व स्थाना पर और उल्लास तथा उससे सम्बन्धित अन्य गाँवों व चारा आर कथा नक घूमता है। यहाँ प्रत्येक पात्र व काय-श्रमों का वृत्त क्रियामक एक ही दान का मिलता है। उमानाथ और उनका सहयोगी कायश्रम क मठ व मूर्तिमान रूप हैं। उनका क्रियाशालता इतना अधिक नया है त्रितरी सद्धान्तिकता है। उमानाथ और प्रमानाथ के विद्वान्त अधिक क्रियामक रूप धारण करत हैं। प्रमानाथ और उनके साथी सबन अधिक क्रियाशील तथा सकल दृष्टी हैं और अन्त तक वे निष्कामाहित नहा हात। उमानाथ विचारों से त्रितरी उन्नाहा है काय रूप में उसका उन्नाह उतना तीव्र नहा है। अपने विद्वान्त और आशों व प्रचार के लिए वह साहित्य का सहारा लेने का प्रयत्न करता है और अपने सहयोगियों के साथ इनाहाबाबा जा पहुँचता है। किन्तु यहाँ आकर उमानाथ व हाथ कुछ नहा लगता। प्रश्न उठता है कि फिर क्या जी न उमानाथ का इनाहाबाबा भ्रमण क्यों निरताया है? कथानक की दृष्टि से मा पेंतानास पृष्ठा म इनाहाबाबा व साहित्यिक जावन की गतिविधि का वपन अनावश्यक है। एना प्रतात हाता है कि लखक अपने स्थानीय अनुभवों को बहू बिना नहा रहू सता है। यही नती, इनाहाबाबा व साहित्यिक जावन का जा विषय समक ने किया है वह बहा विविध और हास्यास्पद है। क्या वास्तव में १९३० व इनाहाबाबा व साहित्यिक-जीवन की स्वरूपा यही थी? और थी भी ता क्या इस भारतीय साहित्यिकों की निष्क्रियता का स्रोतक मानना चाहिए? क्या तत्कालीनसाहित्यिकों ने स्वाधीनता-संग्राम, समाजवादी चेतना में कोई सक्रिय सहयोग नहा किया था? माना कि भारतीय प्रगतिशाल उन्क-मप की स्थानता १९३६ में हुआ किन्तु क्या उन्क पूर्व प्रेमचन्द आदि उन्कों म तर्कियक चेतना व चिह्न नया मियत? तत्काल में अज्ञान अज्ञानताय भावनाएँ माना-मनोज्ञ आदि निगाहर बर्मा जा ने उनको जा मिल्नी उहाई है उन्में बर्ती तक तप्य है? न जान यह बर्मा भी की किस प्रतिशिक्षा का परिणाम है? इतना निश्चित है कि म

केवल हास्य उत्पादन के निमित्त प्रस्तुत नहीं किया गया। यह निरुद्देश्य नहीं माना जा सकता।

ऐसा अनावश्यक विस्तार टेढ़े मेढ़े रास्ते में कई स्थानों पर है किन्तु इसमें कोई न कोई उद्देश्य अवश्य निहित है ऐसे अधिकांश स्थलों पर हास्य एवं व्यंग्य का प्रस्तुत हुआ है। फलतः यथस्थ नीरम और उमा देने वाले प्रतीत नहीं हुए पाते। यही नहीं ऊपर में हास्यास्पद लिखने वाले वर्णना में बड़े तीव्र व्यंग्य निहित हैं। हिल्डा और मारीसन का सिगरेट केस वाला कार्टून हास्यास्पद तथा जस्वाभाविक भन्न ही लगे किन्तु अप्रत्यक्ष रूप से वह समाजवादी पर तीखा व्यंग्य करता है। इस कार्टून में उपरोक्त हिल्डा और उमानाथ का धानादान लेखक के इसी उद्देश्य की पूर्ति करता है।

कामरेड मारीसन के जाने ही हिल्डा उमानाथ पर दूट पड़ी कायर कहती है। तुम्हारा सामने ही एक जादूजी मरा जन्मा कर गया और तुम चुपचाप देखते रहो।

शांत भाव से उमानाथ ने कहा तो इसमें क्या। तुम्हारा मैं स्वामी नहीं हूँ तुम्हारा रक्षक नहीं मरना तुम पर कोई अधिकार नहीं। वास्तविकता तो यह है कि तुम मर बराबर की हूँ अपने मानापमान का उत्तरदायित्व तुम पर है तुम स्वयं उसका बदला ले सकती थी और तुमने बदला लिया भी।

हिल्डा तड़प उठी फिर तुमने मुझसे विवाह क्या किया—तुम मर पति क्या हुए? कायर कही है। मैंने अभी तक सुना था कि हिन्दुस्तानी कायर आर गुनाह हैं आगे मैंने अपनी आँखों देखा भी।

उमानाथ मुस्कराया देखा हिल्डा क्राध की बौद्ध आवश्यकता नहीं। इसका पहलू हम लोगों को अपने अधिकारों को समझ नाना पड़ेगा। समाजवाद के मत में स्त्री और पुरुष समान हैं किसी का किसी के ऊपर कोई अधिकार नहीं कोई किसी का स्वामी नहीं है। पत्नी पति की सगिनी भर है वह पति की नहीं है ठीक उसी प्रकार जैसे कोई भी व्यक्ति मेरा मित्र हो सकता है। पति और पत्नी का विवाह विच्छेद किसी भी समय किसी की इच्छा से हो सकता है ठीक उसी तरह जैसे दो मित्र कभी भी अपनी मित्रता तोड़ सकते हैं। ऐसी हालत में तुम्हारा अपमान तुम्हारा सुख दुःख मेरा नहीं है और मेरा सुख दुःख तुम्हारा

हिला इस तक का समझने के लिए तैयार नही थी उमानाय कह रहा था और वह प्लानि के साथ यह सब मुन रही थी । उमानाय के तरनौ का वह खडन नहीं कर सकती लेकिन उसके अंदर वाला समाजवादी मन जिसने बाल माकम का अध्ययन किया था जिसने लेनिनाको इस दुनिया का ध्रुव सत्य मान लिया था जो पुन्या की ही भांति गहन और दूषित माग पर जाठ हुए, समाज का उद्धार करने के लिए काम क्षेत्र में दूब पडी थी जिसने दुनिया के भोग विलास को टुटारा लिया था जा सिद्धान्ता के नशे में सराबोर थी वह समाजवादी हिल्डा इस तक का विरोध नही कर सकती थी, लेकिन उसके अंदर वाली नारी यह नारी जा पुरप का जवलम्य चाहती है, जा उससे रक्षा चाहती है, जो पुरप की छाया में रहकर उसकी गुलामी करता चाहती है जिसका जीवन सदा माग में अर्पित है वह नारी विवाह और प्रेम के इस विवृत रूप को सहन न कर सकती ।

मिसज सिम का बिल्ला और मारीमन बाला बाड भी बग मनोरजक तथा ध्ययपूण है । मिसज सिम को निष्ठा मारीमन का पत्र इस उद्देश्य की पूर्ति करता है 'इस स्थान से कि आपकी बिल्ली मरेगी आप बहास हा गया । इससे मुझे बहुत दु ख हुआ और इसमें नी अधिक दु ख मुझे इस बात से हुआ कि आपकी नजर के सामने ही हुआरा मादमी जयमरे भूख, प्यान लठपत हैं और आप उन पर ध्यान तन नही देती जब कि एक जानवर पर आपकी इतनी ममता है ।

अन्य उपन्यासा की भांति 'टेने म' रान्त का कथानक भी पूर्व निश्चित है । परन्तु इस प्रकार का आभास हम हा नही पाता क्माकि संपूण कथानक का विस्तार सपागा, आरस्मिक घटनाआ तथा पापा का बाह्य एवं आन्तरिक प्रतिक्रिया का परिणाम है । आरस्मिक घटनाए इसमें अत्यन्त महत्त्वपूण है । वर्माजी की उपन्यास-कला की यह सूत्री है कि जब कथानक का प्रवाह धम जावा है तब वे आरस्मिक घटनाआ का नियंत्रण कर उसमें तीव्रता ला देत हैं । प्रमानाय के जीवन में, और प्रचारान्तर से उपन्यास के चित्रपट पर एक ऐसी मनमनी पूण घटना अकस्मात हो उठती है जिससे प्रमानाय की जावन दिशा निश्चित हो जाती है अथवा उसका निष्प्रिय-जीवन सक्रिय हो उठता है । और इस प्रकार कथा को एर नया गति मिसत्री है । वह घटना है—धीगा का एका-एक उगक सपर्क में आ जाना—एर विचित्र संयोग के साथ— और उपन होता कि उसकी मोटर के सामने कराव पांच गज की दूरी पर एक युवता पिस्तोल छाने लगी है । कार की स्पीड ब्रेक भी संज न था—प्रमानाय ने कार

रोक दी। युवती ने झपटकर कार की चाँई आर बाया दरवाजा खोला और वह प्रभानाथ के बगल में बैठ गयी। उमक चाहिने हाथ वाली पिस्तौल की नयी प्रभानाथ की पसलियाँ से लगी थी। इस प्रभावशाली प्रान्तिकारी नारी वीणा का सपक प्रभानाथ को भी सच्चा क्रान्तिकारी बना देता है। उगन्यास भर म मवसे रोचक और स्वाभाविक विकास प्रभानाथ वाले इतिवृत्त का ही हुआ है। दयानाथ से सम्बन्धित इतिवृत्त शिथिल और गतिहीन है। उमानाथ वाल इति वृत्त में ऊपर से जितनी सासनी दिवती है वास्तव में भीतर से उतना ही निष्प्राण है। किन्तु प्रभानाथ वाल इतिवृत्त में इतनी गति और कुतूहलता है कि पाठक उसी की प्रतीक्षा करता रहता है। मही नहा यह इतिवृत्त मवस अधिक प्रभावशाली भी है। प्रभानाथ का चरित्र विकास कितन सुदर और स्वाभाविक ढंग से हुआ है इसकी व्याख्या आगे की गयी है।

सयोग और आकस्मिक घटनाएँ जहाँ कथानक को आगे बढ़ाती हैं वहाँ पात्रों की मानसिक तथा बाह्य प्रतिक्रिया कथानक का तीव्रगति प्रदान करती है। दयानाथ का अपने पिता रामनाथ को यह जवाब देकर चले जाने पर कि आपकी आज्ञा शिरोधार्य, लेकिन यह पाँच सौ रुपया महीना गुजारे की बात—इसमें से एक पैसे की भी मुझे जरूरत नहीं। आप समझते हैं कि आप स्वामी हैं आप दाता हैं आप समर्थ हैं और मैं हीन हूँ गुलाम हूँ असमर्थ हूँ आप गलती करते हैं। मैं गरीबी में रह सकता हूँ। मुझे आपके रुपये की कोई आवश्यकता नहीं। अपने पास रखे।—सुनकर रामनाथ जिस तरह खड़े थे उसी तरह खड़े रह गये। एक क्षण वे दयानाथ को वापस बुलाने की बात सोचते हैं लेकिन दूसरे ही क्षण वे कह उठते हैं कि इतना घमण्ट तो फिर भुगतें—अच्छी तरह से भुगतें। वह समझता है कि मैं झुकूँगा। और वे जोर से हस पड़े। पर उनकी उस हसी में एक अप्राकृतिक ककशता थी दवे हुए स्तन की अहम्भावता और अभिमान मिश्रित प्रतिक्रिया थी। इस प्रतिक्रिया का परिणाम यह होता है कि कांग्रेस में भाग लेने वाले सभी यकिनिया से वे बदनाम लेने पर तुल जाते हैं और वे हुकम कर देने हैं कि उन्हें लगान न देने के जुम में बेखल कर दिया जाय। इसके लिए वे पुलिस की मदद दिलाते हैं। इस प्रकार कथानक रामनाथ की मानसिक प्रतिक्रिया के फलस्वरूप आगे बढ़ता है। कांग्रेस वाला का मुकदमा करने के लिए वे स्पेशल मजिस्ट्रेट बना दिये जाते हैं और वे लोग का कड़ी सजाए देते हैं। उसके प्रतिक्रियाम्बुध कौशल्या गत्स स्वन की हर्डमिस्टेस इस्तीफा दे देती है जिसके स्थान पर वीणा आती है। वीणा के आ जाने से कथानक फिर आगे बढ़ता है।

अन्य पात्रों का भा मानसिक अथवा बाह्य प्रतिक्रिया क्यातक को किसी न क्रिया में सामना करती है। विशेषकर मनमाह्न की आन्तरिक प्रतिक्रिया क्यातक में जा तीव्रता ला देती है। उतव उरन्यास में एक विशेष तनाव और कुनून पैदा हो जाता है। रामनाथ त्रिवादी के बल प्रयाग के कारण परमेश्वर की मृत्यु हो जान से मनमाह्न के मन में तात्र प्रतिक्रिया होता है जिसके फलस्वरूप वह मैनजर रामसिंह को हत्या कर बैठता है। रामनाथ के पिन पर दखी गहरी खाट पड़ती है क्योंकि प्रवारान्तर से यह वार रामसिंह पर नहीं लहा पर किया गया है। फलत व उन सभी आत्मिया का कुचल देना चाट्ट है, जा उनक सामने खिर उठाउ है और इस उपद्रव से रामनाथ को बचान के लिए सगदू मित्र अपने प्राण द देत हैं।

'दृष्ट-म' रास्त्र' का क्यातक अत्यन्त विशाल है। फिर इसके प्रमुख पात्रा की मस्या भी कम नहीं है। तथा किना भा पात्र की क्या कम महत्वपूर्ण नहा है। लखक का सभी के जावन-वृत्त आन्तरिक एव बाह्य प्रतिक्रिया तथा क्रिया कताओं का चित्रण गहनता से करता है। लखक का यह काय हम उरन्यास में कट्टि इयनिए हा गया है क्योंकि प्रत्येक पात्र का विचारधारा और निशा अलग-अलग है। इमलिए प्राय हुआ यरु है कि जब वह एक पात्र के जीवन और गतिविधि का अकन करने लगता है तो दूसरे पात्र से सम्बन्धित क्यातक बहुत दर के लिए छू जाता है। उरन्यास का प्रारम्भ हाता है दयानाथ वाले इतिवृत्त से और वह तान परिच्छेद में चलता है। उसके बाद प्रमानाथ, उमानाथ और दयानाथ ताना का इतिवृत्त पुनर्मिल गया है। किन्तु जब लखक उमानाथ का इनाश्याय नज देता है तब एक वार फिर से सारा क्यातक एक पात्र तक सामित हा जाता है। अन्य पात्रा को लखक एक दम मूल जाता है। आये भी क्यातक के सम्बन्ध में एव कह स्पल आय हैं। इन उरन्यास के क्या-मगठन/की त्रुटि भी कहा जा सकता है। इस त्रुटि का दूर करने का सम्भवत लखक के पास कोई उपाय नहीं था। जहाँ प्रत्येक पात्र का अपना अलग रास्ता हा वहाँ मुसगति क्यातक हा भी नहा सकता। किन्तु यन्ति लखक चाट्टा तो वह क्या के तन्तु खिरने से बचा सकता था क्योंकि प्रत्येक पात्र का अन्तिम नट्य एक है साधन और मध्य मित्र मित्र होने पर भी। किन्तु क्यातक ऐसा नहा कर सक था उन्ने ऐसा करता नहीं चाहा। इमीलिए उरन्यास के प्रत्येक पात्र का अपनी अलग कहानी है। और वह एक दूसरे से इतनी अलग है कि यन्ति हम चाहे तो प्रत्येक को एक सधु उरन्यास का रूप दिया जा सकता है।

फिर नी टरे मडे रास्त्र में क्या शयिन्य नहीं है जेगा कि वृद्ध क्यातक

को लेकर लिभे जान जाने उपयामा म प्राय हा जाता है । पात्रा और घटनाआ का आधिक्य होने पर भी कथा मुनसी हुई है । इतिवृत्त का प्रवाह चां धारावा हिक न हा किन्तु उनम किनी प्रकार की अमम्बद्धता रही आा पायी है । उपायास मे कुतूहल और उत्सुकता पर्याप्त है पर वह घटना वैचिपमूत्रन नगी है । सम्पूण उपन्यास भावनात्मक मवेना से परिपूण है । उपायास की प्रत्ये घटना प्रत्येक विवरण यहाँ तक कि प्रत्येक प्रसंग सजीव मान व्यजव और मार्मिक है । इसलिए उपन्यास का टम्पा बडा गतिशील और ममस्पर्शी है ।

नियति और भाग्य पर वमाजी की आस्था कभी कम नहा हुई वह कभी हल्के और कभी गहरे रूप म मन हो लिखी हा । टेने मेने रास्ते म नियति और भाग्य की स्थिति प्रच्छन्न रूप म है उनका जानाप उहाने बार-बार नहा गाया । इसके फलस्वरूप चरित्र चित्रण मे एक प्रकार की प्रौढता और गरिमा आ गयी है । चित्रलेखा और तीन वप मे लखक पात्रा की क्रिया प्रतिक्रिया अधिक विस्तार और गहनता से नही दिवा पाया कर्णिक उनम पात्रा के आचरण तथा क्रिया कलाप किसी अदृश्य मून द्वारा संचालित होत हैं । किन्तु टेने मेने रास्त म आकर लेखक परिस्थितिजम मानमिज सघप का विस्तार बडी सूम्मता स कर सका है । यहा नियति और भाग्य का सहारा नेकर वह पात्रा का चरित्र नियामक नहा बन वेठा है । सब चरित्रा का स्वतन्त्र विकास हुआ है । सब अपने व्यक्तित्व से लडकर बाहर की परिस्थितिया से टकराकर और आगे बडकर अपना निर्माण स्वय करने हैं । प्रत्येक अपने स लडता है । अपने अन्तर वाली वृत्तियो और बाहरी स्थिति का सघप तीव्रता से अनुभव करता है ।

चित्रलेखा और तीन वप मे वमाजी अवसर आने पर भी कई स्थला पर मानसिक सघप का चित्रण करने से चूक गय हैं । पर टेने मडे रास्ते म पात्रा का अन्तन्त बडी खूबी से उभरा है । प्रत्येक पात्र के सम्मुख ऐस अवसर आते हैं या परिस्थितियाँ कुद्ध ऐसी स्थिति पैदा कर देती हैं कि उह एक को अपनाता और दूसरे को छोडना आवश्यक हो जाता है । तब उनके व्यक्तित्व और बाह्य परिस्थिति की टकराहट के फलस्वरूप जो निणय हाता है वह कितना मनोवैज्ञानिक हो उठा है इस कहने की आवश्यकता नही है । निणय क समय की यह दुविधापूण स्थिति प्रत्येक पात्र क सम्मुख आयी है । दयानाय उमानाय और प्रमानाय का हृदय सघप जो है वह है ही सबसे तीव्र हृदयान्तेजन राम नाय का है । पुत्रा की गतिविधिया और विशिष्ट सिद्धातवागी विचार धारा रामनाय के अजेय व्यक्तित्व को कितनी ही बार द्विभ भिन करने को हाती है । अपने मानसिक दृढ स वे तडप उठत हैं । प्रकाड विग्न होने क कारण

एक आत्मा व अपनी भावुकता का ज्ञान का प्रमत्त करत हैं तो दूसरी ओर अपने ज्ञान का अज्ञान्य तर्कों द्वारा उचित ठहराकर अपने का संतुष्ट करत हैं। भावना और तर्क व संघर्ष-भाव का अन्तता ही मनाशा व विभिन्न रंगों का समाप्ति न बड़ा प्रमत्तता स अन्त निया है। काप्रेस के निमित्त जब दयानाथ पर जोर पैतृक-सम्पत्ति छाडकर चला जाता है तो एक बार रामनाथ ममाहुत हा उठत हैं। एक बारता भावना उनका अहम्मन्वता पर हावा हा उठती है। किन्तु वह एक गिना जावण मात्र हाता ह जोर उनक वां रामनाथ अपने स्वभाविक रूप म आ जात हैं। प्रमानाथ को दया को लौटाने के लिए भजन पर उनका दया वनी विचित्र हो उठता है।

‘रामनाथ न तनिक चार न कहा स्वयं अपने स गया मुचे छोडकर घर छाडकर अपना-पना जमान जामना मत्र बुद्ध छाडकर। सिफ एक हठ—एक पागलपन। उफ! मरा लक्षा मुनने ही लडन जा रना है। जोर वे कमरे में टहन लगे।

उन्हान फिर कहा अबका वाग अगिक चार स एक-एक शा पर चार दज ए मर उगकर, जब क नाथ गयों को ठुकराकर ममता का ताडकर। मुझ लडन मुच मिटाने चल गिया। इतना घमण इतनी अहम्मन्वता—इतनी अहम्मन्वता, इतना घमण्ड।

रामनाथ कमरे व बाहर निकल आए। प्रमानाथ कार को गैरेज से निकाल कर ला रहा था। रामनाथ ने आवाज ली प्रभा।

प्रभा चौंक उगी। रामनाथ का स्वर जा दा मिनट पहले करण था और विवश था व एकाएक इतना बठार कैसे हा गया। उमने माटर पर बैठे ही बैठे कहा ‘बहिष्।

‘माटर रस दो—तुम्हारे जाने का आवश्यकता नहा। इसके बाद रामनाथ ने धीर म गुधता के भार स लद हुए शनों मे कहा ‘इतना घमण। तो फिर भुगत अच्छी तरह स भुगत। व समझता है कि मैं झुका। और व जोर स हैंम पडे। पर उनकी उम हसी म अप्राकृतिक ककराता थी, दवे हुए रदन की अहम्मन्वता और अभिमान मिश्रित प्रतिक्रिया थी।

रामनाथ के मन पर चोट का प्रतिक्रिया यही तक नहा हाती। काप्रेस में भाग लेन वान प्रत्येक व्यक्ति का व दक्षित करत हैं।

किन्तु अपनी अहम्मन्वता व कारण सत्र अजय रहन को प्रयत्नशाल हाकर भी वे पराजित हात हैं—एक नहा अनक वाग और वह भी बुरी तरह। दयानाथ की पत्नी राजश्वरी तक उह पराजित कर दता है।

अन्तर्द्व द्वे इन क्षणा म कभी-कभी रामनाथ का आचरण बड़ा असंगति पूरा लगता है। एक ओर व दया स कांप्रेस छोड़ने को कहते हैं, किन्तु जब श्यामनाथ जेल जाकर दयानाथ को माफी माँगने को तैयार करने की बात कहत हैं तो वे जो उत्तर देते हैं, उससे एक बार तो पाठक चकित सा रह जाता है। वे कहते हैं—

‘तो इसके माने ये हुए कि वह सरकार से एक प्रकार माफी माँगे। रामनाथ ने श्यामनाथ को देखा नहा श्याम ! एक रूखी मुस्कराहट रामनाथ के चेहरे पर आ गयी माफी माँगे—इतना ऊपर चढ़कर अब वह अपने का एक दम गिराए ! दया इसके लिए तैयार न होगा ! और अगर एक बार वह माफी माँगना स्वीकार भी कर ले तो मैं उसे कायर समझूँगा। नहाना—श्यामू यह बेकार की बात है।

इसी प्रकार प्रभानाथ को जेल से मुक्त कराने के लिए रामनाथ अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगा देने हैं किन्तु जवा प्रभा मुखबिर बनने को तैयार हा जाना है तब रामनाथ वहा भी उमके लिए तैयार नहा हाते। उमानाथ के सम्बन्ध मे भी ऐसा हाता है। उसक कायरा की तरह देश छाडने, म वे रुपया देकर उस सहयोग नही देते। नयानाथ भी अब यह कहकर कि उसने कायम मे सम्मिलित होकर गलती की घर लौटना चाहता है तो रामनाथ यह कहकर दया को लौटा देते हैं कि ‘दया ! तुम कांप्रेस छोडकर और भी बडी गलती कर रहे हो ! मुझे सब कुछ मालूम है ! तुम चुनाव मे हारे—और चुनाव म हारकर तुमम निराशा पैदा हो गयी। तुम कायर की तरह वहाँ से भाग रह हो। तुम बाहर से पराजित नही हुए—आज चुनाव मे हारे हो कल चुनाव म जीत भी सकत हा वह सब तो परिस्थितिया पर निर्भर था—तुम पराजित हुए तो अपने ही अन्दर स ! मुझे इस बात का दुख है। तुमन मेरे यहा लौटकर गलती की। जीवन का क्रम आगे बटना है—पीछे लौटना असम्भव है। मरे यहा तुम्ह स्थान नहा है दया ।

रामनाथ के आचरण मे यह असंगति ऊपर से ही दिखती है। वास्तव मे उनकी यह प्रतिक्रियाए उनकी अहम्मन्यता के विविध शोडस हैं। उनकी अहम्मन्यता जहाँ उह दूसरा के सामने झुकने और दबने से रोकती है वहाँ वे अपने पुत्रा को भी झुकते नही देख सकते। कोई उनके पुत्रा को कायर और विश्वास पाती कहे यह भला उन जैसा अदम्य व्यक्तित्व वाला व्यक्ति कैसे सहन कर सकता है। अत स्पष्ट है रामनाथ के आचरण की ये असंगतियाँ ऊपर से परस्पर विरोधी दिपन वाली वक्तियो का आन्तरिक रूप मात्र हैं—उनकी अहम्मन्यता की प्रतिक्रियाए मात्र हैं।

रामनाथ के तीना पुत्रों को अहम्मन्यता विरासत के रूप में मिली है। माकण्डम ठाकुर ही कहता है, 'और मैं जानता हूँ दया कि तुममें अहम्मन्यता है उतनी ही अधिक जितनी तुम्हारे पिता में अथवा अथ भाइयों में है। सभी भाइयों का व्यक्तित्व भी एक जैसा है, यद्यपि प्रत्येक का मार्ग अलग अलग है। प्राम कहा जाता है कि वर्माजी के उपयोगिता के पात्र सिद्धान्त—शरीर ही, यह ठीक है। परन्तु इसके कारण पर किसी ने ध्यान नही दिया। इसका कारण यह है कि उनका प्रत्येक पात्र प्रीति है या दूसरे शब्दों में समझने लगता है कि वह प्रीति है और उसका विचार या सिद्धान्त ही सही है। दया उमा और प्रभा में अहम्मन्यता है, परन्तु वे भी नही है जैसी उनके पिता में है। उनकी अहम्मन्यता में युवकावित अस्थिरता है इसलिए जब कभी वे अपने पत्रों से विचलित होने की बातें हैं पिता का कठोर अनुशासन उन्हें सभालने का मजबूर होता है।

ऐसे भले रास्ते के चरित्र चित्रण की एक मुख्य विशेषता यह है कि प्रत्येक पात्र का चरित्राद्वेषण एकाएक हुआ है। रामनाथ का वीणा की चोट से और न्या, उमा तथा प्रभा का रामनाथ की फटकार से। वीणा का यह कहने पर कि इस तरह चिल्लाना आपका शोभा नहीं देता। मैं स्वयं जा रही हूँ। विश्वामघाति का घर का अन्न खाकर मैंने अपने को अपवित्र कर लिया है—इसका प्रायश्चित्त करना होगा न। वीणा ने इस समय विकराल रूप धारण कर लिया था, हाँ—घनित कीड़ा से भी गम बीते—विश्वासघाती। इतने आत्मियों ने प्रभा पर विश्वास किया था—अब उस विश्वास का तोड़ रहा है। तुम लोग बड़े स्वामिमानी बड़े ऊँचे चरित्र का आदमी बनत हो। लेकिन मैं कहता हूँ कि तुम विश्वास का तोड़ने वाले तुम अपने घनिष्ठ मित्रों को न्या देने वाले हो तुम उन लोगों की हत्या करने वाले—तुम कीड़ों से भी गम घीन हो—तुम शतान हो। रामनाथ की अहम्मन्यता—उनका सारा आत्मगौरव उस समय तिनमिना उठा था, इतना बड़ा प्रहार किया था वीणा ने। वह मनुष्य जिसने कभी क्षुब्धता नही जाना, जिसने दर्दना नहीं जाना, आज उसे एक स्त्री विश्वासघाती कहकर चली गयी। यह सब सुनकर उनके दिव पर इतनी बरारी चाट होती है कि वे अपना निष्पक्ष बन्त दन हैं और प्रभा का सुखदिर बनने को मना करत हैं।

कभी-कभी पन्नाया सारा भी वर्माजी ने चरित्राद्वेषण किया है। मन-माहा तथा शगद मित्र का चरित्र प्रचारण ही तरह हुआ है। परमेश्वर की मृत्यु से मनमोहन का मानवता हिन उठती है और वह रामगिह की हत्या का वेठता है। अनन्त गवार, पुत्राष्ट्री में विश्वास करने का एक पण्ड मित्र मिना

को रोकने के लिए रामनाथ के ऊपर लेट जाना है और उनसे प्रहार अपने ऊपर करके अपने प्राण दे देना है। बर्माजी के चरित्र चित्रण के बारे में प्रायः कहा जाता है कि वे पूर्ण निष्पारित और औपचारिक स्थितियाँ में रखकर पात्रों का चरित्रोद्घाटन करते हैं। टेम्पल रास्ते के चरित्र चित्रण के सम्बन्ध में यह सच नहीं है। इसमें पात्र पूर्ण निश्चिन्त परिस्थितियों में पढ़ने के लिए पहुँचे होते हैं। इसलिए उनके आचरण और क्रिया प्रति क्रिया में किसी प्रकार की कृत्रिमता नहीं आती है। यहाँ नहीं प्रत्येक पात्र का चरित्र विनाम भी बड़े स्वाभाविक ढंग से हुआ है। यह आर पात्रों के संस्कार हैं तो दूसरी ओर उनके चारों ओर का वातावरण और परिस्थितियाँ उनके चरित्र निर्माण में सहायक हुई हैं।

जन्म तक चरित्र चित्रण प्रणाली का सम्बन्ध है अधिनाश चरित्र चित्रण लेखक ने किया है बस रामनाथ के एक ही स्थलाक नाम विश्वरूप को छानकर। जहाँ नहीं लेखक ने स्वयं चरित्र चित्रण किया है वह तटस्थ नहीं रह सकता है। यही नहीं पक्षपात पूर्ण चरित्रानुसंधान से उमने पाठकों का ही पूर्वाग्रह से ग्रस्त कर लिया है। किन्तु प्रस्तुत उपन्यास में मुख्य पात्रों के विषय में उसने ऐसा कम ही किया है। दयानाथ की वैश्व मे काँग्रेस की भाटिंग का समूह चित्रण या इनाहावाद में साहित्यिक गाँधी का समूह चित्रण जितना पक्षपात पूर्ण है उतना रामनाथ या अन्य किसी पात्र का नहीं। इसका कारण यह है कि इन पात्रों का चरित्रांकन लेखक ने उनके पारस्परिक संबंधों आचरण और स्वभाव द्वारा ही करने का यथासंभव प्रयत्न किया है। परस्पर बान्धवत्व में जहाँ पात्रों के सिद्धान्त और मता का परिचय मिलता है वहाँ उनके मना विज्ञान मनाविकार और मनो-दशाभा पर भा प्रकाश पड़ता है। दूसरे पात्रों द्वारा भी पात्रों की चरित्रिक विशेषताएँ उद्घाटित होती हैं। माकण्डेय और ब्रह्मान्त दयानाथ की अहम्मन्यता का कई बार उल्लेख करते हैं। माकण्डेय के इस कथन में कितनी सच्चाई है दयानाथ तुममें अहम्मन्यता है कठोर और कुरूप। राग तुम्हारी अहम्मन्यता बर्दाश्त नहीं कर सकता। तुम्हारी हर हरकत में तुम्हारे बर्बाद में तुम्हारी अहम्मन्यता का जबदस्त पुट रहता है और अपनी उस अहम्मन्यता को तुम देख नहीं पाते क्योंकि वह तुमसे पृथक् ही चीज नहीं।

टेम्पल रास्ते में सबसे प्रभावशाली व्यक्तित्व रामनाथ का है और वे ही प्रस्तुत उपन्यास के नायक हैं। इन्हें हम बस प्रतिनिधि कह सकते हैं। रामनाथ उल्लंघनी हुई सामंतीय व्यवस्था का एक अद्विग संस्थ है जो परिस्थितियों के घबड़ा में पड़कर भी अपने विश्वास का हटकर रहता है। रामनाथ में

सामंतीय सस्कारों की जड़ें गहरी तथा मजबूत हैं। भारतीय रश्मि का चित्र रामनाथ के चरित्र में सजावटा हुआ है। इस वय की जा मूल विशेषता है, आत्मानुभूति और अहम्मन्यता उन सबसे रामनाथ का चरित्र बात प्राप्त है। उनका बोलना व हास्य म तागा व माप व्यवहार करने में अहम्मन्यता उपकृता है। वे सत्य शिष्टि एव सुमस्तुत हैं और उनका अहम्मन्यता का और भी बल प्राप्त होता है। वे विज्ञान हैं अतः अपने कर्मों में वे तक द्वारा न्यायमय और आवश्यकतानुसार सिद्ध कर रहे हैं। अश्रेयस सरकारी उनका लिए लाभप्रदा है अतः वे उस महामग बत हैं। अहंभाव प्रबल होने के कारण उनमें स्वामित्व की उच्छ्रित भावना है। वे सदा ही पुत्रता चाहते हैं मुझना उनके स्वभाव के प्रतिबन्ध है। उनका तीन पुत्र हैं—रामनाथ, रामनाथ प्रसादाय। ताना नवयुग की चेतना में युक्त हैं और ताना तान विचारात् २० मं सन्त अपनात हैं। किन्तु रामनाथ इन नई राशियों के सुवका का भी जयन सम्मुख मुकाना चाहते हैं। इनस्वरूप पिता और पुत्रा में सघर्ष उत्पन्न होता है। पुत्रा का भी आत्मानुभूति और अहम्मन्यता परंपरागत रूप में मित है। वे मुझना नही जानते।

रामनाथ के तीनों पुत्र बन्तुत रामनाथ के चरित्र-विकास में महत्वपूर्ण हैं। उनमें रामनाथ की अहम्मन्यता का प्रकट होने का अवसर मिला है। पुत्रा की भावना एव इच्छा पर वे अधिकार रखना चाहते हैं। उन्हें अपना इच्छा से चलने का बाध्य करना चाहते हैं। अपने अधिकार की उपयोग उन्हें सन्त नही, दूसरा पर प्रभुत्व जमाना शासन करना उनका अभीष्ट है। मैं स्वामी हूँ मैं दाता हूँ, मैं समर्थ हूँ ये उनके अविनाशनीय व्यक्तिव के मूल-गुण हैं। उनमें चरित्र-बल प्रबल और इच्छा शक्ति अत्यंत है। उनका व्यक्तित्व विनय-पूर्ण है और मुझ पर उनका अंकुश और गुणता प्रतिबिम्बित होती है। उनकी आंखों में अहम्मन्यता का चमक है बाष्पा में स्वामित्व की गभीरता है रामनाथ के व्यक्तित्व के आगे अश्रेयस अत्यंत भा मय प्राप्त हैं। वे स्वामिनी हैं जिसके सम्मुख सरकारी कर्मचारी भी मुझने का बाध्य होते हैं। नागरिक मह है कि रामनाथ अविनाशनीय शासक और स्वामी है। जिना हान्त में विद्या के सम्मुख वे शर मानने का ठेकार नही। अहम्मन्यता का तुझ कान के लिए ही वे बिना भविष्य पर साव समझे दूसरों का अमान करते हैं दूसरों के उन्नीहण का कारण बनते हैं। वे समझते हैं कि मैं बर्ता हूँ, विधाता हूँ मैं सबकुछ हूँ मैं ही दाता हूँ। अपना आत्मानुभूति उन्हें करना सतत में उन्नीहण प्यारा है। वे बट्टा हैं 'मुझे बचने एक बट्टा का मोह है वह है अपना आत्मा का

अपने सिद्धान्त का और अपने विश्वास का । जो कुछ मैं करता हूँ वही ठीक है जा कुछ मैं सोचता हूँ उतना ही बड़ा है जितना बड़ा वह (ईश्वर) है । जपनी इसी अहम्भयता में पढ़कर वे अपने तीनों पुत्रों को खो बैठे हैं । साफ छूटे हुए पमानाय को वर्तव्य-बुद्धि का ज्ञान कराकर उसे झुकने नहीं दत्त । दयानाय को कायरता से काँपसे छोड़ने नहा देने और अपने आत्माभिमानों स्वभाव के कारण उमानाय को रुपये देकर बचाना नहीं चाहते ।

रामनाथ की अहम्भयता से लगता है कि वे कठोर निदयी हैं । किन्तु मृत्यु उसके विपरीत है । वे उत्तार हैं सहृदयता की उनमें कमी नहीं है । निम्नकाटिक अवगुणों से बूढ़ बेइमानी आदि का उनमें अभाव है । केवल एक अवगुण उनमें विद्यमान है जा अवल और अडिग है । वह है अमन्यता, जिसके कारण वे कभी कभी धर्म और दया को तिलाजलि दे बैठे हैं और इन्हें त्याग कर भी वे समझते हैं कि वे मनुष्यता से नीचे नहा गिरे प्रत्युत् ऊपर उठे हैं । रामनाथ की अहम्भयता जीवन-मयन्त अडिग रहती है और उनकी अहम्भयता की जड़ है उनका विश्वास—कि शक्तिशाली की सदैव विजय होती है । और सबल का दुबल पर शासन स्वाभाविक है उसका जन्मजात अधिकार है । सृष्टि में सबल और दुबल दो प्रकार के व्यक्ति हैं—विषमता ही प्रकृति का नियम है, इसीलिए ममता का सिद्धान्त असम्भव है । इस विषमता की सृष्टि में पाश विजिता की हिंसा की विजय होती है इसलिए हिंसा परमावश्यक है । यह बड़े आश्चर्य की बात है कि हिंसा को अपना अस्त्र मानते हुए भी अहिंसा पर उनकी श्रद्धा है । उनका कथन है कि अगर अहिंसा का सिद्धान्त सम्भव हो सकता है तो यह मानवता के लिए अवश्य हितकर होता । किन्तु वे जानते हैं कि विषमता में अहिंसा स्थिर नहीं रह सकती । अतः हिंसा अनिवार्य है ।

समय बदल रहा है विचार बदल रहे हैं किन्तु रामनाथ के विश्वास में परिवर्तन नहीं होता । उनका कहना है हाँ, समय बदल रहा है और समय के साथ दुनिया बदल रही है । लेकिन मैं कहता हूँ कि दुनिया गलत तरीके पर बदल रही है । यह अराजकता यह एक दूसरे पर अविश्वास यह दुराग्रह—एन सबसे हमारा कल्याण नहीं हो सकता कभी नहीं हो सकता । जहाँ हिंसा का सवाम है वहाँ विजयी वही होता है जिसके पास बल है यही प्राकृतिक है कि हम भी हिंसा को पाशविजिता की सीमा तक विकसित करें । अस्तु रामनाथ शिक्षित न्त हुए भी प्रतिप्रियावादी हैं । उनकी अहम्भयता ने उन्हें हठी बना दिया है । वे उसका भी विरोध करते हैं जा समयानुद्धन और परिस्थिति अनुद्धन नहा हैं । उनका चरित्र उपयाम में स्थिर (फ्लट) है । उनके विश्वासों और आस्था में

कभी परिवर्तन नहीं होता। व डूट जात है किन्तु बल्लत नहा। यही विश्वास उनसे सब कुछ छान सता है। अपने लडकों का कुर्बान करके भी वे सत्कार का जीवन चाहते हैं। अन्त में उन्हें हम विनिष्ठावस्था में कहते पाते, 'सब कुछ ममाप्त हो गया। काइ नहीं सब गय। अकले तुम प्रेत की तरह मौजूद हो रामनाथ। प्रभा की मृत्यु रोका जा सकती था—अगर जन में जाकर तुम उससे न मिल होते। उमा की छाप देखकर तुम बचा सकते थे—तबिन तुमने उस अधकार और निराशा में डबल कर हमसा के लिए उस अपना शत्रु बना लिया। और दया बड़ तुम्हारे पास आया अपनी पत्नी और बच्चा के साथ। लेकिन तुमने उस निदान बाहर किया। अपने ही हाथों तुमने अपना विनाश किया। तुम्हारी ममघटा तुम्हारा अहमन्यता—यह मंत्र निमाण न कर मक—अहान भयानक विनाश किया है—तुम अधम हो—तुम पापी हो।

रामनाथ में तबक ने उसके बग के ममस्त विषयताएँ पूजाभूत कर ली हैं। किन्तु फिर भाव टाइप न हाकर विशेष चरित्र हैं। अपने बग की चित्त वृत्तियाँ और प्रवृत्तियों के साथ उनमें अतिरिक्त वैयक्तिक विशेषताएँ भी हैं। वे प्रवाण विद्वान् हैं। उनका एक अकाट्य और सारयुक्त है जिससे उनका सम्मुख सभी भाग के अनुयायी निम्तर हो जाते हैं। उनमें मनुष्यता एवं पारा विकृता का एसा विलक्षण सम्मिश्रण है कि सब भावत रह जाते हैं कि यह मनुष्य दालव है या मानव। अन्तिवारी मनमाहन प्रभाकर उनके सम्बन्ध में कहता है—काला कि हरएक आत्मी एसा बन पाता। कठोर हात हुए भा उनसे करणा एवं उन्मत्ता की कमी नहा है। किन्तु उनकी उन्मत्ता यही एक है जहाँ तक उनका अहम पर चोट न लगे। जब उनके स्वामिमान पर घात होता है तो वे झूर मनुष्य से भा कठार हो जाते हैं। यही एक कि क्रियाँ तक पर लागी चात्र हान दत हैं सत्याग्रहियों पर कठार अत्याचार करते हैं। एक शब्द में रामनाथ के व्यक्तित्व का निर्माण मात्र अहमन्यता के तत्त्वा से हुआ है। उनका चरित्र के अन्य गुण उमा से उद्भूत हैं।

उमायास में दूमरा प्रभावशाली व्यक्तित्व का पाठन के मन पर अमिट छाप छाड़ता है शगडू मिश्र का है। ईश्वर भाग्य और कर्मकाण्ड पर विश्वास करने वाले शगडू मिश्र बड़े दयानु और निमल हृदय के मनुष्य हैं। असाध्य अन्याय और उन्मादन के वे विरोधी हैं। जो काम रामनाथ मान्य उमानाथ और प्रभानाथ नग कर पाते वह शगडू मिश्र अनरु और पवार हान पर भी कर पाते हैं। ये लोग मात्र सिद्धान्तवादी हैं। शगडू मिश्र के पास न का निदान है न कोई मताग्रह बचन व एक धरत हृदय मानव-मात्र है। अत्याचार

और उत्पीडन को देख व मनमोहन से कहते हैं गुनेव मनमोहन ! यू अत्याचार दिन दिन बढ़त जात है । अब हमारे सामने सवाल यू है कि ई सजका उत्तर कौनो तरह दीन जाय । तीन महात्मा गांधी अहिंसा अहिंसा चिन्ताय रते हैं, और हम कहित हैं अहिंसा कायरता आप ।

अत्याचार का विरोध करने के लिए वे गाँव में सगठन करते हैं किन्तु हिंसा का सहारा नहीं लेते यह जानते हुए भी कि हिंसा का अपनाकर वे अत्याचार और अत्याचारी का महत्तम उत्तर दे सकते हैं । कई बार उनके मन में हिंसा का अपनाते की बात आती है पर अपने हृदय की सहज करुणा और दयालुता के कारण वे ऐसा नहीं कर पाते बरन् हिंसा का रोक्ने के लिए वे अपने प्राणों का बलिदान कर देते हैं ।

आतंकवादियों में ही नहीं बरन् स्वतंत्रता की लड़ाई करने वाला मनमोहन का व्यक्तित्व सबसे अधिक प्रभावपूर्ण है । हिंसा का अपनाते पर भी वह यथाथ मानव है । उसका लक्ष्य पवित्र और ऊँचा है चाहे उसकी पूर्ति के लिए उस अमानुषिक कृत्य ही क्यों न करना पड़े । हिंसा का भाग वह इसलिए अपनाता है क्योंकि वह जानता है कि यही एक ऐसा मार्ग है जिससे द्वारा दुबल व्यक्ति मजबूत के अत्याचार और उत्पीडन का जवाब दे सकता है । झगड़ मित्र से वह कहता है सबल और निबल की लड़ाई एक हास्यास्पन्न चीज है सबल से निबल कभी भी पार न पा सकता । सबल और निबल की लड़ाई केवल एक तरह सम्भव है—निबल सबल पर जब बार करे तब पीछे से छिपकर । जब तक सबल निबल को देख नहीं सकता तब तक उसे नष्ट नहीं कर सकता । केवल इसी तरह यह लड़ाई सम्भव है । अतएव छिपकर बार करने का वह कायरता नहीं मानता क्योंकि कायरता उत्पीडन को सहन करना है उत्पीडन का सही सही उत्तर देते हुए सबके बार को बचाते रहना कायरता नहीं है बुद्धिमानी है । उसका यह तक व्यावहारिक दृष्टि से इतना सही है कि कोई उससे इनकार नहीं कर सकता । और अपने इस सिद्धान्त के कारण वह सत्ताधारियों पर ऐसी तीखी चोट करता है कि तमाम सत्ता हिल उठती है ।

नारी पात्रों में राजश्वरा और महालक्ष्मी के व्यक्तित्व में कोई नवीनता नहीं है । वे ऐसा भारतीय नारी हैं जो स्त्री का मूल तथा निराह मानती हैं । जिनके पास वृद्धा नाम की कोई चीज नहीं है । पति ही जिनका भाग्य विधाता है । इसके विपरीत वीणा एक ऐसी नारी है जिसमें स्त्री मुलभ गुण बहुत यून्य मात्रा में हैं । पहले पहल जब प्रभानाथ का साम्राज्यकार वीणा से एक विचित्र परिस्थिति में हाता है तो वह चौंक उठता है उसके कुल में समाज में स्त्रियों

कीमल परतत्र तथा विवश हाती थीं व ममता की मूर्ति थीं उनकी मुस्कराहट में करुणा था, उनके जीवन में त्याग था। और प्रयाग के सम्य समाज के एक अंग में उसने दया था कि स्त्री विलासिता और वासना की प्रतिमूर्ति है। वह नाचती है, गाती है लुभाती है और अपने इस कृत्रिम स्वर्ग में लोगों का दुःखकर वह नरक लिखता देता है। स्त्री के उस रूप का जित उमने उम दिन दया था उमने पहले कभी न जाना था। यह कृष्णा और विलासिता की मूर्ति नारी—यह प्राणा पर खेलने के न निकल आई? नारी मिटना जानती है मरना जानती है पर वह मारना कब से जान गयी?

भावना के बशीभूत होकर वीणा में प्रभानाय के लिए क्षणिक मोह अवश्य पना हा जाता है, किन्तु कृतन्व जान उने पथ से विचलित हो ने से बचा सता है। अपने दल की रक्षा के लिए वीणा वह काम कर लिखाती है जिसे पुष्प-वग नहा कर सता जिस सताधारी नहा कर सक।

अपनी पुरानी आत्मा के अनुरूप ही टेढ़े भंगे रास्त में भी वर्मा जी की दृष्टि तार्किक रही है। किन्तु प्रस्तुत उपन्यास में उन्होंने अपनी आर से नहा पात्रा के माध्यम से एक उपस्थित किया है। उनका प्रत्येक पात्र बौद्धिक रूप से प्रौढ़ है और किसी भी बन्धु की तौलने की उसकी अपनी दृष्टि है। विविध मिद्धान्ता और मतों वाले पात्र जब परस्पर मिलते हैं तब उनमें बान्धवियान् दृष्टि मिना नहीं रहता। प्रत्येक पात्र अकाथ्य तर्कों द्वारा अपना मत सही सिद्ध करने की वाशिश करता है। ऊपर से अकाथ्य लिखने वाले उनके तर्कों में मरत्य का अन्यास ही निहित है। उनके तर्कों में तथ्य उतना अधिक नहा जितना दूनरा के सामने अपने का ऊचा मावित करने की दुःमनीय प्रवृत्ति। आर जहाँ उनका यह इच्छा पूरा नहा हाती वहा उनका अहम् तिलमिला उठता है। न्या नाप के सम्बन्ध में यह अधिक सागू हाता है।

पात्रा में तार्किक दृष्टि हान के कारण उनके सवादा की शाना और भाषा भी बडा तक पूरा हो गयी है। जहाँ कहा बान्धवियान् का अवसर आया है वहाँ उनकी भाषा साधारण स्तर से ऊची हा गयी है। सवादा में राचकता एक सरमता अपार मात्रा में निहित है। विशेषतः हागडू मित्र के कथारकथन अमन्त रोचक है, क्योंकि उनकी भाषा में शोक भाषा वाली मिठास है का तुम इहें नाहा जानत हा? इनका नाम मनमोहन प्रभा के मित्र आय। तीन शितार खल के लिए गाँव मा आय हैं। और मातृभ्य, हम इतल यातपीत करिक ई निष्प पर पढ़ेवन कि ई बहुत विज्ञान मनई आय हागडू ने महत्र भाव से कहा, जिर उमने मनमाहन में कहा और ई मातृभ्ये बानपुर मा बकानत करत

तीन ई काँग्रेस के पीछे आपन बकालत अकालत छोड़ि-छाड़ि के जेन बन गये ।
तीन अब छूट के अपने वण्ण के दरमन करन बले आये हैं ।

टेटे मेटे रास्ते मे वर्मा जी ने अपने पात्र जमातार वर्ग से चुने हैं जब कि
राष्ट्रीय आन्दोलन के विकास म यह वग सबसे अधिक प्रतिनिध्यावानी रहा है ।
प्रेमचन्द ने भी प्रेमाश्रम म जमातार वग से पात्र लिए हैं । प्रेमाश्रम के प्रेम
शकर को जिस भाँति अनुताप प्रस्त नायक कहा जा सकता है उयी भाँति टेटे
मटे रास्ते के दयानाथ उमानाथ और प्रभानाथ अनुताप प्रस्त पात्र हैं । तद्गुणीन
समाज मे जहाँ एक ओर सामन्त वग का उत्पीडक समुदाय था वहाँ इमके
नवयुवक समाज म एक ऐसा वग भी उत्पन्न हो रहा था जा अपने वग के
शोपण और अत्याचार को हेय समझना था । ओर उमके प्रायश्चित क रूप मे
वह इस उत्पीडन और अन्याय को मिटाने के लिए कमर बाँध कर जुटा हुआ
था । टेटे मेटे रास्ते के उल्लिखित पात्र इमी वग के हैं । अतएव इस सम्बन्ध
म यह आरोप लगाना कि इन पात्रा क सस्कार और आचरण म स्वाभाविकता
नहीं है ठीक नहीं । जहाँ तक इस वग की अहम्मन्यता का प्रश्न है, वह इन पात्रा
म कूट कूट कर भरी है ।

टेटे मेटे रास्ते पर एक आलाचक ने यह आरोप लगाया है कि वर्मा जी न
चिन्तक के रूप मे ओर न कलाकार के नाते राजनीतिक उपन्यासकार की
मयात्ता का निर्वाह कर पाते हैं । उनका उपन्यास अन्त म पाठक को 'टेटे-मेटे
रास्ते पर ही छोड देता है । न ता पाठक को उद्बुद्ध करने की शक्ति है ओर
न चिंतन के लिए प्रेरणा है बल्कि देखक स्वय अवज्ञानिक ढग से राजनीतिक
विवेचन करके भ्रातिया फगता है ।* वस्तुन ये तभी आरोप अनगल और
तथ्यहीन हैं । जहा तक राजनतिक उपन्यास का सम्बन्ध है टेटे-मेटे रास्ते
अपने युग का एक मात्र सफल राजनतिक उपन्यास है । उसकी तुलना मे रखने
क लिए हमे कोई ऐसा उपन्यास नहा लिखता । जैसा कि पहले भी कहा जा चुका
है प्रेमचन्द के राजनतिक उपन्यास विशुद्ध राजनतिक उपन्यास नहा हैं ब्याकि
उनके तारा उठायी गयी राजनतिक और सामाजिक समस्याए एकाकार हो
गई हैं । उनका कभभूमि उपन्यास वैसा राजनतिक उपन्यास नहीं है जसा टेटे
मटे रास्ते है । इमक द्वारा वर्मा जी ने हिन्दी साहित्य का एक प्रौढ राजनतिक
उपन्यास दिया है ।



* डा चण्णी प्रताप जोशा हिन्दी उपन्यास समाज शास्त्रीय विवेचन
पृष्ठ संख्या ४० ४०१ प्र० सं० ।

मूले-बिसरे चित्र (१९५९)

'ट्रे-मे' राम्ने जस वृहत् उपन्यास के तरह वष पश्चात् वमा जी का 'मूल बिसरे चित्र' हमारे सामने आया। इस बीच आखिरी दाय (१९५०) तथा अपने खिलौने (१९५७) उपन्यास भी प्रकाशित हो चुके थे। किन्तु ट्रे-मेड राम्ने के बाद वर्मा जी के मस्तिष्क में मूल बिसरे चित्र की स्फुरता बनने लगी थी। 'मूढ आने पर कभी-कभी वे इसका लेखन भी किया करते थे। इस बीच जीविका के लिए उन्हें बम्बई, लखनऊ और दहली क चक्कर लगाने पड़े। जमकर एक स्थान पर न रह सकने के कारण, इतने वृहत् उपन्यास को लगाकर लिखने का अवसर उन्हें नहीं मिल पा रहा था। किन्तु जब १९५५ में वे स्थायी रूप से लखनऊ में रहने लगे, तो उन्होंने तीन-चार वष की अवधि में इस सूबे मनन और इतमीनान के साथ लिखा।

'मूल बिसरे चित्र' में जा प्रीति और शिल्प-वैशिष्ट्य मिलता है उसकी स्पष्ट चिह्न हम 'ट्रे-मेडे रास्त' में ही दिखने लगे थे। सम्मिलित-परिवार का टूटत हमने 'ट्रे मे' रास्त में देखा। रामनाथ का प्रत्यक्ष पुत्र पिता की चिन्ता किये बिना परिवार से छिटक कर अपना अनग माग चुन लेता है। यह अवश्य है कि मूल बिसरे चित्र के पात्रों की भाँति जीविकोपार्जन तथा आपसी मठन के कारण उन्हें अपने परिवार से सम्बन्ध नहीं तोड़ने पड़ते किन्तु इतना तो है ही कि उन्हें राजनितिक कारणों से घर से भागे भागे फिरना पड़ता है।

मूल बिसरे चित्र एक नायक विहीन उपन्यास है और नायक-हिरो के उपनाम के लक्षण हमें वर्मा जी के प्रारम्भिक उपन्यासों में ही निम्न लगे हैं। प्रारम्भ में ही वर्मा जी में अपने उपन्यासों में एक व्यक्ति का महत्व प्रवृत्ति नहीं रही। चित्रण में बीजगुप्त की स्थिति त्रिभूती पुमारगिरि की स्थिति उमसे कम महत्व की नहीं है। इसी प्रकार 'आखिरी दाय' 'ट्रे मे' राम्ने में नायक तो हैं परन्तु वष वृहत् नहीं है जो एक नायक का होता है। तीन वष का अजित प्रतीत होता है रमेश नहीं। 'आखिरी दाय' में

चमेली करती है रामेश्वर नहीं। टेढ़े मेढ़े रास्ते में तो यह नायक-विहीनता और भी स्पष्ट होकर हमारे सामने आती है। रामनाथ क्याकि दयानाथ उमानाथ और प्रभानाथ ७ पिता हैं और उनकी अहम्भयता से उपन्यास का प्रत्येक पात्र आक्रांत हो उठा है इसलिए हम उन्हें नायक मान ही मान लें अन्यथा रामनाथ की स्थिति दया उमा और प्रभा के सामने बहुत हल्की बैठती है। क्या सूत्र का संचालन भी रामनाथ के हाथ में नहा है। वह इन तीनों पात्रों में स्थिर गया है कभी एक पात्र कथा सूत्र में भागता है तो कभी दूसरा पात्र। नायक-विहीन उपन्यास का एक लक्षण यह भी है कि उसमें सतक एक वस्तु और प्रकारान्त से किसी एक पात्र के आश के प्रति आस्था का भाव स्थिर नहा रहा पाता। टेढ़े मेढ़े रास्ते में लगभग सभी पात्र अपने ऊँचे ऊँचे आश तथा सिद्धान्त रखते हैं किन्तु तैलक सभी के प्रति अनास्था प्रकट करता है क्योंकि उसके अनुसार सभी अपनी अपूर्णताओं से ग्रस्त हैं। इस प्रकार टेढ़े मेढ़े रास्ते में नायक-विहीन उपन्यास के लगभग सभी लक्षण धुंधले रूप में विद्यमान हैं।

प्रश्न यह है कि नायक-विहीन उपन्यास से हमारा तात्पर्य क्या है? इसका जन्म किस कारणों से हुआ? इन प्रश्नों का उत्तर देने के लिए हम सूक्ष्मता से साधना पड़ता है। आज लघुमानव की कल्पना ने महामानव की कल्पना का ध्वस्त भिन्न कर दिया है और इसी का परिणाम है कि साहित्य में नायक का महत्त्व घटता जा रहा है। लघुमानव की परिकल्पना का मूल उद्देश्य व्यक्ति का लघुता, क्षुब्धता, दुर्बलता और नगण्यता का प्रकाशन करना है। अतएव स्पष्ट है कि ठोस जादशवादी नायक के स्थान पर क्षुब्धमानव या लघुमानव जाया है। इस क्षुब्धमानव को तैलक ने असीम करुणा और सहानुभूति दी है। बीसवीं शताब्दी का विश्व क्या साहित्य इसका सागी है। रूसी क्या साहित्य में तो दीर्घ समय तक दुर्बल नायकों को गौरवान्वित और महिमान्वित करने की परम्परा चलती रही। विदेशी साहित्य की देखा देखी बंगला और हिन्दी क्या-साहित्य में भी दुर्बल चरित्रों का महिमान्वित करने का प्रचलन हुआ। किन्तु इसका एक पुत्रभाव दृष्टिगत हुआ। निस्सार गौरव न मनुष्य को बूढ़े अभिमान, मरम्मे के लिए प्रोत्साहित किया। यह कल्याणकारी सिद्ध नहीं हुआ। इस चरित्र निर्माण में क्षति पहुँचने लगी। फलतः दुर्बल चरित्रों की भत्सना होने लगी। अतएव अब वर्तमान स्थिति यह है कि एक ओर महामानव की कल्पना युगानु रूप नहा रहा और वह फेन्टसी प्रतीत होती है दूसरी ओर 'लघुमानव मानवता के विकास में कोई योगदान नहीं दे पा रहा है। यद्यपि साहित्य में नायक स्कूल ऐसा है जो लघुमानव के गुणगान में लगा हुआ है किन्तु यह

सुस्पष्ट है कि 'लघुमानव' का कोई स्वामी महत्व नहा है। ऐसी स्थिति में नायक का लाप अवश्यभावी है।

हमारे सम्मुख मूल प्रश्न यह है कि नायक का विलोप क्या हो रहा है ? इसका सशक्त कारण यह है कि आज मानव मूल्या में विघटन की प्रक्रिया चल रही है। व्यक्ति एक विचित्र प्रकार का आतंक स ग्रस्त है। वह समझ नहा पा रहा है कि क्या उसका लिए ह्याय है और क्या ग्रहण करन योग्य ? फलतः आज वह निष्ठावान् नहा रहा। ऐसी स्थिति में किसी भी ऐसे व्यक्ति का निमाण असम्भव है जो हम आत्मशक्ति और प्रेरणा प्रदान कर सके हमारा माग प्रश्नान कर सके या नायकत्व ग्रहण कर सके। वस्तुतः आज नायकत्व की सामग्य एक व्यक्ति में नहीं रह गयी है बदाचित् वह विसर गयी है—व्यक्ति समूह में। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि नायक का अधिकारी एक व्यक्ति नहीं रहा। इन परिवर्तित परिस्थिति और मायता का ही परिणाम है कि आज के अधिकांश मूधन्य लेखक नायकविहीन उपन्यास लिखने लगे हैं। इन उपन्यासों में समाज का कोई विशिष्ट अंग, कोई विशेष परिवार या विशेष व्यक्ति-समूह उनके चित्रण का विषय रहता है। उपयुक्त वकनव्य स इस भ्रांति का निवारण भी हो जाता है कि नायक विहीन उपन्यासों से तात्पर्य एस उपन्यासों से नहा है जिसमें नायक का अस्तित्व नगण्य है आर नायिका प्रधान है, प्रत्युत् ऐसे उपन्यासों में है जिनमें कोई पुंश या स्त्री प्रधान नहीं है। उपन्यास की क्यावस्तु भी उन पर केन्द्रित नहीं होती है।

हिन्दी में नायकविहीन उपन्यास की परम्परा अभी हाल की वस्तु है और इन उपन्यासों का उगलिया पर गिना जा सकता है। हिन्दी का प्रमुख नायक विहीन उपन्यास है—धर्मवीर भारती का 'मूरज का सातवाँ घोड़ा', लक्ष्मीबाई वर्मा का 'खाली कुर्सी की आत्मा' शिवप्रसाद मिश्र रूद्र का 'बहुती गंगा', कृष्ण चन्दर का एक गधे की आत्मकथा तथा भगवतीचरण वर्मा का 'भूले बिसर चित्र'। इन सभी उपन्यासों में नायक की परम्परागत मान्यता मरित हुई है। 'मूरज का सातवाँ घोड़ा' खाली कुर्सी की आत्मा और 'एक गधे की आत्मकथा' के क्या वाक्य क्रमशः माणिक मुन्ना निर्जीव कुर्सी और पशु गया है। यद्यपि इन उपन्यासों की अपनी विशिष्टता है किन्तु मूल विचार चित्र हिन्दी का सर्वोत्तम नायकविहीन उपन्यास है।

मूल-विचार चित्र में एक मध्यवर्गीय शाल्य परिवार की चार पाइपों का क्या है जिसने सामन्तीय जीवन का टूटते मध्य वर्ग को पतन और अन्त में मध्यवर्गीय पारणाओं का हान का आरम्भ होन देना और युग-परिवर्तन का

परिणामो को होता है। उपन्यास के कथानक की पृष्ठभूमि सन् १८८५-१९३० का भारत है और विशिष्ट परिवार के माध्यम में लेखक ने तत्कालीन भारत का भूल बिसरे चित्र को अपनी सवन्ना से गहरा रंग दिया है। उपन्यास को पढ़ते समय हम अतीत भारत में जा जाते हैं। 'भूने' जिससे चित्र का कैनवस अत्यन्त विशाल है और उस पर तद्दुर्गीत भारत की सांस्कृतिक सामाजिक आर्थिक और राजनतिक जीवन की झाँकी उभर आयी है। परिवर्तित परिस्थितियाँ में एक परिवार पर क्या प्रभाव पड़ता है और पीढ़ी दर-पीढ़ी उनके स्वभाव मनोवृत्ति और आचरण में क्या अन्तर आता जाता है इसका कलात्मक चित्रण इस उपन्यास में उपस्थित है।

सम्पूर्ण उपन्यास पाँच छोटे-बड़े खण्डों में विभक्त है। किन्तु लेखक ने प्रत्येक पीढ़ी को क्या वा पृथक्-पृथक् खण्डों तक सीमित नहीं रखा है। और इस प्रकार उसने कृत्रिम वस्तु विन्यास का सहारा नहीं लिया। उपन्यास का खण्ड विभाजन बल्लते हुए जीवन मूल्य और कथानक के नये मोड़ों के आधार पर हुआ है। लेखक ने प्रत्येक पीढ़ी का सघष अपनी गत पीढ़ी से उतना अधिक नहीं लिखलाया है जितना तत्कालीन वातावरण एक सम्पन्न में आने वाले व्यक्तियों या व्यक्ति समूह से। पहला खण्ड दा भिन्न सामाजिक स्तर के व्यक्तियों के बाह्य सघष का लकर लिखा गया है जिसमें ज्वालाप्रसाद को अचारण ही मानसिक वेदना सहनी पड़ती है। युग बदल रहा है और उसके साथ सत्ता एक हाथ से दूसरे हाथ में जा रहा है। ठाकुर और बनिये के इस सघष को लेखक ने बड़े प्रबल रूप में चित्रित किया है। ठाकुर बनिये से सत्ता में नीचा हुआ जा रहा है पर वह अपना मस्कारजय अहम तथा अभिमान नहीं छोड़ पाता। वह सदैव अपने का बनिए से ऊँचा समझता है। अपने इसी बरुष्पन के कारण ठाकुर बरजोर सिंह प्रभुन्याल से यह कह कर कि हम राजा खानदान के हैं कोई बनिया बकाल छोड़े ही हैं— क्षगडा मोल में लता है। यह क्षगडा इतना प्रखर रूप धारण करता है कि एक दूसरे की हत्या और आत्म-हत्या में परिणत हो जाता है। ज्वालाप्रसाद कस्तूर्य और भावना के चक्कर में पड़कर इस क्षगडे को शान्त करने का प्रयत्न करता है। याय और भावना के सघष को वह अपनी रूद्धा से अपने ऊपर ले लेता है यह ऊपर से अस्वाभाविक मने ही लगता है किन्तु ज्वालाप्रसाद जैसे प्रबुद्ध प्राणी में यह द्वन्द्व उठना मनोविज्ञान की दृष्टि से अत्यन्त स्वाभाविक है। उसका मन लाख कोशिश करता है कि उस दूसरे के क्षगडे से क्या लेना देना किन्तु उसकी भावुकता तटस्थ रहने से इनकार करती है। बरजोर सिंह और प्रभुन्याल दोनों गलत रास्ते पर हैं यह

ज्वालाप्रसाद जानता है। इसीलिए उमक माग म दुविधापूर्ण स्थिति आ खड़ी हाती है और वह अपना कर्तव्य निश्चित नहा कर पाता। एक स्थिति सभालने म दूसरी स्थिति त्रिगड उठती है। और अन्त में उम समस्या को मुलधाने में वह अपना चरित्र गिरा बैठता है बिना अपने स्वाय क। इस सब का बडा ही मनोवेगानिक चित्रण लखक ने किया है।

इम छड में ज्वालाप्रसाद की पारिवारिक समस्याए नहा उठायी गयी है यह कुछ अन्वाभाविक-भा लगता है। समबत लखक ने ये समस्याए इमलिए नहा उठाई कि ज्वालाप्रसाद ने पहल-पहल ऊवा सरकारी पत् सभाला था और वह अनायास ही इनम एसा फल गया कि पारिवारिक झगडा के उठाने का सबाल ही नहा रहता। दूसरा छड पूणत ज्वालाप्रसाद क पारिवारिक झगडा न भरा पडा है। शक्ति और अधिकार क स्थान परिवतन की कहानी इमम नी है। पहल छड में वह सामाजिक क्षेत्र म घटित हुइ है वही इसम पारिवारिक क्षेत्र म बीतती है। परिवार का सत्र बडा व्यक्ति उमका स्वामी नहा रह गया। स्वायित्व अब उसक हाथ म आ गया जिमके पैस का आश्रित पूरा परिवार है। इम पूंजीवाणे युग में पैसा ही शक्ति और अधिकार का मापदण्ड बन गया है। पैसा क बन पर बरजार्जमिह और प्रभुत्थान की शक्ति और अधिकार बलन। पैस क ही बन पर ज्वालाप्रसाद के परिवार म अधिकार और शक्ति के स्थान-परिवतन का यत्रमर आया। पर की मालकिन अब माम नहीं बहू हो गयी, क्योंकि उमका पति नमाता है और पूरे परिवार का भरण पापण करता है। ज्वालाप्रसाद क परिवार में छोणे-छाणे घाटा म अधिकार और शक्ति क बलनत हुए चिह्न देनन का मिलत हैं। मुशा शिवदान क यह लवता है कि अधिकार और शक्ति अरना स्थान बलन रह हैं एक तगह स ह्कर दूसरी जगह जा रह हैं सम्मिलित परिवार की परम्परा टूट रही है ता छितकी को दौट देत हैं कि वह छाटा अर्थात् राधेनाल की पत्नी का ही मालकिन ममसे। पर छितकी जो जवाब दती है उमम दृष्टी सम्मिलित परिवार व्यवस्था का रूप हमारे सामन आ जाना *।

छितकी समक उणे पर की मालकिन ज्वाला की बहू आय। ई जो मय रात्रपाट आय तीन ज्वाला की बगैलत मत्र नाग रहे हन ।

सम्मिलित परिवार-व्यवस्था अवारण ही नग टूटती जा रना है। उमकी युगइसों और दुःखरिणामों ने उस आन ही आन मालता बना लिया है। दूखरों पर आश्रित रह कर परिवार क अन्य मन्स्य आवारा और निकम्म हा जात

हैं। दूसरे की पसीने की कमाइ पर गुलछरें उठाते हैं और मेहनत का महत्त्व भूल जाते हैं। ज्वालाप्रसाद के चाचा आर चचेरे भाइया म य सब अवगुण घर कर जाते हैं। इसीलिए यह परिवार व्यवस्था टूटती है। सम्मिलित परिवार को तोड़ने वाली पहली पीढ़ी का व्यक्ति यह काम उठाने में मनुष्यता है क्योंकि जिन सस्कारों में वह पला हाता है उसका कारण बड़ा कामना मुह खाल कर वह बात नहीं कर सकता। ज्वालाप्रसाद चाचा और भाइया की जाल-साजी झूठ फरेब और निक्ममेयन से जब तग आ जाता है उसकी मानसिक बेगना जब चरमसीमा पर पहुँच जाती है तभी वह मुह खालता है। एक दो बार तो वह केवल साहस बाँधकर हा रह जाता है ज्वालाप्रसाद का ऊपर से ज्यो-ज्यो शराब का नशा उतरता जाता था त्पार-त्पार उनकी हिम्मत जवाब देती जाती थी। एक बार उन्होंने अपने समस्त साहस का बटारकर कहा भीष्म तुम मुबह चाचा से कह देना कि मुझे इन लोगो का साराव बसना पसंद नहीं, वे सब लोगो को लेकर फतहपुर चन जायें। खेर कोई बात नहीं। मैं कल मुबह यह सब एक कागज पर लिख दूंगा तुम चाचा को दे देना।

बाद में भी वह बड़ी मुश्किल से इन लोगो से घर से चल जाने का कह पाता है। किन्तु ज्वालाप्रसाद के मन में इन लोगो का प्रति आदर है ममता मोह है। वह इनको छूठकर नहीं जाने देता आन्द सत्कार से विदा करता है। किन्तु इनके बात की पीढ़ी ज्वालाप्रसाद के पुत्र गंगाप्रसाद में सम्मिलित-परिवार के लिए यह माह भी जाता रहता है। वह तो अपने चचेरे भाइया का अपना बताने में भी सकौच करता है।

इस खड का अन्त सम्मिलित-परिवार का टूटने और गंगाप्रसाद का पत्न की व्यवस्था करने से होता है। एक लम्बे काल को लाँधकर लेखक तामरे खड का आरम्भ करता है। गंगाप्रसाद पत्न लिखकर टिप्पटी कलक्टर बन गया है। तीमरा तथा चौथा खण्ड गंगाप्रसाद के जीवन से संबंधित है। अज अधिकार शक्तिशाली के हाथ में आ जाता है। गत पीढ़ी और बतमान-प्राणी के जीवन मूल्य बदल जाने हैं। झूठ और बेईमानी ज्वालाप्रसाद के पिता मशी शिवनाथ के जीवन के आधार थे। उनकी जर्जिनवीमी इन्हा के आधार पर चलती थी। अपने बेटे से भी वे झूठ एवं बेइमानी का सहारा लेने को कहता है। वह उम जेई की सम्पत्ति हस्तगत करने की सनाह दता है तासाजी से दूसरे की जमीन अपने अधिकार में करने का लिए ज्वालाप्रसाद को झूठ बालन की सनाह दता है। पर ज्वालाप्रसाद इनमें से एक नहीं करता। परिणामस्वरूप शिवनाथ का जीवन-मूर्खों से ज्वालाप्रसाद के जीवन मूल्य टकराते हैं और हमसे शिवनाथ की

हार हाती है। किन्तु मृत्यु का वरण करके ही वह इस हार का अपनाता है। ज्वालाप्रसाद सत्रैव न्याय और सत्त्वाइ पर डटा रहता है। किन्तु गंगाप्रसाद तक आन-आत जीवन-भूयों में विघटन होने लगता है। उसके जीवन-भूय व्यक्तिगत स्वार्थ तक ही सीमित हो जाते हैं। वह झूठ नहा धोलता रिश्वत नहीं लेता पर अपनी अन्त चेतना के अनुसार कोई काम भी नहा कर पाता। वह अपनी परिस्थितियों में विश्वास है। अपने पद की मर्यादा का उल्लंघन उस छो दना है। पद का मोह उसे इतना अधिन है कि अपनी इच्छा के विरुद्ध वह अन्याय करने का विश्वास हाता है। और मही उसका पतन का कारण बनता है। वैम ज्वालाप्रसाद को क्षणिक आबरा में आकर अपना चरित्र-पतन करना पडा था—किन्तु वह उसने स्वायत्तता नहीं दमरों की भलाई के लिए किया था। किन्तु गंगाप्रसाद अपनी भलाई के लिए अपना पतन करता है। अपनी भावना को दमने के लिए अपने द्वारा किए अन्याय को सही साबित करने के लिए वह शराब के नरो में अपने को भुनाए रखने की कोशिश करता है। इस मानसिक और बाह्य संपर्क में वह मुक्ति नहीं पा सकता क्योंकि वह जिस ब्रिटिश सरकार का नौकर है उससे उस पद का लालच देकर अपने ही देश वासियों पर अत्याचार करने का मजबूर किया है। अंग्रेजों ने जमींदारों और बुद्धिजावियों के हाथ में कुछ अधिकार देकर अपने ही देशवासियों पर अत्याचार कराया। मिटी मजिस्ट्रेट का पद देकर सरकार ने गंगाप्रसाद को जौनपुर का स्वतंत्रता-आन्दोलन दबाने की जिम्मेदारी दे दी और गंगाप्रसाद ने उन निष्पत्तियों पूर्वक निमाया भी। फिर कानपुर का ज्वाइंट मजिस्ट्रेट बनाकर उसे नज दिया, जिसे वही भी वह स्वदेशी आन्दोलन का दमन करे। जब सरकार का काम हो जाता है तो वह उसे दूध की मक्खी की तरह निकालकर फेंकती है। वह फिर से डिप्टी कमिश्नर बना दिया जाता है। इस रणभेद की नीति में वह बुरी तरह झुझला उठता है। गंगाप्रसाद के दिल में जलन भर गयी थी वह लगातार बढ़ती जा रही थी। रह रहकर उसे यह अनुभव हो रहा था कि वह एक असह्य और उद्दण्ड अंग्रेज से बुरा तरह पराजित हुआ केवल इसलिए कि वह हिन्दुस्तानी है। उसकी इस पराजय का मूल कारण था ब्रिटिश सरकार की रणभेद की भावना। बिना जाने हुए वह भावनात्मक रूप से ज्ञानप्रकाश के निकट आता जा रहा था। सत्य न्याय मानवता गुलाम के लिए इनका कोई अस्तित्व नहा है। एक 'गुलाम की हैसियत में उसका अस्तित्व एक पानतू जानवर की भाँति था जिसे अपने मासिक के इशारों पर चमना होता है जिसे न कोई चेतना होती है और न कोई भावना ही।

वह अपने अन्दर बाँध विन्नेह को जितना ज्ञाने का प्रयत्न करता था उतना ही अधिक वह विन्नेह बढ़ता जाता था। और गंगाप्रसाद व इस मानसिक संघर्ष की चरम सीमा सरकारी नौकरी में इस्तीफा दिना में हाती है। किन्तु उसके अन्दरवाली कायरता का सहारा मिल जाता है। मुसलमान की घटना से। और वह यह कहकर इस्तीफा फाँद देता है कि जब गुलामी ही करनी पड़े तो आराम के साथ हस खेनकर क्या न भागी जाए। किन्तु इस घटना से वह टूट जाता है। मरने से पहले वह अपने पुत्र नवल को अपने टूटने का रहस्य बतलाता है— नवल जानने हाँ मैं क्या टूटा और कैसे टूटा? तुम ताजुब करोगे यह जानकर कि अपने का तोड़ने वाला स्वयं मैं हूँ। मरी अन्दर वाली कायरता आर इस कायरता की घुटन में मुझे ताड़ दिया एक दिन मैंने अपनी नौकरी गुलामी और व्यवस्था से विन्नेह किया था। मरे अन्दरवाला वह विन्नेह वास्तविक था। नाम चाचा जानते हैं इस बात को। मैंने यह तय कर लिया था कि मैं इस्तीफा दे दूँगा। लेकिन अनायास ही मरे अन्दरवाली कायरता को एक छोटा सा सहारा मिल गया और मरी कायरता उम पर चढ़ बैठी। मैंने अपना वह इस्तीफा फाँद डाला था और अपमान का जहर पी लिया था मैंने। लेकिन वह अपमान का जहर कितना कड़ुवा था और वह जहर कितना धीमा और घातक था मैं उसी समय टूट गया था जब मैंने अपना इस्तीफा फाँद डाला था।'

गंगाप्रसाद के पुत्र नवल की मायताए तथा जीवन मूल्य अपने पिता से भिन्न हैं। वह उठती हुई मानव चेतना का प्रतीक है। एक ओर दश की नव चेतना से वह पूर्णतः अनुप्राणित है और दूसरी ओर अपने पिता की असफलता के रहस्य से परिचित। उसका पिता पद उन्नति और भ्रान्त के चक्कर में पड़कर अपनी अन्त चेतना के स्वर को नहा सुन पाया। किन्तु नवल किसी से दबता नहीं है और न ही वह अपनी आत्मा के खिलाफ कोई काम करता है। बैरियर को वह अपने जीवन में उनका अविकल महत्त्व नहीं देता जितना ममता और भावना को। अपने पिता और परिवार के प्रति कर्तव्य को वह समझता है इसलिए अपने बैरियर और प्यार को वह ठुकरा देता है। उसकी मायताए निश्चित और स्पष्ट हैं। कभी एक को अपनाते और दूसरे को छाड़ने की बात उसके मन में आती ही नहीं है। उम जो कुछ संघर्ष करना पड़ता है बाहर न करना पड़ता है अन्तमन से नही।

नियति और भाग्य के प्रति जाग्रत उगभग उपवास के सभी पात्रा म है। किन्तु वे उनके जीवन में निष्क्रियता जाने के कारण नही बने हैं। प्रत्येक पात्र

सधयशास्त्र है। वर्माजी की रामायण के प्रति आसक्ति इस उपन्यास में भी बनी हुई है। उसका चित्रा वे बना रम करत हैं। किन्तु हाम्य का प्रस्तुत उपन्यास में अनावस्था है। छितकी ओर शिवनाथ जैद और ज्ञानाप्रसाद में जा चुलपन और विनाश हुआ है वह उनका रामायण का हा एक अंग है। स्वतंत्र रूप में उसका काइ जन्मिन्त नहा है। इस उपन्यास में व्यंग्य अवश्य अधिक मुखर हुआ है पर पूर्ववर्ती उपन्यासों की भाँति वह मन्त्र का ओर में न हाकर पात्रों के पारम्परिक व्यंग्य प्रतिबन्धों के रूप में हुआ है। इसलिए वह निरपेक्ष व्यंग्य न हाकर व्यक्तित्व रूप में हुआ है। एत-दूनर का नाचा शिवान का प्रवृत्ति उनमें अत्रि है। और यह प्रवृत्ति इन पात्रों के स्वभाव का अंग है। फलतः उनमें अधमत्य ही निहित है।

लगभग सभी पात्रों का प्रतिनिधि है। मन्त्र का उद्देश्य प्रस्तुत उपन्यास द्वारा मानव-मूल्या का सङ्ग्रह उपस्थित करना है। फलतः वेग प्रतिनिधि पात्रों केना उनमें लिए आवश्यक था। ठाकुर गजराजसिंह और ठाकुर दरजारसिंह जहाँ ठाकुर वंश के प्रतिनिधि हैं वहाँ प्रमुखायान उठते हुए बनीया वेग का। महाराज और महारानी विजयपुर राणा प्रतापसिंग शमशेर राजा मत्स्यजित प्रमप्रसिद्ध राजा महाराजाओं के अवशेष चिह्न हैं तो लाल रिपुमनसिंह उन वेग के उठते हुए नवयुवक का। राधाकिशन मठा और कैलाश एक विशिष्ट वेग के प्रतिनिधि-मात्र हैं। इन गिने चुने वेग प्रतिनिधि-पात्रों के अतिरिक्त प्रमुख पात्र शिवनाथ ज्ञानाप्रसाद गंगाप्रसाद नवलकिशोर, भानप्रकारा विद्या मयत्रत मलका उर्फ माया, यमुना आदि पात्र वेग प्रतिनिधि मात्र नहीं हैं। इनमें अपना वेग की मूल विशेषताएँ अवश्य बतमान हैं। किन्तु उससे अधिन उनमें अपना निजी व्यक्तित्व है। उनमें सम्कार और परिस्थितियाँ से संधप करने की प्रवृत्ति है। उनका समस्त जीवन बाह्य एवं आन्तरिक संधप में बीत जाता है। मन्त्र ने इस संधप का बड़ा सूक्ष्म निरूपण किया है क्योंकि उसी के द्वारा वह मानव-मूल्या का सङ्ग्रह किया सकता था जो प्रसारान्तर में उपन्यास की आधार शिना है।

प्रथम पात्र के दृष्ट में ठाकुरा है—वह दूना चाहें बाह्य हा या आन्तरिक। परिस्थिति एवं वातावरण में उनमें बाह्य संधप में पात्रों में मानसिक संधप के रूप में एक विशेष प्रकार की उत्तर पुपुत हान लगता है। हृदय के इस आलापन विनाशन के कारण वह एक विशिष्ट आचरण अपनाता है। मशा शिवनाथ प्राने मन्त्रों के कारण गद्य-संधप में लमा जाता है कि उन्हें अपना गद्य ही ममान्त कर देना पना है। यह मन्त्रों द्वारा जानसाज और धामापी करने

वाले हैं। किन्तु अब परिस्थितियाँ बदल गयी हैं वातावरण बग्न गया है, इस लिए उनका पुत्र इन सब धाता को अनतिक तथा ह्य समझता है। फलत यह सब करने का तैयार नहा होता। पिता व आश पुत्र व आशों स टररात हैं और उसमे पुत्र की ही चीन हाती है। किन्तु पुत्र की यह रिजय पिता को तोडकर ही नहा रख देतो पिता व अन्त रा कारण बनती है। एक आश की हत्या म दूसरा आश पनपता है। ह्य सामाजिक सघप की चरम-मीमा का चित्रण लेखक ने बडी कुशलता से रिया है। ज्वानाप्रसाद मे पिता के सस्फारा से अधिक अपने मातृ-कुल के मस्कार हैं जिमने पनस्वरूप उसरी नतिरता अनति कता की मायवाए भिन्न प्रहार की बन जाती हैं। वह शूठ जानगाजी धावगाजी का अनातक समझता है पर उनर परिप्लृत रूप म उनशा हुआ है। रिश्वत के रूप म वह रुपया पैसा नहा ले सरता किन्तु पन-पून उन का वह बुरा नग सम झता। रिश्वत के रूप म दी गयी वह जैर्ई की अशक्ति का घली ता लोटा देता है किन्तु जीवन-पयत उसकी सहायता लेता रहता है—गगाप्रसाद के भरण पापण के रूप म। नशे और रोमास के लिए भी उसमे जो कमजोरी है वह भी मुशी शिवलाल वाली कमजोरी का परिमाजित रूप है। वह जमानारा की महकना म भाग ल सकता है जैर्ई को भोजी के रूप मे अपना सकता है।

गगाप्रसाद के जीवन मे सघप के क्षण अधिक आते हैं क्योकि उसके धान म मानव मूल्यो का सक्रमण अधिक तेजी से हो रहा था। क्या अपनाना चाहिए और क्या त्याग है—इस युग के व्यक्ति के गामने यह समस्या विशप रूप से थी। जिन लोग का व्यक्तित्व प्रखर हाता है और जा परिस्थिति से लोहा लेने का साहस रखने है वे टूटते नही परिस्थितियो को बल देते हैं। किन्तु परि स्थितिया के सामने जिनका व्यक्तित्व हल्का पडता है वे उहे बलते तो क्या हैं उनस जूझकर स्वय टूट जात हैं। एक ही युग के दो व्यक्ति हैं गानप्रकाश और गगाप्रसाद। ज्ञानप्रकाश म वह व्यक्तित्व है जो युग निर्माण कर सके चरित्र निर्माण कर सके। परन्तु गगाप्रसाद मे दूमरा की परिस्थितिया मे उपल पुपल लान की क्षमता भले हो हो स्वय उनस जूझने वाला व्यक्तित्व नही है। और इनीलिए वह टूट जाता है। अपनी पराजय का उत्तरदायी वह स्वय है।

उपयाम के गरिमामय चरित्र है—गानप्रकाश नवलकिशोर विद्या और मल्का या मामा शर्मा। गानप्रकाश और नवलकिशोर के माध्यम से लेखक के आश बोनने हैं। विद्या और माया भारत की प्रबुद्ध नारियाँ हैं। छिनकी और भीष्म के माध्यम से स्वामिभक्त नौकर का चित्रण हुआ है।

वमा जा ने नारा का मन्त्र स ऊचा स्थान लिया है। विशेषतः उम नारी का जा ममाज की दृष्टि में पवित्र है। चित्रदत्ता सराज और चमेली का ही दूसरा रूप हमें भूत विस्तर चित्र की मलका में मिलता है। वह बन्धा है पर उसका विनाश पुण्य का कामुकता से है। वह गगाप्रसाद का प्यार करता है किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि बेश्या होना व नाउ वह प्रयत्न व्यक्ति से शारीरिक सबंध स्थापित कर सके। गगाप्रसाद जय अलीरजा को उमक पर उतर पहुँचता है ता वह विगड उछता है और मन-ही-मन वह कुछ निश्चय कर लेती है जिससे वह इस कामुक व्यक्ति के हाथ में न पडे। वह म गार्हस्थ्य-जीवन अनाकर जोर स्वतंत्रता आनन्दन में सक्रिय भाग लेकर वह अपनी जीवन धारा बन्द नहीं देती है। उसका यह हृदय-परिवर्तन या जात्रन परिवर्तन प्रेमचर के नारा-यात्रा का मीति नहा है। किन्तु आश की प्राप्ति के लिए आश-आश्रम का स्थापना उन्होंने नारी-यात्रा से नहा कराया है।

विद्या एक एमी नवयुवता है जिसमें समान की कुरूपताका से विनाह करने का साहस ही नहीं सम्मान्य भी है। वह अपने नमुरान वाला को मुर्ता प्रभाव देकर चली जाती है। जिन समय विनाह का आग उसका दिल में भङ्कती है—उस क्षण-बंदे का ध्यान नहा रहता। जय उमका श्वमुर विश्वराप्रसाद अयमानजनक शत्रु कहता है ता वह शतान कहा का कह कर उमकी आरक्षण लेकर क्षणटती है।

यमुना और शक्तिनी के सम्बन्ध आश्रम भागतीय नारी बाने हैं। श्रेष्ठ धर्मराज्य के उमानाय की पत्नी लक्ष्मी की तरह वे अपने पतिव्या की कमजोरियाँ जानने हुए भी, उनकी पूजा करती हैं जीवन-पर्यन्त उनसे महयोग बनाय रमना है। यमुना जैसे और ज्वालामुखी का अर्थ सम्बन्ध जानते हुए भी मौन रहती है। ज्वालामुखी को इस पर आश्चर्य हाता है 'तुम्हें मातूम था और तुमने जाहिर नहा हाने लिया तुमने बुरा नहीं माना तुमने शिकायत नहीं की। सम्बन्धकारिणी की तुम शक्तिनी काठिरकारी करती हा यह जानती हूँ कि वह मुझे तुमसे धीन रही है।

यमुना खिलासिलाकर हम परमा सम्बन्धकारिणी का मुँह कि वह मुझे मुझे छान सके। इस पर की मानसिन सो मैं हूँ। तुम सम्बन्धकारिणी के माप हँस-गान मन ही सो, लेकिन रहागे मेरे श्रमसा-हमेसा के लिए।

प्रस्तुत उन्व्याप्त में वर्मा जी की चरित्र चित्रण शक्ती में और भा अधिष्ठ विद्या हुआ है। यद्यपि वे चरित्रों की विद्या देने का आश्रम पूज्यता छान नहीं

पाये हैं फिर भी वह अत्याधिक कम अवश्य हो गयी है। पात्रा व स्वभाव सम्बन्धी रिपोर्ट ने चरित्र विकास की पूर्व सूचना भन ही दे दी हो पर वह है सच्ची। लक्ष्मीचन्द के सम्बन्ध में लखन उसकी विशाखावस्था में ही कह देता है कि माता पिता की एक मात्र सतान होने के कारण लक्ष्मीचन्द अभिमाती और उद्धत स्वभाव का था। लक्ष्मीचन्द को अपने पिता के सभी गुण प्राप्त हुए थे। लक्ष्मीचन्द की अवस्था सोनह साल की थी लेकिन वह काफी माहमो था और आम-पाम उसका तातक था। बनिए व लड़क में साहस और दम एक के कारण था। पहला कारण तो यह था कि लाना प्रभुपाल को जमानार हान के कारण शासन करना पड़ता था। दूसरा कारण यह था कि लक्ष्मीचन्द अपने मामा के यहाँ बानपुर में रहकर अप्रजो शिखा प्राप्त कर रहा था और नगर वामा बन जान के कारण उसकी हिम्मत खुल गयी थी। इसी विशाख लक्ष्मीचन्द का विकास लखपति पूजोपति लक्ष्मीचन्द के रूप में होता है। मृत्यु शय्या पर पड़ी जेदेई का यह कथन कि ठीक अपने धाप के गुण पाये है तू ने लक्ष्मा ही लखक की पूर्व सूचना को सत्य प्रमाणित करता है और उसका आचरण भी उसकी पुष्टि करता है।

वस पात्रो का अधिकांश मानसिक सधप उनके आचरण द्वारा अभिव्यक्त हुआ है। प्रत्येक पात्र आन्तरिक द्वन्द्व की छत्रपटाहट से इतना अधिक प्रस्त है कि वह उसके आचरण में अनायास की प्रकट हो उठा है। कभी यह आचरण आकास्मिक रूप में हुआ है और कभी साधारण रूप में। गगाप्रसाद बड़े ही उत्तजित स्वभाव का व्यक्ति है इसलिए उसका आचरण प्रायः आकास्मिक रूप में फूटा है। गगा के इस स्वभाव की पूर्व सूचना लेखक ने दूसरे पात्रों के कथाप कथना में पहल ही दे दी थी। पंडित मामेश्वर दत्त कहता है और गगा की सान्निध्य अकड उसकी सभसे बड़ी दुश्मन है। अपन इसी स्वभाव के कारण गगा पार्टी में इतना अधिक मडक उठता है कि उसे यह भी ख्याल नहीं रहता कि वह एक शक्तिशाली अप्रज से उलझ रहा है। बाद में उत्तेजनावश ही वह अपना दस्तीफा लिखता है। और उसी के फलस्वरूप फिर से उसे फाड कर भी फट गया है। उसके स्वभाव में भावावेश की मात्रा इतनी अधिक है कि उसे अत्रिपुर का ख्याल नहीं रहता। मता के साथ के रोमास में उसका यह नावा वेश अनर बार प्रकट हुआ है।

लक्ष्मीचन्द और गगाप्रसाद के आचरण में समति है क्योंकि वह उनके स्वभावानुवृत्त हैं। परन्तु कुछ पात्र ऐसे भी हैं जिनके आचरण ऊपर से दखने में समतिपूर्ण नहीं लगते। गगाप्रसाद का भावावेश में जेदेई को अपनाता

अगर उस जहाँ असंगत प्रतीत होता है उसका सम्कारण क प्रकारों में वह मर्ति पूण है। पिता क सम्कारण और परिस्थिति का माँग ता वह नहा टुटता पाता। पात्रों क मनाविधान का विश्चरण लम्बक न कनी ता दूसर पात्रों द्वारा कराया है और कभा स्वयं उपा क द्वारा। जेन्द का आम-समपण और ज्वानाप्रसाण क उस गहन करने बान आचरण भी व्याख्या लम्बका पला समुना करता है। ज्वानाप्रसाण जब कयन इम आचरण स उपास हा उठता है, ता वह कहता है

योग्य सहा सहाता द्यता है। लम्बरणार क चल जान क धाण लम्बरणारिन न तुम्हारा सहाता चाहा। क्यकि तुम सहाता दन का तैयार य ता उस तुम्हारा सहाता मिल भी गया। नकिन तुम वहाँ भाग खड न हा। उस सहाता दना ब न कर दा इमलिए लम्बरणारिन न तुम्हारे सहाता का मान चुकाया है धन स मन स और तन स।

अथाय समुना क इम कयन स जस ज्वानाप्रसाण क हाय कयने इम आचरण का रहस्य सग जाता है जिस वह कना तक समझ नहा पाया था। फिर ता वह स्वयं हा उसका विश्चरण कर उठता है। ज्वानाप्रसाण न एक अजीब आश्चर्य क माय समुना का दशा। क्या जा कुट्ट समुना न कहा वह सय है? ज्वाना प्रसाण का वह तिन याण हा आया जब लम्बरणारिन सौ अक्षरियाँ लेकर उसक पाय आयी थी, उन उपाहार देने। क्या वह उपाहार उस सहाते का मूल्य नहा था जिस जदइने प्रसुप्तमान की मृत्यु क समय भागा था और जिस उमन बरज्जार सिंह क विश्चद बयान दकर तिया था? और उस तिन ज्वानाप्रसाण न सौ अक्षरियाँ वापिस कर दी था। जेन्द का पता चल गया कि ज्वानाप्रसाण धन स नहा गराण जा सकत उनका सहाता मन स हा मिल सकता है। नकिन मन एक अनिश्चित सगा है क्यकि वह भौतिक नहा है। अगर मन स ज्वाना प्रसाण जेन्द का और आकर्षित य ता उस आक्षर्य का कद ता कहा चाणिए जा भौतिक हा, और वह क सन हा सकता है।

और ज्वानाप्रसाण का मीर सभावत इमन की बाँते याण हो आयीं। उन्ही अनुभव किया कि मार सार्व बुद्धिमान हैं जदद बुद्धिमान है समुना बुद्धिमान है। अगर इम मामल में को नितुद्धि है ता वह स्वयं है। ज्वानाप्रसाण का कनी बुद्धिमानता पर शङ्कनट्ट हान सर्गी है।

जिम समय पात्र जिमी विशेष प्रकार का आचरण कर देखत हैं ता समय क अनन मनाविधान स परिचित नहीं हा पाण। किन्तु जब लम्बका भावा बरा समान्त हा जाता है और के कना मनाविश्चरण करने का स्थिति में आ जान

हैं तब वे अपने आचरण तथा व्यवहार के रहस्य को पा जाते हैं। गंगाप्रसाद जीवन-मयन्त टूटता रहा बहुत कुछ खोता रहा, किन्तु वह अपनी पराजय का कारण नहीं समझ पाया। जीवन के अंतिम दिना में वह अपने टूटने का रहस्य पा जाता है। इसका प्रकाशन वह अपने पुत्र के सामने करता है जिसका उत्पन्न प्रसंगवश हम पहले कर चुके हैं।

भूत विसरे चित्र के सभा अत्यंत रोचक सरस और पात्रानुकूल हैं। इसमें निरर्थक कथोरकथनो का अभाव है। अधिकांश सवा चरित्र प्रकाशन में सहायक हुए हैं। ठाकुर दरजोर सिंह की अहमन्यता उष्णता, और अकड़ की अभिव्यक्ति उसके कथनो में प्रकट हुई है। हाँ नायब माहम आज इस हाथी को भी अलग करने को तैयार हो गया था अपनी जमीन बचाने के लिए। लेकिन कहना है कि हाथी बाँटना जानता है खिलाना बठिन है। वह साला बनिया क्या हाथी पालगा। तो लौट आये हम। यह कहते-कहते दरजोर सिंह जोर से हस पडा। लेकिन जीजा हमसे न रहा गया और हमने उसके दरवाजे पर धुक कर कह दिया कि बनिये साले हाथी क्या पालगे हाथी तो पलता है हम राजकुल वालो के यहाँ।

पात्रानुकूल भाषा होने के कारण सवाद अत्यंत रोचक और स्वभाविक हो उठे हैं। विशेषकर घसीटे छिनकी और भोगू के सवालो में लोक भाषा का वह माधुर्य है जो पाठक को मोह नेता है। छिनकी का चुलबुलापन उसकी मिजाजी और स्पष्टवादिता उसके सवादो में फूट पडी है आगी लागे ई नसा मा और नसा करें वाले मा। पीके बीराय जात है। तेव ल आइन मुला अब हम होली की तरफ न जइव।

बसे वर्मा जी की भाषा स्वयं लोक प्रचलित उद्ग शब्द युक्त है किन्तु जहाँ उन्होंने मुसलमान पात्रो का बार्तालाप दिखाया है वहाँ उनकी भाषा विशुद्ध उर्दू मिश्रित है। शिक्षित पात्रो के सवाद परिष्कृत भाषा में हैं और उनका प्रौढता के प्रतीक है। सभी दृष्टियों से भूले विसरे चित्र हिन्दी-कथा साहित्य क्षेत्र में अत्यंत वृत्ति हैं और वर्मा जी के कथा-साहित्य की प्रौढतम रचना भी।

सामर्थ्य और सीमा (१९६२)

कोइन कोई समस्या समाजों के प्रत्येक उपासक में निहित है। पर वहाँ वह अनग होकर आया है और वहाँ धुलमिल गयी है। 'चित्रलेखा' में ममम्या अपना अनग अस्तित्व रखती है, जब कि तीन वर्ष 'आखिरी दाँव' टड-मड राम्न् और भूल बिसर चित्र के कथानक में वह इतनी धुलमिल गयी है कि उसका अनग अस्तित्व हम कहा नहीं सकता। पर सामर्थ्य और सीमा में एक बार फिर समाजों पूरी तरह से समझा से चिपक गए हैं। प्रस्तुत उपन्यास की समस्या है मनुष्य के सामर्थ्य और सीमा का। लेखक अपनी समस्त रचनाओं में नियतिवादी रहा है। यहाँ भी वह इस सामर्थ्य और सीमा पर अपने नियतिवाद का ही घोषणा है।

'सामर्थ्य और सीमा' की समस्या शाश्वत है और इसलिए इसके प्रमुख चरित्र दश-काल की सीमा से परे हैं। पूजापति, इजिनियर, कवि-लेखक रिखा टर आर्टिस्ट, मंत्री का चरित्रांकन विशाल घरातन पर हुआ है। इनकी मना वृत्तियाँ, आत्माओं और आचरण में उपासकित व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व हुआ है। यदि उपन्यास की केन्द्रिय समस्या—उसकी प्रतीकात्मकता हटा दी जाय— तो मनुष्य उपासक में हमें एक ऐसा व्यक्त व्यक्त स्थिति है, जो अन्ततः जाना है। यह व्यक्त है उन्मिषित प्रतिनिधियों पर समाज की विवृति पर तथा का रूपित शासन प्रणाली पर।

सामर्थ्य और सीमा का कथानक स्वतंत्र भाग की पृष्ठभूमि पर निर्मित किया गया है। इसलिए स्वतंत्र भारत की सामाजिक सांस्कृतिक और राजनितिक स्थिति प्रस्तुत उपन्यास स्वयं ही उभार कर रख देता है। समाजों का स्पून खाता खाचन में रुचि नहीं रखता। उनमें युग का मूल्य चित्रण करने की जन्तुनूप क्षमता है। उनसे उपन्यास में किम युग की पृष्ठभूमि है इनका जान हम उससे मूल्य बन से ही हा पाता है।

'सामर्थ्य और सीमा' में मिलते सामर्थ्य और उसके सांस्कृतिक विषयों का अर्थन लेखक ने मूल्य से बस संवेदा द्वारा किया है। पूजापति का

की सूट-सूट वाली मनोवृत्ति को उम्र वय के आचरण द्वारा प्रतिष्पन्नित किया है। स्वतंत्र भारत की शासन नीति पर भी व्यंग्य करने से बर्माजी नहीं चूके हैं। शासन सत्ता जिन लोगों के हाथ में है व अपने स्वार्थों में उनसे रहने हैं जिससे देश और जनता के काम में डील पड़ जाती है। इस प्रकार स्वतंत्र भारत में जैसे प्रत्येक व्यक्ति सूट-सूट में लगा है। एक पात्र के शासन में— मन्त्री पूज्यपतिमा को उपवृत्त करत हैं सरकारी अफसर रिश्तत खात हैं ठेकेदार चारबाजारी करता है और मजदूर हारामखोरी करते हैं। किसी का कोई कसूर नहीं। बाँध बंधे और दूटेंगे बारखाने लगाए जायेंगे और ठा पड़े रहेंगे और जनता के लोग पैस पैसे पर जान देंगे और बेइमानियाँ करेंगे। इस तरह हमारे देश का निर्माण होता रहेगा। लेखक ने सरकार की जमीनारी उन्मूलन नीति पर प्रहार किया है। जमींदार गए, लेकिन एक-एक जमींदार के स्थान पर सड़क भूमिघर पैदा हो गए। व्यक्तिगत संपत्ति एक से सूटकर पच्चीसों में बाँट दी गयी। वह संपत्ति पच्चीस भागा में बँट गयी लेकिन रही ता वह इन पच्चीस आदमियों की व्यक्तिगत संपत्ति ही। इस भूमि और संपत्ति का राष्ट्रीयकरण कब हुआ? तब कुछ हजार इलाकेदार ताल्लुकेदार और जमींदार थे अब उनके स्थान पर करीब-करीब एक करोड़ भूमिघर पैदा कर दिए गए हैं। चार पाँच प्रतिशत आदमियों को सम्पन्न बनाकर उह सम्पत्ति दखर उनमें पूज्यपति मनोवृत्ति पैदा कर दी गयी है। उनमें उत्पीडन और शोषण के बीज बो दिए गए हैं।

इन सब के चित्रण के अतिरिक्त सामर्थ्य और सीमा में हिन्दू मुस्लिम साम्प्रदायिक झगड़े स्वयं भारतीयों की हिन्दी भाषा विरोधी मनोवृत्ति वैवाहिक जीवन की विवृति पर भी प्रकाश डाला गया है।

पर यह है उपन्यास का बाह्य रूप जो अधिक महत्त्व नहीं रखता। सामर्थ्य और सीमा का महत्त्वपूर्ण पक्ष है उसमें व्याप्त शाश्वत समस्या। चित्रलेखा और सामर्थ्य और सीमा के जीवन-दर्शन की व्याख्या हम अन्यत्र कर चुके हैं। उसकी पुनरावृत्ति की यहाँ आवश्यकता नहीं है। परन्तु यहाँ फिर से इस बात का स्पष्टीकरण करना आवश्यक है कि चित्रलेखा का लेखक एक युवा रोमांटिक कवि है जबकि सामर्थ्य और सीमा का लेखक साठ बरस का वयोवृद्ध अनुभव प्राप्त एक प्रौढ़ विचारक। चित्रलेखा में एक विशिष्ट जीवन दर्शन आप ही आप आ गया है जबकि सामर्थ्य और सीमा में वह प्रयास द्वारा लाया गया है। एक उत्साही तरुण भावुक कवि विनाश और मृत्यु की कल्पना नहीं कर सकता। यदि करता भी है तो अधिक देर तक उसमें डूबकर उस निराशाजनक अनुभूति

की स्थिति उसक लिए असह्य है। लेकिन प्रौढ चिन्तक, जिसने जीवन में ऐसी अनुभूति निरन्तर की है, जिसने अपने चारा बार मृत्यु और विनाश हाउ देखा है, अपनी विचारधारा का इसा क चारा और घूमती पाता है। अपने चिन्तन से वह इसकी गहन अनुभूति करता है। यही कारण है कि सामर्थ्य और सीमा में हम चित्रलक्षा से सर्वथा भिन्न जीवन-दर्शन मिलता है।

सामर्थ्य और सीमा आज के युग के व्यक्ति का छापटाहट, विवशता निराशा और विवृति प्रकट करती है। आज का व्यक्ति जिस प्रस्टेशन की मन स्थिति में गुजर रहा है यह प्रस्तुत उपयाम में स्थल स्थल पर प्रतिध्वनित है। वर्तमान लक्षकों ने इस प्रस्टेशन की मन स्थिति का निष्पन्न कवल यौन विवृति के माध्यम से व्यक्त किया है, जबकि वर्मात्री ने इसकी अभिव्यक्ति जीवन के समूच पक्ष को संकर की है। व्यक्ति का यह प्रस्टेशन सामाजिक सम्बन्धों राजनैतिक और व्यावसायिक क्षेत्र तथा व्यक्तिगत जीवन में भी व्याप्त है। सभी में हम विवृति विमृष्टलता, कुण्ड और छापटाहट के दर्शन हाउ हैं। आज व्यक्ति जिम युग, जिम परिस्थिति में गुजर रहा है उसका अकन सामर्थ्य और सीमा में बढी सूक्ष्मता और गहनता से हुआ है।

सामर्थ्य और सीमा में मृत्यु और विनाश का मगीत है। यह उपयाम शुनता है, तराई के एक निजन प्रान्त में जगलों के बीच। पर मृत्यु और विनाश का संकत हम प्रारम्भ से हा मिलता है। लक्षक प्रकृति और प्राणियों में इन अनिवार्य नियम को देखा है पता नहा जंगल में भा प्राण हाउ हैं या नहा। वेच जन्म लना मरना शशव युवावस्था और वृद्धावस्था जीवन के सब चिह्न जगन में हाउ हैं। न जाने कितने पशु-पक्षी इन जगना का गान में आश्रय लिए हुए हैं। कभी भयानक रूप से क्रुद्ध और उन्नत हुए और कभी निष्प्राण में मूठे हुए नगी-नाने। ये सब जगन के भाग हैं और जंगल के अन्दर इन अनगिनत प्राणियों में जीवन मरण का मधम चला करता है। रोज ही जन्म हाउ है। राज मृत्यु के परे लगत हैं। जीवन-मरण की सामाजिकों में बढ जा प्रकृति का क्रम है वह ता चलता ही रहता है। उन्न्याय में हम उदा-ज्यो आगे चला जात है इन भयानकता के संकत हमें मिलत जात है। उम समय माना जङ्गल प्राणवत् हाजर जाग पडा था। अन्नान-अजीब भयावनी लगने वाला आसामें उठ रही थी चारा बार। दूर पर शेर दगाह रह के टिट्टरी ककरा स्वर में बोन रहा था। वहीं जानवर भाग रहे थे कहा एक तरह की मरमराहट हा रही थी। पण्डित शिवानन्द शर्मा ने कहा 'मगूर साहब, आपने कभी प्रकृति के इस रूप को भी देखा है?' भयावनेपन का कितना मानक

सौम्य है यहाँ पर । मैं अपने शत्रु में इस मौन्य का विप्रति करने का प्रयत्न करूँगा । उस प्रकार मृत्यु और विनाश का संगीत धीरे धीरे उभरने लगता है । आज के वैज्ञानिक युग में मनुष्य प्रकृति पर विजय पाता जा रहा है पर प्रकृति का एक दूसरा रूप भी है जिस पर हमने जीता है । प्रकृति का एक रूप वह भी है जिस पर मनुष्य विजय नहीं पा सकता । मनुष्य बाँध बाँधता है नहर बनाता है जगलों को काटता है तो क्या उसने प्रकृति पर पूरी विजय पा ली ? महा लखन मनुष्य के सामर्थ्य की सीमा दिखाता है । प्रकृति का सामने मनुष्य की हार होती है । जल विप्लव में सब वह जान हैं समाप्त हो जाते हैं । कुछ लोगों को सामर्थ्य और सीमा का जन विप्लव अस्वाभाविक लगता है पर पहाड़ों का फटने का जल के आने के हमें अनेक उदाहरण मिलते हैं जिसमें हम इसकी यथार्थता पर अविश्वास नहीं कर सकते फिर यह जल विप्लव एक प्रतीक के रूप में आया है ।

पाँचा सप्तम यकिया को क्या भे लाने के बाद नाहरसिंह और मानकुमारी का प्रवेश कराकर लेखक अमली नाटक आरम्भ करता है । प्रथम चरित्र वत मान समाज का विभिन्न व्यक्तियों का प्रतीक रूप में आता है । ये चरित्र दुनिया का हर कोने में बिखरे पड़े हैं । चाहे वह रतनचन्द मकोला हो चाहे देवलकर चाहे नानेश्वर राव हो और चाहे शिवानन्द शर्मा या एलबट किशन मसूर । लेखक द्वारा वे एक विशिष्ट व्यक्ति के प्रतीक रूप में प्रस्तुत किये गये हैं पर वे स्वाभाविक हैं क्योंकि वे आज के व्यक्ति की किसी न किसी मनाप्रिय और विवृति को प्रकट करते हैं ।

प्रकृति पर विजय प्राप्त करने के दप और अहम् से भी प्रबल मानव में नारी का प्रति आरपण है । रानी मानकुमारी उस सौम्य, कोमलता ममत्व और उसके साथ यौन भावना की प्रतिनिधि के रूप में इन दप और अहम् से भरे चरित्रों का सामने आती है और इन व्यक्तियों का सारा दप और अहम् उस नारी का सामने अपने-अपना ढंग से झुक जाता है । यह आज के ही नया युग युग के मनुष्य की ससार पर हर काने के व्यक्ति की प्रकृति की कमजारी है ।

यह निश्चित है कि सामर्थ्य और सीमा की रचना लेखक के पूर्व निश्चय गारा हुई है । अतः सुनिश्चित रचना के कथा-संगठन में शिक्षण का प्रश्न ही नहीं उठ सकता । उसके चरित्र अस्वाभाविक बन जाय इसकी सम्भावना अवश्य रहती है । सामर्थ्य और सीमा का कथा-संगठन इस प्रकार की दृष्टि से मबया मुक्त है । अपने प्रपाजन के निमित्त लेखक को जितने कथा विस्तार की जाय

शक्तिता हुई है उससे अधिक का उसने समावेश नहीं किया। फलतः प्रासंगिक क्या और घनाएँ इसमें एक अप्रमुख क्या को छाड़कर और नही है। सिगनल-मैन नवरासिंह और स्टेशन मास्टर मिठलनाल की प्रासंगिक क्या मूल क्या में नहीं खप पाया है। उसका बणन लखक नमुनपुर क बातावरण-निर्माण के निमित्त ही किया है। एसा भी प्रतीत हाता है कि उपयात प्रारम्भ करत समय लखक निश्चित नही कर पाया कि उन क्या कहता है। नवलसिंह और मिठलनाल का लखक प्रारम्भ की क्या आरम्भ ता वह कर देता है पर बाद में वह अपने अनिप्रेत के लिए उन्हें निरपेक्ष समझ कर छाड़ देता है। पर मुमना क निर्माण की प्रारम्भिक व्याख्या निरपेक्ष नही है। उसमें लखक का उद्देश्य निहित है, जा सपूर्ण उपयात का मूल विषय है। लखक न मुमना स्थान का मनुष्य के साथ अहम् और सामर्थ्य क प्रतीक क रूप में माना है। तभी वह कहता है 'मनुष्य का यह दावा है कि वह सन्म है। हिमानय की तराई में घने जंगलों क बीच में बना हुआ वह छाया-मा स्थान जा दागहर क बाग बाना ढलती घूम में भा बुरी तरह जन रहा था माना मनुष्य क इस दाव का प्रमाण था। प्रकृति इन मनुष्य क वश में है वह इस प्रकृति का मनचाहा नवीन रूप देता है वह इस प्रकृति क साथ न जाने कितने खिलवाड करता है। तराई का वह जगन भी वो प्रकृति का एक भाग था। लखिन जैसे मनुष्य प्रकृति का एक भाग न होकर प्रकृति से भिन्न कोई स्वतंत्र सत्ता है। प्रकृति के नियमों और प्रकृति के क्रम में बसा हुआ हाते हुए भी वह प्रकृति पर शासन करता है। अपनी उस विजय और अपने उस शासन क प्रतीक क रूप में उनमें उस मुमना नाम क रवे स्थान का निर्माण किया है।

सामर्थ्य और सीमा की बन्दीय क्या एक है—मुमनपुर क नव निर्माण की विषयों के लिए कई मशम और शक्तिशाली पुण्य वहाँ एकत्र हात है। इसी क्या क अन्तगत रानी मानकुमारी और उनके परिवार क सागा की क्या है जो किसी भी भाँति प्रासंगिक क्या नही कहा जा सकता। मुमनपुर और लखक आम-नास की भूमि पर रानी मानकुमारी का अधिकाँ है। इसा पर य सगम पुण्य अपने-अपने स्वाय क लिए आधिपत्य जमाना चाहत हैं। यहाँ निम्नहायता और सामर्थ्य का सपय मार्मिक हो उठता है। क्या की मार्मिकता सब और भी अधिक बढ़ जाता है जब निराह मानकुमारी का सहायता करने क बहाने य सगम पुण्य उन भी हस्तगत करना चाहत हैं। इस मूल क्या का विकास क्या की न मही साबकता स किया है। क्या में अतिरिक्त कुतूहल और उमुक्तता है तथा अंत के लिए पाठ में सजगता चरमसीमा स बढत पहुँच हा प्राप्त हा

उठती है। उपन्यास घटना प्रधान नहीं कहा जा सकता यद्यपि उसकी परि-
रामाप्ति एक बहुत घड़ी अप्रत्याशित घटना में हुई है। दूसरे शब्दों में हम कह
सकते हैं कि उपन्यास कथा प्रधान है किन्तु उसकी चरम सीमा में आक्षेपण
घटना द्वारा उत्पन्न किया गया है।

सामर्थ्य और सीमा कथा प्रधान उपन्यास है पर फिर भी इसमें कथानी
धारा तत्त्व प्रमुख नहीं है। फलतः इसका दृश्य फलन अत्यंत सकुचित है। एक
छोटे से क्षेत्र में कुछ गिने व्यक्तियों का जीवन एक माह के लिए उपस्थित कर
लेखक एक समस्या को प्रस्तुत करने के लिए रोचक कहानी गन्तव्य का प्रयत्न
करता है। निरर्थक प्रतिवृत्तात्मकता बनाना उसका उद्देश्य नहीं अपने मन्तव्य
का आग्रह उमम अधिक है। और यहाँ लेखक अपने दृष्टिकोण को अभिव्यक्त
करने के लिए स्थल स्थल पर विवाह और तक की सामग्री उपस्थित कर बैठता
है। किन्तु इसके द्वारा उपन्यास के कथा प्रवाह में अस्वाभाविकता नहीं आई है
क्योंकि अपने को सक्षम और प्रकांड पंडित समझने वाले विभिन्न पात्रों का
अपने अपने अहम् और दृष्टिकोण को महत्त्व देने के लिए, विवाह करना,
अस्वाभाविक और असंगत प्रतीत नहीं होता। तथापि इतना निश्चित है कि
तक और विवाह के लम्बे लम्बे स्थल कहा कही अरोचक हो उठे हैं और उससे
कथानक में शिथिलता आने लगी है।

प्रस्तुत उपन्यास का निर्माण प्रयोजन-मुक्त हुआ है पर लेखक ने यथासंभव
प्रयास किया है कि इसका आभास नहीं हो पाये। फलतः उसने अधिकांश
कथानक का विकास पात्र और घटनाओं के पारस्परिक मिलन एवं संघर्ष
द्वारा किया है। कहीं कहीं लेखक को कथावाचक के रूप में भी आना पड़ा है।
ऐसा उसने कथाक्रम का बनाय रखने कथा तन्तुओं को एक सूत्र में पिरोने और
स्थिति का अंकन करने के लिए किया है। लेखक का यह रूप बड़ा ही रोचक
रहा है क्योंकि कवि होने के नाते लेखक ने गणन और चित्रण में अपूर्व रोचक
कथा है। एक स्थल यहाँ प्रस्तुत करने योग्य है रोहिणी अपने समस्त वेग के
साथ उमड़ती है पवन उम वेग को न समाल सकने के कारण फट पड़ता है
और यशानगर में रहने वाले सौम और समर्थ मानवा का समुदाय विमुक्त और
भयभीत सा तत्वों के इस भयानक संघर्ष को देखता है। बड़ी बड़ी चट्टानें टूट
टूट कर गिरती हैं दानवाकार वृक्ष ढह जाते हैं और जल इन सबको तोड़ता
हुआ उखाड़ता हुआ बहाता हुआ बढ़ता जा रहा है बरता जा रहा है। टूटती
हुई चट्टानें प्रहार करती हैं वे उस जल को सक्ड़ो पुनः ऊपर उछाल देती हैं।
गिरते हुए वृक्ष प्रहार करते हैं इस जल पर लेकिन इससे क्या? सब निबल है

सब अन्तम है। मग्न है कवन राहिणी का जल और यह जल जीवन है, यह जल मृत्यु है।

पात्रों का परिचय दत्त क लिए भी त्वक का कई बार उपस्थित होना पड़ा है। प्रारम्भ क लगभग बयानिम पृष्ठ ता पूणत पात्रा क परिचयामक विवरण स पूरा हैं। यह परिचय बना नारम हो जाता यदि त्वक अनन कना-कौरव स बाच-बाच म नाटकीय ढंग स पात्रों की पारम्परिक बातचात लाकर राचकता उत्पन्न न कर देता। 'सामय्य और सीमा का जैसा विषय है, उसक अनुसार उपनाम में नीरमता और शिथिलता आन की पूरा समझना थी, किन्तु यह बमात्री जैत सिद्धहस्त उपन्यासकार की ही सामय्य है कि उन्होंने उसमें किता प्रकार की विनृतता और राचकहीनता नहीं आने दी है। कथाक्रम का प्रत्यक चरण, पात्रों की बातचात का प्रत्यक वाक्य, पाठक में आगामी कथा-विकास की निशा क लिए कुतूहल और उत्सुकता जागृत करके जाता है।

कथानक में शिथिलता आने का एक कारण और भा हो सकता है—वह यह कि त्रिम समय पाठक किसी बात में रस ले रहा हो, उस समय किसी दूसरी चीज द्वारा उनमें व्यवधान उपस्थित हो जाय तो पाठक उस वचन स ऊब सकता है। यद्यपि इस सम्बन्ध म बमात्री पूण मत्क रहे हैं फिर भी एक स्थल पर वे इन सजगता से चूक गये हैं। राहिणी नदी में बाढ़ आने क उपरान्त कथानक में अवाधिक तीव्रता आ जाती है। इस स्थल पर बर्माची पाठकता में कुतूहलता और रुचि उत्पन्न करने में अनूठपूर्व सफल हुए हैं। किन्तु उस स्थल पर इस राचकता पर आपात हुआ है, जब सक्क रघुराज सिंह के हूबने के समय उमक सम्भार वातावरण स्वभाव और विनोद का विवरण विस्तार से करने लगता है। पृष्ठ ३२२ और ३२३ तक का वचन तो उचित है किन्तु उमक बात इसमें ३२८ तक का विस्तार इस स्थल के लिए उपयुक्त नहीं है। जबकि कथा चरण सीमा पर है पाठक इस वचन म रुचि नही रख पाता। रघुराज सिंह क सम्भार और विनोद द्वारा यदि लेखक उसका चरित्र-चित्रण करता ही चाहता या तो उमक लिए उस पहले ही कही अन्तमर साबला या।

उपन्यास क कथा विकास म बर्मात्री सदैव सयोग तथा घटनाआ का सहारा सत आये हैं। यहाँ भी उन्होंने ऐसा किया है। यद्यपि मुमनपुर का निर्माण करने क लिए आन वाला सनूह सयोग क कारण परम्पर नहीं मिलता, उह उद्देश्य म एक स्थान पर एकत्र किया जाता है। किन्तु रानी मानसुमारी से इनकी भेंट

संयोगवशा ही होती है—कार बिगड़ जाने व कारण । फिर संयोगवशा ही उपन्यास के अंत में एक महान् घटना या कहना चाहिए दुपटना घटित हो जाती है—अप्रत्याशित ढंग से । हमने अतिरिक्त प्रस्तुत उपन्यास में और किसी संयोग तथा घटना का सहारा नहीं लिया गया । कर्मात्री के अन्य उपन्यासों की अपेक्षा इसमें इन दोनों का अस्तित्व कम ही है ।

‘सामर्थ्य और सीमा का कथानक सुमंगलित और कुतूहलपूर्ण है । किन्तु कथा-मगठन के सदृश में इस सब के होने के बाद भी एक बात की माँग पाठक को और होती है वह यह कि क्या कुतूहल एवं उत्सुकता व साथ कहानी में भर सता बनाये रखने में भी लेखक समय ही पाया है ? इन प्रश्नों के उठने ही हमें अनुभव हो जाता है कि कथावस्तु का सुमंगलित होना और पाठकों में उत्सुकता की तीव्रता भर देना मात्र ही रचना की सफलता का प्रमाण नहीं है । सुनियोजित उपन्यास में तथाकथित गुण विद्यमान हो सकते हैं पर उसमें सरसता और भावनात्मक तीव्रता बड़ा कठिन काम है । सामर्थ्य और सीमा में हमें यह अभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है । इसका क्या विकास (कथा प्रवाह नहीं) हमारी बुद्धि को सजग करने में मन ही समर्थ हुआ है किन्तु हमारे प्राणों में वह स्पन्दन संचारित नहीं कर पाता । यह अभाव इस उपन्यास की कलात्मक उपलब्धि की सबसे बड़ी त्रुटि है । कर्मा जी अपने उपन्यासों में कहानी वाले तत्व को प्राथमिकता देते आये हैं किन्तु प्रस्तुत उपन्यास में कहानी वाला तत्व प्रमुख नहीं है । चित्रलेखा भी एक समस्यामूलक उपन्यास है किन्तु उसमें कहानीवाला तत्व इतना मोहक और आकर्षक है कि पाठक उसे जितनी बार पढ़ता है एक नया रस लेकर । उसमें वादविवाद एवं तर्कों की भरमार है पर वह इतने आकर्षक और सरस कथानक के रूप में प्रस्तुत है कि हमें उसकी बोझिलता का आभास नहीं हो पाता । सामर्थ्य और सीमा में वह आकर्षण और सरसता नहीं है । स्पष्ट-स्पष्ट पर वह अरावक और ऊँचा देने वाला हो उठा है । इसका एक कारण तो यह कि जहाँ चित्रलेखा का विषय प्रेम और रोमान्स है वहीं सामर्थ्य और सीमा का मृत्यु और विनाश । विषय की सरसता और नीरसता इन दोनों उपन्यासों के अन्तर का कारण है । रोमान्स में जीने की प्रेरणा होती है इसलिए उस पर आधारित कथानक में एक धारा प्रवाह और रोचकता आप-ही-आप आ जाती है प्रत्येक पाठक उसके भावनात्मक वेग में बह जाता है । पर मृत्यु और विनाश के अंकन में न तो प्रत्येक पाठक डूब सकता है और न ही भावनात्मक अनुभूति कर सकता । यह अनुभूति एक विशिष्ट अवस्था

और मनस्विता में ही हा सकती है। इस कारण सामान्य और सीमा की यह कमी विषयजनित है।

पहन हा कहा जा चुका है कि सामान्य और सीमा लम्बक की पूर्व-यात्रना द्वारा निर्मित है। फलतः इसकी पात्र रचना भी सादेज्य है। लम्बक न उठने ही चरित्रों का निर्माण किया है, जितने उसक लिए अभीष्ट है। यहीं तक नहीं, लम्बक इन चरित्रों का निर्माणक स्वय ही बन बैठा है। पहनी दृष्टि में वा एकाएक पग तक अनुभव होता है कि प्रत्येक पात्र लेखक क हाथ का बनाया पुत्रना है, जिसमें अपना कुछ नहा है। माना लम्बक ने प्रत्येक पुत्रल का अभीष्ट रूप देकर कुछ बातें लिखना कर देना लिया है कि तुम्हें यह यह करना है और बालना है, इससे अति कुछ नहा। और इस प्रकार 'सामान्य और सीमा का माना एक-एक पात्र लम्बक क निर्देशन क काम करता है।

तो क्या 'सामान्य और सीमा' क चरित्र संप्राप्त नहा है? क्या उनके आचरण और अभिव्यक्ति कृत्रिम बनकर रह गये हैं? इसका उत्तर हमें नका सामक देना पडता है। यहीं आकर हमें वर्मात्रा क बना कौशल का परिचय मिलता है। उन्होंने पात्रों का स्वरूप प्रगन अवश्य किया है किन्तु उनके प्राणा म वा स्पन्द है वह उनका निन्न का है। यहीं आकर व हमारे मन प्राणों को छूत है, हमें प्रभावित करत है।

सामान्य और सीमा का सबसे अधिक आरपक पात्र है—मनर नाहर-सिंह। उसके स्वभाव और आचरण में एक एसा सम्माहन है एक एसी विचित्रता है कि उसकी उदस्विता म उदन्मास क घने द्रूप प्रवाह में गति वा जाती है, रोचकता वा जाता है। अनुभवो बूनों क स्वभाव क मनी गुणों क साथ, उसमें मुक्क जैसा उन्मास और उमग है। मुक्क और स्वच्छ प्रकृति का नाहरसिंह सबसे प्रभावित करता है। उसके स्वभाव का यह गुण युवा और अर्धक पात्रों के लिए प्ररणापक है। नाहरसिंह मानता है कि जीवन की उरग हा जीवन की एकमात्र उदन्धि है। यही धीना हमारे अस्मिन्व का सापकता है। और इस विरक्ति ही निर्मोक्ता का पहना सगण है। इस प्रकार जीवन क प्रति नाहरसिंह बड़ा स्वम्प दृष्टिकान रगता है। उसके अनुमान 'हसत-हसत मर जाना कही अन्दा हाता है, म और पुत्रन सहर मरने की अन्गा। वा प्वास और पुत्रन सहर मरता है उसकी अन्गा मन्कती रहती है सुग और मृत्ति की समाश में। और गुग-गुग शरीर क घर्म है—इसलिए उस अन्मा को अशरीर होने क कारण शक्ति नहीं मिलती। इस स्वम्प जीवन-दृष्टि का ही परिणाम है कि

अनेक अभावा के रहने पर भी नाहरसिंह अपनी स्थिति से कभी असंतुष्ट नहीं रहा। वह जानता है कि 'रोने से कुछ नहीं मिलता, इसलिए हँसना ही अधिक अच्छा है।

नाहरसिंह की दृष्टि एक दार्शनिक की दृष्टि है। कोई घात या कोई वस्तु वह साधारण दृष्टि से नहीं देखता। उसका प्रत्येक कथन दर्शन और तर्क से बोधिल है। मानकुमारी द्वारा सौंदर्य की बात उठने पर, वह सौन्दर्य की भी एक दार्शनिक व्याख्या कर बैठता है। और इतना समझ लो गुजरता को कोई नष्ट नहीं करता वह तो स्वयं नष्ट हो जाया करती है। ये जितने फूल बिलते हैं एक-से एक मुट्ठी ये सब क-सब स्वयं मुरझा जाते हैं। वास्तविकता ता यह है कि जन्म और मृत्यु के बीच के काल की एक छोटी-सी अवधि ही वास्तविक मौन्द्य की होती है, उस अवधि को हम लोग ने यौवन का नाम दे रखा है।'

नियति पर आस्था नाहरसिंह की प्रकृति का अभिन्न अंग है। किन्तु उसका नियतिवाद किसी भ्रामक आस्था पर स्थित नहीं है। जीवन के अनुभव ने उसे नियतिवादी बनाया है। उसने अनुभव से यह जाना है कि नियति का चक्र चल रहा है और इस नियति के चक्र की गति बदलने में मैं असमय हूँ तुम असमय हो, हर एक आत्मी असमय है। बनाने और मिटाने वाला कोई दूसरा ही है हम तो स्वयं बनाए मिटाए जाते हैं। यहाँ किसी का ठिकाना नहीं, कठपुतलिया का नाच हो रहा है डोर किसी दूसरे के हाथ में है जिसे हम देख नहीं पाते। नाहरसिंह घोर नियतिवादी है और प्रत्येक बातचीत के दौरान में वह इस खींच लाता है। (बहुत कम पृष्ठों के अन्तर पर बार-बार वह यही बात दोहराता है— पृष्ठ ६६ ७३, १३७ १५३ २५८, २६६ २७६ तथा अन्त के समस्त पृष्ठ)।

किन्तु नियति पर आस्था ने उममें निर्जीवता और निष्क्रियता नहीं भर दी है। वह अन्त तक सघरत रहता है। पराजय स्वीकार कर लेना उसके स्वभाव में नहीं है। अन्त तक वह युद्ध करता है मृत्यु तक से।

नाहरसिंह में अपार सहन शीलता है। जीवन की कठुता को उमने हसते हसते सह लिया है। अपने एकमात्र पुत्र रघुराजसिंह को वह अपनी सामने, विवशता से नम तोड़ते देखता है फिर भी उमकी आत्मशक्ति क्षीण नहीं होती। उमके साहस और आत्मबल की बराबरी उपन्यास का कोई पात्र नहीं कर पाता।

नाहरसिंह का नियतिवादी वाला रूप इतना अधिक मुखर हुआ है जिसके कारण उसके स्वभाव के अंग गुण छिप गये हैं। नेत्रक ने नाहरसिंह के जीवन

क जिस जान का चित्रा किया है, उसमें उसका उपयुक्त रूप ही हमारे सामने आता है। उसका गत जीवन का सगिन्द परिचय स्वयं लेखक ने अपने शब्दों में दिया है, जिसमें उसका स्वभाव की अन्य विशेषताएँ प्रकाश में आयी हैं। परिस्थितिवशा उसका बहिरंग कठोर बन गया था, किन्तु स्वयं कर्मों का अपना कर उसका हृदय कोमल होता गया।

बनारसी ने नाहरसिंह का भविष्यवक्ता के रूप में भी चित्रित किया है। उसका यह रूप बड़ा अस्वाभाविक लगता है। यद्यपि उसके बहुक-बहुक स्वभाव के कारण वह सब अवश्य जाता है। सम्पूर्ण उपयास में आरम्भ से अन्त तक नाहरसिंह द्वारा लेखक का दृष्टिकोण इतना धार और इतना अधिक सुतर हुआ है कि इस पात्र में हमें स्वयं लेखक का भ्रम होने लगता है। वैसे नाहरसिंह के कथन उसने सस्वार स्वभाव और वातावरण के अनुकूल है इसलिए उसके कथनों में लेखक द्वारा सादर जान का आभास नही हो पाता।

नाहरसिंह के बाव 'सामर्थ्य और सीमा का दूसरा आकर्षक चरित्र है—रानी मानकुमारी का। नाहरसिंह के सम्बन्ध में एक बात सबसे अधिक सतकन वाली है कि वह लेखक के मन्तव्य का बाह्य है उसका अपना निजी व्यक्तित्व नही है। उसका रूप स्वभाव चरित्र सभी लेखक की रचना है। किन्तु रानी मानकुमारी 'सामर्थ्य और सीमा का एकमात्र ऐसा चरित्र है जो लेखक के किसी दृष्टिकोण की लहर उन्मिषित नही हुआ। उसमें जो कुछ है वह अपना है। इसीलिए वह सामर्थ्य और सीमा का सबसे अधिक सजीव पात्र है। अग्रिम सौन्दर्य और सुकुमारता की वह प्रतिमा है। मन्त्र नाहरसिंह के शब्दों में रानी मानकुमारी का व्यक्तित्व साकार हो उठा है' दूसरे को ठाढ़कर रख देने वाले इस सौन्दर्य के भीतर कितना सुकुमार, कामल और विवश व्यक्तित्व है। सौन्दर्य की राजसिक्ता के अन्दर आत्मा की मात्स्यता है। इस मरल और मोक्ष व्यक्तित्व के कारण शर्मा पालेश्वर राव मन्नासा, ममूर और दवलकर पाँचा उसकी ओर आकर्षित हात हैं और उस अनजाना चाहत हैं। उमम कामला की अग्नि गुनगती रहती है। यह उसके रूप और यौवन का भाग है इसलिए स्वाभाविक है। यह असाध्य नहीं कहनी सकती। उसमें कतुपित्त नाशनाएँ नही हैं। वह नारी है और नारी गुणम सुबनता जगम भी है—किमा पुण्य का सहारा प्राप्त करने की इच्छा।

जीवन के प्रति रानी मानकुमारी का भी बड़ा स्वल्प दृष्टिकोण है। उमम उन्माद विनाश नाश रग उममव का वह जीवन में मन्तव्य रूप स्थान नहीं है,

क्योंकि अपने को अपनी इच्छा से चिन्ता, दुःख विराग म द्रुवा सेना जीवन की अवज्ञा करना है। इसलिए अभावा और चिन्ताओं के बीच भी, वह सदैव प्रफुल्ल रहती है। उसके व्यक्तित्व में एक ऐसी सरलता एक ऐसी अट्टिमता है कि वह सबके मन को मोह लेती है। ज्ञानेश्वर राव क शान्ति म बुद्ध अजीव-मा उलझा हुआ और माटक व्यक्तित्व था रानी मानकुमारी का। कितनी कोमल कितनी सुकुमार शरीर ही नहीं आत्मा भी। लेकिन उसके प्राणा में एक ही तरह की आग कर्म और गति। एक प्रकाश का पज जो अपने चारों ओर जीवन के स्पन्दन वाली उष्णता को बिखेरता है।

सुकुमार मानकुमारी अतिशय भावुक है। उसका हृदय किसी आघात से बड़ी जल्दी द्रवित हो उठता है। कई बार ऐसी स्थिति भी आती है कि भावुकता बश वह रो पड़ती है। किन्तु उसका यह प्रलाप अस्वाभाविक नहीं लगता। सन्तानहीन होने के कारण उसका हृदय और भी अधिक कमजोर और भावुक हो उठा है जिनके कारण वह किसी बात को सह नहीं पाती।

भावुक हृदय होने के साथ साथ रानी मानकुमारी में विलक्षण प्रतिभा है। फलतः उसमें कवि-रूप मुखर हो उठा है। शिवानन्द शर्मा रानी के इस कवि रूप को देख मुग्ध हो उठता है। उसकी कविताओं में उसे मधुर सगीत कोमल सौंदर्य और भावुक कल्पना के साथ महान् प्रतिभा के दर्शन होते हैं। प्रतिभा संपन्न रानी मानकुमारी में वस्तु स्थिति को सही रूप में देखने समझने की भी क्षमता है। भावुकतावश वह किसी प्रवाह में बह नहीं जाती। उनका समय सदैव उनके साथ रहता है।

सुशिक्षिता सुयोग्य रानी मानकुमारी आधुनिक है किन्तु भारतीय नारी का सांस्कृतिक आवरण वे नहीं हटा पाती। रानी के इस रूप को, देख—उनके सत्कारों को देख—ममूर को बड़ा आश्चर्य होता है। आधुनिकता और पुरातन के इस अद्भुत सम्मिश्रण ने रानी के चरित्र को और भी अधिक माहक एक गरिमामय बना दिया है। इसीलिए भावुकता पर वह सदैव विजय प्राप्त करती है। उसका समय उसकी भावुकता पर नियंत्रण रखता है। वैधव्य उसके लिए असहनाय है और जिन परिस्थितियों में वह है उसमें उसका किसी पुरुष का सहारा देने के लिए झुकना स्वाभाविक है। किन्तु भारतीय नारी के सत्कार उमें इस बात की स्वीकृति नहीं दे पाते। निश्चय ही, रानी मानकुमारी का चरित्र इस उपयास का सबसे बड़ा आकषण है।

नाहरसिंह और रानी मानकुमारी के अतिरिक्त अन्य पात्र विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधि हैं। इन सब की रचना रसिक ने सोद्देश्य की है। इजिगियर देवलकर

का छाड़कर अन्य चरित्रों में कोई नवीनता नहीं है। नाहर्सिंह और रानी मानकुमारी के साथ दवनकर इस उन्मास का तीसरा आकर्षक पात्र है। उसका जीवन-सपथ ने दवनकर में एक ओर कृष्ण और घृणन उत्पन्न कर दा घी और दूसरा ओर हठी अहम् के माग से उसका व्यक्तित्व कुछ आवश्यकता से अधिक प्रखर बन गया था। वह निर्भीक निम्पूह आत्मी है। किसी के सामने झुकना उसका प्रवृत्ति में नहीं है। भौतिक-विज्ञान पर आस्था रखने के कारण देवनकर नास्तिक है। अपने व्यस्त जीवन में उस वैवाहिक सुख की आकांक्षा नहीं रखी। किन्तु रानी मानकुमारी का सौन्दर्य और ममत्व प्रथम बार उनमें यह अभिप्राय जगाता है। 'मेरा जीवन अभी तक अज्ञान रहता है। आन्की ममता पाकर आज मुझे जो अनुभव हुआ है वह मेरे जीवन का सबसे सुन्दर और महत्त्वपूर्ण अनुभव है। मेरे अन्दर जो अनाद है उसकी पूर्ति मुझे जानने ही स्थि रखी है। आन्की पाकर मेरा दयपूर्ण अहम् विनय और कामलता का अनाद सकगा। आन्की प्रेम पाकर मैं धय हो जाऊगा। देवनकर का वैवाहिक सुख के लिए यह आकर्षण स्वभाविक है। सचक ने यहाँ देवनकर का मानसिक सपथ नहा स्थिमाना। कदाचिद् इसके कारण यही है कि नारा के ममत्व का त्याग विशुद्ध भौतिकप्राणी देवनकर के मन में सहसा जा प्रतिक्रिया हाठी है वह हृत्पापानन का अवसर नहीं दे पाती।

सचक की पूर्व-निश्चित-योजना उसके चरित्र-चित्रण में भी प्रतिभासित हुई है। नाहर्सिंह मानकुमारी तथा रघुनाथ सिंह का छाड़कर शिवानन्द शर्मा शनिेश्वर राय मसूर तथा मकोना बग प्रतिनिधि पात्र है। सभी पात्रों का प्रारम्भिक परिचय लेखक ने विवरणात्मक शैली में दिया है। वह इतना अधिक सम्बन्ध तथा अनावश्यक है कि पाठक को ऊब का अनुभव होने लगता है। और त्रिम डङ्ग से यह विवरण उन्मत्त किमा है, वह और भी अधिक अस्वभाविक हो उठा है। लेखक इन बग प्रतिनिधि पात्रों का एक स्थान पर सादर सदा कर देता है और फिर एक-एक पात्र को लेकर उनसे हमारा परिचय कराता है। यह परिचय पात्रों के गत जीवन, उनके स्वभाव उनकी आत्में और मनास में उनके स्थान की सूचना हमें देता है। नाहर्सिंह, रानी मानकुमारी तथा रघुनाथ सिंह का प्रारम्भिक परिचय अति सख्त तथा स्वभाविक डङ्ग से हुआ है। इन पात्रों को हम पहले किसी अवस्था में पढ़ा हुआ देखते हैं और फिर उनकी प्रतिनिधियों से परिचित होने के बाद उनके गत-जीवन से परिचय प्राप्त करते हैं। विशेषकर नाहर्सिंह का प्रथम परिचय पात्रों के साथ वह

आकर्षक ढङ्ग से हुआ है। पाठक विस्मय और कुतूहल दोनों में एक साथ ही अभिभूत हो उठता है :

सामने सबक पर एक लम्बा-सा और बूढ़ा-सा आन्धी पैण्ट और कमीज पहने और कंधे पर बंदूक लटकाए उन पक्के बगलो की तरफ चला जा रहा था। उसने कार के आगे बैठे सागा की ओर इशारा करके कहा

अब समझा। मेहमाना को लेकर आ रही हो। ' मुमनपुर का विनास करोगे ये साग। कौन इन अभिशापित इलाका का विनास कर सकता है। आप साग क्या आये हैं यहाँ ? इस आममान पर चलत हुए चाँ को देख रहे हैं आप ? मेरी विनय है कि आप साग यहाँ में कल चल जाइये। आप लोग से यह बात इसलिए कह रहा हूँ कि आप इस समय रानी बहू के अतिथि हैं और इसलिए आप सागा क कुशन-क्षेम की कुछ जिम्मेदारी मुझ पर भी है।

पाठक के मन की पहलू पात्रों के परिचय से पैदा हुई ऊब नाहरसिंह के इस प्रथम परिचय से आप ही आप दूर हा जाती है। उन पात्रों से विवरणात्मक परिचय हो जाने के बाद जहाँ उनके सम्बन्ध में और कुछ जानने की उत्सुकता पाठकों के मन में नहीं रहती वहाँ नाहरसिंह के सम्बन्ध में यह प्रथम परिचय मिलने पर पाठक जीर अधिक जानने के लिए व्यग्र हो उठता है। शिवानन्द शर्मा ज्ञानेश्वरराव मसूर और मकौला के जीवन के सम्बन्ध में लेखक का वक्तव्य पाठक का पूर्वाग्रह से ग्रस्त कर देता है जब कि नाहरसिंह के चरित्र के सम्बन्ध में वह अपना निणय देने को पूण स्वतंत्र है। रतनचन्द्र मकौला के सम्बन्ध में लेखक का यह कहना है कि वे दर्शन शास्त्र से उतनी ही दूर थे जितनी दूर आज का राजनितिक नेता सत्य से है।

मकौला अपने प्रति और दुनिया के प्रति बेहद ईमानदार थे। इस रूप के आधार से उन्होंने उस व्यक्ति के अन्य देवता को तोड़कर रख दिया। या देवलकर के सम्बन्ध में यह कहना कि देवलकर निर्भीक

निस्सूह और खरे आदमी थे। झुकना और खुशामद करना उन्होंने कभी जाना नहीं। देवलकर को केवल अपने ऊपर आस्था थी—भौतिक सृष्टि

में हुंवा हुआ देवलकर एक प्रकार से नास्तिक था। या ज्ञानेश्वर राव के सम्बन्ध में लेखक का यह कथन कि ज्ञानेश्वर राव किसी की खुशामद नहीं कर सकते थे। या पण्डित शिवानन्द शर्मा का परिचय भावना प्रधान

नवयुवक के रूप में दे देने के बाद पाठक के मन में पात्रों की एक निश्चित रूपरेखा बन जाती है। इन पात्रों की क्रिया प्रतिक्रिया दिखाये बिना उनके चारित्रिक गुणावगुणा का उल्लेख अस्वाभाविक ही नहीं, युक्तिरसगत भी नहीं लगता।

इसके अतिरिक्त लखक के परिचयात्मक विवरण में कही-कहा पुनरावृत्ति भी हो गयी है। मकाला के सम्बन्ध में वह फिर वही बातें दुहराता है—शान्ति के हर-फेर के साथ—मकाला दार्शनिक नहीं था मकाला मनोवैज्ञानिक नहीं था—उन्हें पन्ने लिखन में रुचि नहीं थी, किताबों में बन्द पान पर उनकी आस्था नहीं थी। लेकिन उन्होंने जिन्गी का अध्ययन अच्छा तरह किया था। भावना और धन में एक प्रकार का सन्तुलन हाता है—जीवन के अनुभवों ने उन्हें यह बतलाया था। हर एक भावना कहा-कहा चनकर धन से शासित होने लगती है। समझ में नहीं आता मकाला के पहले परिचय और हममें क्या नवीनता था कि लखक का उसकी पुनरावृत्ति करनी पड़ी।

पात्र को किसी विशेष परिस्थिति में डालकर उसकी क्रिया प्रतिक्रिया लिखने के पश्चात् जब लखक ने उमक सस्कार और स्वभाव का चित्रण किया है, तब वह चरित्र चित्रण अधिक सगत और प्रभावशाली बन पडा है। नाहर सिंह का कई स्थितियों में डालने के उपरान्त जब लेखक पात्र को उसके प्रवृत्ति से परिचित करा चुकता है, तब वह उमका विश्लेषणात्मक जीवन-परिचय देता है 'नाहरसिंह का हाथ छुना था और दूसरा के दुःख से तन्हाल श्रवित हो जाता था। इसलिए नाहरसिंह कभी सम्मन्न नहीं रहें। अपने कष्टों और दुःखों का जैत उन्हें अनुभव ही नहीं। बिना नाहरसिंह के अनुभव किए नाहरसिंह का जीवन उनके बाल्यकाल से ही समपन का था और इन समपन की उन्नत भावना के साथ उनके विरोधी तत्व साहम काय उद्भूता, के कारण नाहरसिंह को साग कभी ठीक तरह से समझ नहीं पाये। जीवन के बहुत अनुभवों के साथ उनकी उन्नत भावना निम्नरती गयी और उनका व्यक्तित्व विश्व की व्यापक कल्याण को अपनाकर कोमल हाता गया कोमल हाता गया। लेकिन उनका बाहर उतना ही बठार बना रहा।

पात्रों का प्रारम्भिक परिचय देने के पश्चात् क्या जीने के चरित्र का 'परिस्थिति विशेष में डालकर उनकी क्रिया प्रतिक्रिया, आचरण और ब्योपकरण के माध्यम से चरित्र का उद्घाटन किया है। इन परिस्थितियों का निर्माण भाग्य ने स्वयं किया है जिसमें परिस्थिति विशेष में पढ़कर पात्र का आरम्भिक आचरण पूट पडे। मकाला दत्तचन्दर शिवानन्द शर्मा और जनेश्वरराव जिस परिस्थिति में रानी मानकुमारी से प्रेम-भावना करते हैं, बहुत सख्त द्वारा ही निर्मित है। प्रत्येक व्यक्ति का व्यक्तित्व भिन्न है इसलिए प्रत्येक के प्रेम का आवेग अपने अपने ढंग से प्रकट होता है। शिवानन्द शर्मा गार्हस्थ्यका है इसलिए उमका प्रेम रानी मानकुमारी की मौन्य प्रशंसा के रूप में प्रकट हाता

है 'रानी साहिबा, यह सब क्या हो रहा है ? मुझे विश्वास नहीं होता । एक सपना सा लग रहा है मुझे । (रानी को मसता इतना सौन्दर्य, इतनी ममता । मैं इन सबको एक स्थान पर सामार रूप में देख रहा हूँ । जीवन में एक यहूत बड़े अभाव की पूर्ति आपके व्यवहार में मिल रही है मुझे । मेरे जीवन में आपका आना मेरे लिए कितना बड़ा सौभाग्य है । और रानी मानकुमारी का अपनी ओर कुछ झुकाने देखकर प्रतिप्रिया-स्वरूप उनकी भावनाएँ कविता में फूट पड़ती हैं । ज्ञानेश्वरराव पत्रकार हैं उसका प्रेम मानकुमारी के सौन्दर्य-वर्णन में नहीं और ढङ्ग से व्यक्त होता है । 'रानी मानकुमारी के कर स्पर्श में ज्ञानेश्वरराव के सारे शरीर में एक हल्की सी सिहरन दौड़ गई उनके क्रोध का स्थान एक धारणी ही उनके अन्दरवाली उद्दाम वासना ने ले लिया । उन्होंने रानी मानकुमारी का हाथ दबाते हुए कहा 'रानी साहिबा मैं केवल आपकी सहायता करना चाहता हूँ । आप कितनी अच्छी हैं कितनी स्नेहमयी और ममतामयी हैं । आर्टिस्ट मसूर भी उसी बात को घुमा फिरा कर कहता है, हरेक की अपनी अलग अलग जिन्दगी है अपना अलग अलग रास्ता है । इस लम्बे और थकान से भरे सफर में कभी-कभी दो राही एक दूसरे से मिल जाते हैं । आँखों की हमदर्दी की दो नन्ही नन्ही बूँदें लिए हुए होठों पर प्यार की मुस्कुराहट से भरे बोल लिए हुए । जिसे यह नसीब हो गया वह खुशकिस्मत है । सहारा इंसान का नहीं होता सहारा होता है हमदर्दी का प्यार का । मकोला क्योंकि पूजीपति है इसलिए उसकी भावना की अभिव्यक्ति इन तीनों व्यक्तियों से पृथक ढंग से होती है । वह रानी मानकुमारी को रूपों से खरीदना चाहता है ।

अन्तर्प्रेरणाओं तथा अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण प्रस्तुत उपयास में सबसे कम हुआ है । किसी घटना या परिस्थिति की प्रतिक्रिया पात्रों के आचरण पर क्या पड़ी यह तो लेखक ने दिखाया है किन्तु पात्र के मन पर उनका क्या प्रभाव पड़ा यह वह नहीं दिखला पाया । इस प्रतिक्रिया का थोड़ा-बहुत उल्लेख उसने भले ही कर लिया हो पर वह पर्याप्त नहीं है । प्रत्येक व्यक्ति को अपनी सहायता करते देख रानी मानकुमारी के मन में हलचल मच जाती है इसका वर्णन लेखक केवल इन थोड़े से शब्दों में करके रह जाता है रानी मानकुमारी की ममता में नहीं आ रहा था कि यह सब क्या हो रहा है और कैसे हो रहा है । जैसे उन्हें सोचने विचारने का समय नहीं मिल रहा था और कोई अज्ञात शक्ति तेजी के साथ उनके जीवन को झकझोर रही थी । कुछ विचित्र प्रकार का अनिश्चय आशाओं तथा आकांक्षाओं से भरा हुआ एक घुघ की तरह छा गया

या, उनके चारों ओर कुछ नितान्त नवीन होने वाला है, उनके जीवन में, उनको इस बात का आभास ही रहा था, लेकिन उस नितान्त नवीन क प्रति आक्षेपण के साथ एक तरह का मय भा भर गया था उनमें। क्या ये चार-पाँच व्यक्ति यानी मानक्युमारी के मन में केवल इतनी-सी हलचल ही मचा पाये ? इससे उसके मानसिक-संघर्ष की अभिव्यक्ति भी तो पूरी तरह नहीं होती।

लेखक ने स्वयं चरित्र-परिचय तथा चरित्र विश्लेषण तो किया ही है दूसरे पात्रों में भी चरित्र-चित्रण कराया है—क्यातक्यों के रूप में। मुख्यतः नाहर सिंह द्वारा लेखक ने पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ प्रकट करायी हैं। नाहरसिंह में व्यक्ति का परखने की सूक्ष्म निराक्षण शक्ति है इसलिए पात्रों के सम्बन्ध में उनका कथन बड़े यथार्थ है। शिवानन्द शर्मा के लिए वह कहता है—मुझे वह आत्मी बहुत अधिक अच्छा लगता है मैं सच कहता हूँ, उसके पान और उसकी प्रतिभा पर मैं चकित हूँ और मैं यह भी कह सकता हूँ कि वह वायव्या का परिधि तक पहुँचने वाला अहिंसामय है। लेकिन इसके यह अर्थ नहीं कि वह आत्मी निश्चित रूप से अच्छा होगा। देवतकर के सम्बन्ध में वह उवाच कहता है—'इतिनिपर साहज तुम बहादुर हो, साहसी हो, ईमानदार हो। तुम मुझे बहुत पसन्द हो। सिर्फ एक कमी है तुममें, तुम्हारे अन्दर जो दण और अहम् है वह एक धुनौती के रूप में निश्चिने लगता है।

'सामर्थ्य और सीमा' के किमी चरित्र में आत्म-विश्लेषण की प्रवृत्ति नहीं है। मनोवैज्ञानिक विश्लेषण तथा चरित्र-चित्रण की दृष्टि से प्रस्तुत उपन्यास अत्यन्त कमजोर रचना है। अपने उद्देश्य में लेखक इतना अधिक लीन हो गया है कि उस उपन्यास के कला-गण को संभारने तक का ध्यान नहीं रहा। मगर कुछ उसने अपने उद्देश्य के निमित्त किया है। अपनी उद्देश्य पूर्ति में कश्चित् उस मनोविश्लेषण की आवश्यकता अनुभव नहीं हुई।

चित्रलेखा की अभिव्यक्ति की भाँति ही सामर्थ्य और सीमा की अभिव्यक्ति का आत्मक तथा सरस है। स्थितकन दृश्य विषय और प्रवृत्ति चित्रण सेना में लेखक का कवि-हृदय झोलता है—रात भर कर्पा हाजी रही है माधारण क्या नहीं, जैसी बरगात की पहला क्या हाजी है जब मिट्टी घमकने लगता है जब प्यासी धरती समुद्र बिन्दु के समान पड़ता हुई यूँने का पीकर अपने अन्दर जाने सौरभ को वायु में विखर कर अपनी कृत्त जोर अपने उपन्यास का प्रशान करती है जब परा-गणी मनुष्य भी पुनःकर गा उठत है और अपने मनाने निवस पड़ते हैं।

रेखा (१९६४)

चित्रलेखा और तीन वष की भाँति ही रेखा (१९६४) म वर्मा जी ने फिर से काम समस्या को ही अपने उन्-यास का विषय बनाया है। किन्तु रेखा म काम विवृति अधिक स्पष्ट और उमर कर आयी है। आज के जीवन की काम कुंठाए बड़ी विचित्र है। इसका मनाविज्ञान बड़ा गूढ और रहस्यमय है। रेखा व माध्यम स नेखन ने बडे अनोखे ढग से इमे उठाया है। पर कोई समाधान रखने का प्रयास उसने नहीं किया। न ही चित्रलेखा की भाँति उसे 'मु और कु के अत तक पहुँचाया है या तीन वष की भाँति निष्कप निवाला है।

प्रेम का रूप क्या है ? क्या वह आत्मिक सम्बन्ध मात्र है या शारीरिक सम्बन्ध मे ही उसकी परितृप्ति है ? मन अपनी बाह्य और अन्तरचेतनाके उलझाव म पडकर इसका सही उत्तर नहीं खोज पाता। इसकी प्रतिक्रिया होती है व्यक्ति के विचित्र आचरण और असगत व्यवहार के रूप म। रेखा एक ऐसा ही चरित्र है। एक ओर वह रूपगविता है और लोगो को आकृति मात्र के रूप मे देखती है। अपना सौंदर्य बिखेरती थी रेखा उन आकृतियो पर, केवल इमलिए कि इसमे उसे सुख मिलता था। उनके सौंदर्य से प्रभावित होकर ये आकृतियाँ उसकी सराहना करें यही नहीं ये आकृतियाँ उसके आगे पीछे झुकें उससे अपने को हीन समझे—वह इन आकृतियो पर जैसे छा जाना चाहती हो। किन्तु उसका यह गर्व प्रभाशकर के सम्मुख नहीं टिक पाता। लाम प्रयत्न करने पर भी रेखा डाक्टर प्रभाशकर को आकृति के रूप मे नहीं देख सकी। क्या उनकी दृष्टि मे वह स्वय आकृति ही नहीं एक नाम है। प्रभाशकर की यह उपेक्षा वह सहन नहीं कर पाती और उसका अतर्दन उह अपने सम्मुख चुकाना चाहता है। उसकी यह मनोप्रथि ठीक चित्रलेखा की भाँति है। चित्रलेखा भी रूपगविता है और उसका अन्तमन भी कुमारगिरि को अपने सम्मुख चुकाने के अभिप्राय स उससे प्रेम करने का ढोग रचवाता है। उसकी यह मनोप्रथि कुमारगिरि के पतन व साथ छुल जाती है। इसके विपरीत रेखा की मनोप्रथि और भी अधिक उन्नत

पेना करती जाती है। जब प्रोफेसर का महान् व्यक्तित्व उसके सम्मुख झुक जाता है तो उसे परम सन्तोष मिलता है, और उसे लगता है कि वह प्रभाशकर का प्यार करने लगी है। वस्तुतः प्रोफेसर के प्रति उसमें असीम श्रद्धा है। यह श्रद्धा प्रारम्भ में उसी भाँति की है जो एक विद्यार्थी की अपने गुरुजन के प्रति होती है। माय ही इस श्रद्धा में एक अन्तर भी है, जो विपरीत स्वभावान् लो प्राणियाँ में हाता है। और इसी अन्तर का फलस्वरूप श्रद्धा प्रेम में परिणत हो जाती है। प्रोफेसर के जीवन के मूलेपन अनियमितता और अमुविधा का दूर करने के लिए वह उनसे विवाह कर बैठती है। इस विश्व विख्यात व्यक्ति को अपने निकटतम के रूप में पाकर कुछ दिन तक तो वह असीम आनन्द का अनुभव करती है, परन्तु जब उनसे उसकी शारीरिक भूख शांत नहीं हो पाती, तो एक विचित्र रिक्तता उसके जीवन में भर जाती है। उसकी मनोपिपि विवृत काम-कुण्डला का रूप धारण कर लेती है। देवकी के लडके रामशकर के माध्यम से युवा प्रभाशकर की कल्पना कर उनके हृत्पथ में हलचल मच जाती है और प्रथम बार वह अनुभव करती है कि प्रभाशकर में अब 'बासी जीवन' की सहाय मान अवशेष है। प्रथम बार उसके सम्मुख प्रश्न आता है कि आत्मा का पृथक् शरीर की भी एक अपनी माँग है जिसे दबाया नहीं जा सकता। उसका अचेतन मन इन सत्य को स्वीकार नहीं करता पर शराब के नशे में जब उसका अचेतन जागृत हो उठता है तब उसे अनुभव होता है कि उस बलिष्ठ बाहों के सहारे की आवश्यकता है, जो उसे युवा पुरुष से ही प्राप्त हो सकता है। अपेक्ष प्रभाशकर से वह सहारा उसे नहीं मिल सकता। ऐसी-भन स्थिति में प्रथम बार वह अपना शरीर किसी पर-पुरुष को सौंप देती है। सामश्वर के शरीर अपनी पवित्रता भंग होने पर जब उसके जीवन का सम्मोहन टूटता है तब उसे पश्चात्ताप हाता है कि उसने अपने देवता अपने आराध्य के साथ बड़ा विश्वासघात कर डाला। इस स्थल पर 'नक्षत्र' ने रेखा का बड़ा मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। एक मदानक दृष्ट मचा हुआ है उसमें भावना और बुद्धि का। अगस्त्य मधर्ष चम रहा था त्रिमम रेखा हूँती चना जा रहा थी। कितने मन से उसका पति कितना विश्वास था उनका उमक ऊँकर। और उनको उमन धोगा लिया। किम तरह वह उनमें अपनी बात बहे, किम तरह वह उनमें शमा मणि ? और अपने पति में अपने विश्वासघात की बात बह कर उत बहूँ गम्भव है शान्ति मिल भी जाए त्रिम क्या वह आन देवता में एक मदानक अशान्ति न उन्मत्त कर देती ? क्या अपने पार की चाला में अपने उमका जयना कानी नहा ? प्रभाशकर का भी अपने पार की जगना में शान्त क्या क्या

इससे भी बड़ा पाप न होगा? और प्राणेश्वर को गम बुद्ध बनना देने में ता उसका पाप नहीं धुन जाएगा। भावना पर बुद्धि विजय पाती जाती थी नहीं अपनी बात वह प्राणेश्वर को न बतला सकेगी—अपने हित में नही, प्राणेश्वर के हित में। प्राणेश्वर का जरा भी पीडा पहुँच यह उसके लिए अमर्य था और यह भयानक पीडा वह स्वयं प्राणेश्वर को पहुँचाए यह पाप उमक विश्वासघात का पाप से भी बड़ा होगा। उम अपने अन्दर ही प्रायश्चित्त की ज्वाना में जलना चाहिए। इस प्रकार उमका मन उमसे दुराव छिपाव का यह बहाना ढँढवा लता है अनजाने ही उममें एक दुस्साहस घर कर जाता है। उसका दुस्साहस इतना अधिक बढ जाता है कि वह शारीरिक सम्बन्ध के प्रति भी एक निष्ठ नहीं रह पाती। और सोमेश्वर निरजन शिवेश्वर शशिकान मजर यशवर्तमिह योगेश्वर मिश्र आदि अनेक पुरुषों से शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करती है। इस प्रकार उसका आचरण उच्छिद्धलता की सीमा तक पहुँच जाता है। स्वभावतः यहा एक प्रश्न पाठक के मन में उठता है कि ता क्या रखा चरित्रहीन है? उममें और एक बाजार औरत में अन्तर ही क्या रहा? माना कि प्रभाशकर से उसकी शारीरिक भूख शांत नही होती। तो क्या नही वह किसी एक पुरुष से शारीरिक सम्बन्ध रख कर तृप्ति का अनुभव करती? इस प्रश्न के उत्तर के लिए हमें मनोवैज्ञानिक सत्य की तह में जाना पडता है। जैसा कि हम पहले कह आए हैं एक आर उसका बाह्य मन अपने पति की पूजा करता है उमें देवता मानता है और दूसरी ओर उमका अन्तर्मन शारीरिक तृप्ति चाहता है। इनस्वरूप उसके आचरण में अमर्यगति उत्पन्न हो जाती है। आत्मिक रूप से प्रभाशकर के प्रति एकनिष्ठ होकर शारीरिक रूप से वह किसी एक के प्रति एकनिष्ठ नही हो पाती। पर्येन पुरुष से शारीरिक सम्बन्ध रखने के पश्चात् उसे पश्चात्ताप होता है।

काम विवृति प्रभाशकर में भी है किन्तु उनका दार्शनिक व्यक्तित्व के सम्मुख वह छिपना गया है। देवकी के साथ शारीरिक सम्बन्ध होने पर भी उसके प्रति उनके मन में प्रेम सहानुभूति या करुणा जैसी सवेदना नहीं और देवकी को पाने के बाद उह लगा कि स्त्री शरीर की भूख मिटाने की एक सजा भर है। स्त्री के सम्बन्ध का कोई भावनात्मक पक्ष भी है यह वह न जान सके। न जाने कितनी स्त्रियाँ उनके जीवन में आयी और चली गयी, भावनात्मक रूप से वह किसी के साथ नहीं बध सके। देवकी इस नियम में अपवाद थी पर वह देवकी से नहीं चिपके थे देवकी उनसे चिपक गयी थी, इस ढंग से कि प्रभाशकर को इस बात का अनुभव ही न हो पाए। आत्मिक रूप से वे देवकी से उगसीन

बने रहते हैं। देवकी से उनका अपने बच्चे हैं किन्तु उन बच्चों पर भी उनका प्रभाव नहीं है। रमाशंकर का देखकर उनका भाव पर बल पड़ जाते हैं। अपने बच्चा का वह अपना काक समझते हैं और उनके प्रति अपना बंधन कतन्य नहीं समझते। बन्धु प्रभाशंकर प्रायः प्रार्थी और आत्मकन्द्रित व्यक्ति हैं। अपने अतिरिक्त किना और की बात नहीं मान सकते। जीवन का अन्तिम दिन वे स्वयं अपना मना-विश्रान्त करके गए थे। जहाँ तक मरा सवाल है शास्त्र पुरुष का प्रेम वाचना से आतप्राप्त होता है। मैं अपनी पारिविक भावना में अर्थात् हा गया था और भरी हम पशुता का षड मिल रहा है मृत्यु। आमा का धर्म का साथ शरीर का भी तो काइ धम है। अपने शरीर की भूख का तो मैं जानता था, लेकिन तुम्हारे शरीर का भी काइ भूख हो सकता है मृत्यु मैं भूल गया था। समस्त मानवीय दुखनशाएँ जन्म हैं। शारीरिक भूख मिटाने के लिए वह युवा पत्नी का रहते रत्ना से मन बहलाव करते हैं।

रेखा और प्रभाशंकर का द्वाण उन्मत्त का अन्य पात्र भा कामचलित दुखनशाओं का प्रसन्न है। 'रेखा हम समाज का एक एक अंग से परिवर्तित कराती है, ता करके म दहन में बड़ा सम्मानित और सम्म लगता है, किन्तु जिनका भाउरी रूप बड़ा निरुपेक्ष है। इसका प्रत्येक पात्र चरित्रहीन और उन्मत्त है। दारानिक होने का नाउ प्रभाशंकर एक यान्त्रिक मित्य का चरित्र में घानी-मा गरिमा अवश्य है अन्यथा अन्य पात्रों में दिग्गजाना का काम विवृत्तियाँ और चारित्रिक कमजाहियाँ व्याप्त हैं। 'रेखा को पण मध्य हमारे मन-भक्तिज में बार-बार एक प्रश्न उठता है कि क्या बन्धु पत्नी मध्या है? क्या नागी और पुरुष इन दुम्माहमी हो सकते हैं? क्या शारीरिक भूख नर-नारी को इतना पतित बना सकता है? क्या शारीरिक भूख भाव हो गये कुछ है? शारीरिक भूख का इतना निरुपेक्ष रूप देखकर हमारे मन में उनका प्रति विवृत्त नर जाती है और रेखा का रचनात्मक उन्मत्त का प्रति पाण शकानु हो उठता है। क्या जा का अन्य सभी कृतियों में हमें स्वस्थ जीवन स्थान मिलता है। या क्या रेखा हम एक अन्वस्य जीवन-दशन देती है? बन्धु रेखा का जीवन-स्थान भी नहीं है या बमात्री की अन्य कृतियों में है। भोगवाण का प्रति लयक में सदैव आस्था रहा है। वह उस अध्यात्मवाण पर विश्वास कभी नहीं कर पाया जिसमें आत्मा के हनन को महत्व दिया गया है। रेखा में भी वह यही बात रेखा का शब्दों में कहता है। शरीर की कमजाहियों पर विजय पायी जा सकती है, अपनी आत्मा को दबाकर, उध कृच्छि करके। हमारे धर्मशास्त्रों में यही व्यवस्था है— व्रत, उपवास, तपस्या। अपनी आत्मा का कृच्छि करके शरीर की कमजाहियाँ

समाज जनमानस हा क्यों न रहा हा ? रेखा स वह स्पष्ट शांति म कहती है
 'कितन सौम्य कितने मुशील कितने विनम्र थ यह । मैं इन पर मुग्ध था । और
 जब स्नाना पाना का मृत्यु हुई ता मुने इन पर कितनी दया आयी । मैं इन्हें
 दूर स दखता और मरी आत्मा म पानी भर आता था । मैं प्राक्खर का पाना
 चांता थी और उस समय मुने अनन पति का हृत्माप्तरा ज्ञान का बहाना
 मिल गया । उन क त्रिए मरे पाम मरा रूय था मरी जबानी थी । और उन
 दकर मने पा त्रिया प्राप्तेमर का । जत्रोव-सा मीण था वह त्रिकिन उम सौते क
 मर ना मय मरना किन्ना क लिए मम्भर नग्य ह प्राक्खर क्या मरे लिए भी
 नहा ह । मैं सच कहता हूँ रेखा मैंन प्राक्खर स प्रेम किया [^] बार प्राक्खर
 क प्रति मरी हमेशा ममता रती ह । उनन प्राप्तेमर क पुत्र का धारण किया
 और उनती मतान क मरण पापण न त्रिए हा वह प्राप्तेमर स मया लती था ।
 इमतिण उमर ध्यार का मय कवन मय रैसा स नहा तान सक्त । प्राक्खर क
 प्रति मयक हृत्प म मयैव ममत्व बना रहता है यद्यपि उनन उन सयैव हा
 हृत्पवदार और उमता मिलता ह ।

पानवती म हमें प्रेम का एक दूनरा हा रय मिनता है । निष्काम सवा
 और लगन उमक प्रेम क आधार हैं । और इन प्रकार बमाजी न नारा का कभी
 गिराया नहा है ।

रेखा एक चरित्र प्रधान उान्याम है । पात्रा का मनाविश्लेषण लखक न
 बर मनायाग स किया है । मानसिक तनाव मयक प्रदक पात्र म है और इसका
 विश्लेषण कभी लखक ने स्वय किया है कभी स्वय चरित्र म कराया है और
 कभी दूमर पात्रा स । प्रारम्भ का अधिकाश मनाविश्लेषण लखक द्वारा हुआ है ।
 मयस अधिक सकल चरित्र-चित्रण तब हुआ है जब एतसाध दूमरे का चरित्राद्
 धातन स्पष्ट शांति म करता है । प्राप्तेमर क मते अनिमान और अह का अनुभव
 पात्रक मरतता स नहीं कर पाता यन्ि त्रिका उनक चरित्र का उदघातन यह
 कहकर न करता कि 'हय पुण्य म कितना अह है कितना शून्य आत्म
 विश्वास है कि वह अपना मय बरी मरतता म उगल दता है यद्यपि वह दूमरों
 के मय जो अनन अन्तर बानी न जान किन तरहूँ में द्धियाय रय मकता है ।
 रेखा का मनाविश्लेषण पात्रकर धाप्तेमनाय मिश्र करत हैं । रेखा जब हाकर स
 कहती है कि मैं प्राक्खर म प्रेम करता हूँ । पउरह प्रेम करती हूँ, ता हाकर
 धाप्तेमनाय उमका बर मनाविश्लेषण करत हैं किन रेखा का भजन मन नगी
 ममस पाया था । व कत्रव है त्रिकिन मैं मुमउ किन बडा कडुवा और कगर
 सय क ह रहा है—मुम प्राक्खर उ प्रेम नग्य करता । उनक प्रति मुन्तारे अन्तर

बुझ गया है—एक अनन्द्य और गहन अंधकार इन्हीं में उस रहता है। पर वह नियतिवाद दरवाजे के अन्दर का स्वामाविरुद्ध परिपति है जो अच्युत नाम नामक का उगी है। प्रभाकर का नृपु क आघात से रखा पावन हाथर कह सकता है। आप जानते हैं नियति न मरे साथ बन्त बना गिनवाड किया है तन्नि में रेखा है—रेखा। सब मिट गए तन्नि यह रेखा—मिट-मिट कर भा यह अमित है। और उस प्रकार दरवाजे के शायक का शायरता भी स्पष्ट का जाती है।

उत्तम की भासा अत्यन्त अनिश्चयनापूण है। कुछ शो म असा तन्नि वक्ति का मान्य है। रेखा तन्नि या तन्नि मिश्र द्वारा ज्ञाना शारारिक नृप शान्त करना चाहता है तन्नि लिए वह रहता है। मुने तुम अरुन कगरे से वक्ति न कर मैं तुम्हारे हाथ तन्नि है—जो तन्नि मिश्र ने किस प्रकार का असा तन्नि यह तन्नि कुछ ही शो का मान्य न शक्ति नामा म अनिश्चय कर देता है। इस असा के का क्या है? जान का उतर नृप क्या है? आज तन्नि का नृप जान मन्ना। रात धिरेता आ रही था तन्नि या तन्नि का वन्त में अंधकार ज्ञान हुआ था और प्रकारा पान के लिए का प्राणा तन्नि अंधकार में दूबत जा रहा है।



हूँ हैं। स्वाधीनता आन्दोलन का जोश और उमा अमीर गरीब किसान मजदूर बच्चे-बूढ़े सभी में समा गया था। लोग सहृदय जेल जाते थे और ब्रिटिश सरकार परेशान थी इन निहृत्य लोगों से जो न लड़ते थे और न झगड़ते थे। किन्तु एक आर. ऐमा भी बग था जो स्वाधीनता आन्दोलन को कुचलन में अंग्रेजों का साथ दे रहा था। वह बग था—एक तो सरकारी अफसरों का और दूसरी ओर जमानारा का। इन दोनों का स्वायत्त अंग्रेजों के साथ जुड़ा था। भूत विमल चित्र का गंगाप्रसाद ब्रिटिश सरकार की सेवा कर उनका कृपा पात्र बनता है। इसी भाँति टेन्ने राम्से का रामनाथ स्वतंत्रता आन्दोलन कुचलन में अंग्रेजों को अपना पूरा सत्याग देता है क्योंकि वह जानता है कि हिन्दुस्तान की आजादी का अर्थ होगा जमानारा प्रथा का अन्त हो जाना। किन्तु व्यापारी बग का स्वायत्त जमानारा बग न स्वायत्त सभिन था। हिन्दुस्तान का गुनामा बहुत बड़ा अर्थ में व्यापारिक और आर्थिक गुलामा थी। इंग्लैंड का व्यापारिक नाति से हिन्दुस्तान के पूजापतिया का बहुत बड़ा धक्का लगता था। इसलिए व्यापारी बग अपने हित के लिए स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लेकर ब्रिटिश सरकार से लड़ रहा था। भारत में स्वाधीनता आन्दोलन बँदू लगाते न उगाया, पर यह बग केवल कांग्रेस का साथ दे रहा था क्योंकि कांग्रेस के द्वारा ब्रिटिशों का मान का बहिष्कार और दशों माल का खत बढ़ रही थी। कांग्रेस का भ्रमण इन्हीं के बूढ़े पर चल रहा था और यही पार्टी स्वाधीनता आन्दोलन का सबसे मजबूत पार्टी थी। क्योंकि साम्यवाद को रूसी सहायता मिलने पर भी पूजापतिया के विरोधी होने के कारण आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं था। इसी भाँति प्रांतिकारी दल भी हिंसा अपनाते के बावजूद आर्थिक सहायता में बचिन था। और इसलिए उन्हें हकैनी और सूटमार करने पड़ती थी। 'टेन्ने राम्से' म यह विशाल पृष्ठभूमि हमारे सामने आती है। जैसा कि हम पहले कह चुके हैं 'नेवक' किमी मत में आस्था नहीं रखता क्योंकि उमक अनुसार सभी राम्से टन-मन हैं। फिर भी उसका सारा प्रांतिकारी दल की ओर स्वभावतः हा गया है। किन्तु मीथी मन्धी बानें में प्रांतिकारी दल को न तो सेवक न दुआ ही है और न उमम रचि स्थिनापी है। यहाँ भी 'नेवक' सभी में अनास्था रखता है। सचिन उमम अनास्था का भाव बैगा नहीं है जमा टन मङ्ग राम्से म था क्योंकि ममय के साथ इन विभिन्न पार्टियों की कार्यप्रणाली और स्थिति में अन्तर आया। उमम सेवक की धारणा बन गयी।

गोपा सचची बातें १९३६ १९४८ के भारत के राजनितिक सामाजिक और आर्थिक पहलुओं पर विचार से प्रकाश डालता है। इन सीटों का सेवक न

विवृतिर्था मौजूद था। देश का राजनतिक वातावरण उग्र सामाजिक और आर्थिक विघटन और मक्रमण का कारण बन रहा था। देश में स्वतंत्रता आंदोलन जोरो पर अवश्य था पर उमरी भी अपना कमजोरियाँ थीं क्योंकि जनता और उनके नेताओं के मन्त्रय के अभाव में देश कोई निश्चित और ठोस काम नहीं उठा पा रहा था। गांधी जी की अहिंसा पर लागू का अटूट विश्वास था किन्तु उनकी निष्क्रियता और शायरता योग्य ही प्रतीता का घड़ी अमल्य बना रही थी। दूसरी आर साम्यवादी मन मानस के निवृत्त अवश्य था पर वह तभी तक रह पाया जब तक वह राष्ट्रीय आन्दोलन पर जाट दना रना। किन्तु बाद में मन्त्रय के प्राण महानुभूति के फलस्वरूप तृतीय महायुद्ध में उमने सक्रिय भाग लेना पर बन भी भारतीय जनता की महानुभूति का बैठा। इम अतिरिक्त किन्तु मुनिम भेद भाव जिमे प्राणा ही विवाइ एण्ड फल की नाति ने बनाया लिया था भारत में आपसी फूट को बनावा द रही थी। गांधी मुभाप नरह जोर जिन्ना के प्रसित्वा ही टकगहल अना अलग मनभन वेना बन रही थी। फलत एत समय मे राष्ट्रीय आन्दोलन विफल हा रहे थे। एम समय गहा मा गांधी ने 'भारत छोडना आंदोलन उठाया पर वह त्रु समोत का रूप धारण कर रह गया। हिन्दू-मुस्लिम भन और ब्रिटिश मना तथा देश की पुलिस की निष्क्यता के तिरिभन इम आन्दोलन के कुचने जाने का मूल कारण था देश की अनतिक्रता। इस अनतिक्रता ने त्रुट का रूप धारण कर लिया था। महगाई बेतहाशा बनना जा रही थी और इम महगाई स जनसमुनाय त्रस्त था। एक आर एक छोटा मा वग बेतहाशा अमीर बनना जा रहा था और दूसरी आर करोने आदमी अभाव का जीवन व्यतीत कर रहे थे। फलत भारत छोडना आन्दोलन की असक्यता ने कांप्रेस को ताड कर रख दिया था। नेता सब जल मे डूब गिये थे इतलिय कांप्रेस कुछ भी नहा कर पा रही थी। स्वयं दश भी भूल अनात बेकारी और दरिद्रता से लडखडा रहा था। जनता मु। हो चुकी थी। और इस प्रकार सीधी सच्ची बात में लेखक तदयुगीन भारत की डवाडोल अवस्था से हमारा परिचय कराता है।

जब सभी राष्ट्रीय आंदोलन में नक्क ने अनास्था प्रकट की है तो देश स्वतंत्र वेत हुआ ? यहाँ लेखक एक नवान दृष्टिकोण रखता है जो उसक नियति वाद में आस्था का परिचायक है। उसक अनुसार यह स्वतंत्रता हम गांधी ने नहा जिनाई है यन् स्वतंत्रता हम जिगांधी है—टिन्लर ने, यह स्वतंत्रता जिगांधी है—मुभाप ने। ब्रिटन बेतरह कमजोर और तथाह हो गया है—टिन्लर ने स्वयं मरत मरत ब्रिटेन को बेतरह तोन लिया है। वह स्वतंत्रता हम दिगांधी है

नुभाय ने जिसने हिंदुस्तानी मना और नौसना म हिंसा और विद्रोह का वाज वा न्यथ जिमने स्वयं मरकर देश का एक नया जीवन प्रदान किया ।

सीधी मच्छी बातें पट्ट ममय हम बार-बार यह लगता है कि लख का प्रेम महात्मा गांधी का नाति और उनकी अहिंसा की आराधना करने म रट्ट हा गया है । पर वास्तव म एना नहा है । वास्तव म साधी मच्छी घाने म लख का प्रेम और उमक कायकलाआ क वाट विवाट ममानवाट और उमक अनुयायिया का निष्क्रियता साम्यवाट और उमका विवन्दिता दो भीधे मच्च ए म प्रस्तुत करता है । का प्रेम उमका निष्पटराश और उमकी अहिंसा का नाति क प्रति लख प्रारम्भ म ही अनाम्ना गना है । उमक गनता है कि गांधी म गन सयन व्यक्तिव था वह महान् थ व दन्ता थ । पर वह म ना माता है कि उमक द्वारा अनाया अहिंसा का प्रेम म निष्क्रियता गान का कारण बन रहा था । गान अनुभव करने लग व कि अहिंसा का असीम आ-आकर व मन्तानेन हाउ जा रहे हैं । और एम सागा का एक दन मगाजवाट का आर म्भ गना था । उमका विचारवाग साम्यवाट न बहुत कुछ मने जाती थी । एमक अतिरिक्त दूनरा आर विगुट साम्यवाट एन ना था जा वग म और ऊच-नीच मिगान में ना हा आ था । 'साधी मच्छी बातें क पात्र हमी साम्यवाणी विचार धारा क हैं—पर व मच उच्च-माध्य वग क हैं और हमनिग उमक लिए म्मु निम मन्त्र एक शोक और केरान का धात्र बनार रह जाता है बर्बाद अभाव म पना हाउवाता कुग्ना उमक पाम नहीं है । इस प्रकार 'साधी मच्छी बातें का म का ना नहीं साम्यवाट क कायकलाआ क बहुत-बहुत विधारा और आडम्बरपूण व्यक्तिव का मार-मन्त्र एन म प्रस्तुत करता है । साम्यवाट का निग पाठनवाल इन सागा म वाट विवाट और आराधना की प्रवृत्ति अधिा है मन्त्रिय वाट एन का दन । हमन अतिरिक्त मन्त्र का एन एन वान के भारत की साम्यवाट अवस्था एनता का मना-वृत्ति और अनतिवगा म हमारा परिचय कराना है । भारत इन मन्त्र का म कना पन्त्र थना रहा इसक मूव म भारतीय मन्त्रा, मन्त्र और मन्त्रिका की द्वािय मान्यताएँ तिहित था । अने परतन्ता क वान म भारत की और कायकला का अभाव एन बन गया था । हिन्दुस्तान की बार-बारिया मना ये मन्त्री म की आर व स्वाधिनविज पर अन्त विरवान करती था । एन म म अदेशा क प्रति विवाट नहा करती था । अन्ता ए उहे ममान् मन्त्रिका ए रती था । निम्नवग म राजनविज पटना नहा क धरावर की । एन मन्त्रिका विमों राजनविज पटना की पर व क वावरता का निम्न म ।

वग आपसी मतभेद। मे इतना उलझा हुआ था कि देश की सामाजिक समस्याओं की आर इसका ध्यान ही नहीं जा रहा था। बगाल में अज्ञान पड़ा। अभाव, अस्त और भूखा जनसमुदाय मौत के मंड़ में पड़ा रहा। लेकिन हमारे प्रति अभी अंधे बने रहे। यही नहीं हम भूखे नगे जनसमुदाय ने स्वयं भी न कोई विरोध किया न दूतकार की। यह सब भारतीयों की निष्क्रियता कायदा और उन्मादीता नहीं तो और क्या था? लेखक का उद्देश्य भारत की इसी आदिम दुःखिता और अनतिक्रमता का प्रकाशन करना है। किसी मत की कटु आलोचना करना नहीं है। लेखक ने जो कुछ कहा है वे सीधी सच्ची बातें हैं। हमने हमें स्वीकार नहीं कर सकते।

मीथी सच्चा बात राजनीति चेतना का विकृत रूप ही प्रस्तुत नहीं करता सामाजिक विकृति और व्यक्ति-कुण्ड को भी प्रकट करता है। काँप्रस का नाम पर अगस्त साहू का अथ सचय रूपलाल की धन लिप्ता वश्यापान की स्वायत्तरता शिक्षण क्षेत्र की अनतिक्रमता उच्च मध्य वर्ग की कुठारों और प्रेम विकृतियाँ जिसके भाग थे। समाज के इस खालनपन को व्यक्ति के कुण्डल मनाविकारों का लेखक ने नतिक्रमता और हृदय की ईमानदारी पर विश्वास करने का आत्मप्रबुद्ध जगतप्रकाश के लिए वातावरण और परिस्थिति के रूप में ग्रहण किया है। इन परिस्थितियों में आ पड़ता है निम्न मध्य वर्ग का यह व्यक्ति, जिसमें अभाव से पैदा होने वाली कुण्डल है जो साम्यवाद का स्त्रोत्र न पीट कर भी उनके दिल में अनायास ही आ पड़ता है। जगतप्रकाश जो अभी तक अहिंसा की पवित्रता पर अद्वैत विश्वास करता था जो महात्मा गाँधी को महान् मानता था वह साम्यवाद पर गहरी आस्था का अनुभव करने लगता है। और यह राजनीति जगतप्रकाश के लिए खिलवाड़ नहीं बन पाती क्योंकि उसे जीवित रहने के लिए सधप करना पड़ता है। धीरे-धीरे उसका विश्वास हो जाता है कि केवल समाजवाद में यह क्षमता है जो दुनिया को एक बना सके। उसकी समस्या को हल करके विश्व शान्ति स्थापित कर सके। दुनिया के दुःख दैत्य का एक ही इलाज है—समाजवाद। व्यक्तिगत स्वार्थ झूठ वेदमानी जगतप्रकाश के स्वभाव से परे की चीजें हैं। दूसरी ओर कम्युनिज्म का स्त्रोत्र पीनेवाले जसवंत कुसुम मालती त्रिभुवन और कमलाकान्त के दिल में उसका कोई असर नहीं पड़ता। उनके लिए राजनीति एक शौक की चीज है। वे सब अपनी जमीन जायदाद सम्हालने में लगे रहते हैं। पर जगत प्रकाश के लिए साम्यवाद या राजनीति खिलवाड़ नहीं जीवन दशन बन जाते हैं। त्रितीय महायुद्ध में जा एक प्रकार से पीपुल्स वार थी दूसरे शब्दों में जो

आदर्शों और मानवता का युद्ध था, उसमें जगतप्रकाश तटस्थ नहीं रह पाता। युद्ध क्षेत्र में जाकर वह छुट उस सघन में योग देता है, क्योंकि सशय और घुटन की जिन्दगी से वह ऊब जाता है, जो महायुद्ध और भारत की परतंत्रता के कारण उत्पन्न हुई थी। किन्तु युद्ध क्षेत्र में जाकर भी उसे सतोप नहीं मिलता क्योंकि उसकी भी अपनी विवृतियाँ थी। फलतः अच्छाई, नतिकता और आस्था पर विश्वास करने वाले युवक जगतप्रकाश के लिए युद्ध क्षेत्र का अनुभव भी बड़ा तीखा और मर्मघातक होता है। एक अग्रज अफसर हिन्दुस्तानी अफसर का अपने से नीचा समझे—यह क्या? क्या यह रंग भेद और जातिभेद का श्राव मनुष्य की सामर्थ्य, सभ्यता, शारीरिक और बौद्धिक बल में है, जो शक्ति शाली और समय है वह श्रेष्ठ है, जो निबल और असमर्थ है वह पतित है। मानवता और आदर्शों की सड़ाई में भाग लेने के लिए जो जगतप्रकाश सेना में भर्ती होकर आया था, वह युद्ध क्षेत्र में आकर किन्हीं और ही विचारों में लौ जाता है। 'यह मृत्यु का ताण्डव यह भीषण कराह, ये गोले घमाके। इन सबके बीच वह क्यों आ पड़ा? महात्मा गाँधी ने जो अहिंसा का संदेश दिया है, उस संदेश में वही कोई सत्य है—उसे लग रहा था। हिंसा विनाश है, निर्माण नहीं है। वह विनाश के प्राण में आ पड़ा है, या वह कहना अधिक ठीक होगा कि वह इन विनाश प्राण में छुट अपनी इच्छा से आया है। शायद इसलिए कि बिना विनाश के निर्माण संभव नहीं है। मानव समाज में नयी परंपराओं का अंगर निर्माण करना है, तो उसकी प्राचीन दूषित और विवृत परंपराओं को नष्ट करना भी होगा। इन परंपराओं को नष्ट करने के लिए इन परंपराओं के पोषक और प्रतिपादक तत्वों को भी नष्ट करना होगा। इन्हीं तत्वों के विनाश का नाम युद्ध है। लेकिन—लेकिन क्या यह विनाश निरान्न आवश्यक है?

मनुष्य को मारने की क्या आवश्यकता? वह तो नश्वर है। वह छुट मर जायगा। नहीं मनुष्य का मारने में काम नहीं खनगा मनुष्य को परंपराओं को नष्ट किया जाना चाहिए। हरेक मनुष्य परंपराएँ लेकर जन्म लेता है परंपराएँ छाडकर मरता है। मनुष्य परंपरा द्वारा निर्मित है लेकिन वह परंपरा भी तो मनुष्य द्वारा निर्मित है। मनुष्य का ज्ञान उमक विश्वास और उमके अनुभवों ने परंपरा का जन्म लिया है। ज्ञान विश्वास और अनुभव—य तीनों आरंभभूत हैं मनुष्य की भावना की उमक हैं। भावना मारी नष्ट जाती वह कथन में ली जा सकती है। विवृतियों का कथन हृदय परिवर्तन द्वारा नष्ट किया जा सकता है—महात्मा गाँधी का यह मत है। एक रत्न-ज्ञान

और नर-साहार ने तो मनुष्य व अन्तरवाणी घृणा उभरती है। उमर अन्तरवाणी हिमा जागती है। मानव नमाज की गारी विट्टियाँ इसी घृणा और शिमा की उपज हैं। घृणा और हिमा म विट्टिया का न। म्पाया जा सकता।

विभिन्न वर्ग और प्रकार व लागे के सपर म अपने जीवनाभया म, जगतप्रकाश जो जीवन-दर्शन मचित करता है व उमरी हिमा अहिमा की एक नयी और मौनिक व्याख्या स आतप्रोत है। यह उस हिमा पर विश्वास करता है जा मानव कल्याण व त्रिए आवश्यक है और उस अहिमा पर अविश्वास करना है जा मनुष्य मे कायरता और नपुंसकता भर द। यद्यपि जगतप्रकाश की मायताए और विश्वास सुलझे और स्पष्ट नहा हैं तद्पुगीन वानावरण और उसकी परिस्थितियाँ उसके त्रिए उत्तरदायी हैं पर उसम ह्म्य का मच्चाई जोर अनुभूति की गहराई है। इसलिए वह अपने जोर दूसरो क प्रति म्त्रैव सच्चा बना रहता है। स्वाथ उसके स्वभाव क परे की चीज है। परदु स—वातरता उमकी प्रकृति है। किन्तु जीवन की असफलताएँ उसके कट्टु अनुभव उम तोकर रव देते हैं।

काम-क्षेत्र की असफलताएँ जगतप्रकाश म काम-कुण्डा पैग कर देती हैं। स्नेह सौहाद विश्वास और शारीरिक तुष्टि उसे सभी से मिलती है पर वह आत्मिक सतोप उसे किसी से नहीं मिनता जा जीवन भर उमका बना रहे या उम अपना ले। जिसे भी वह अपना बनाना चाहता है वह रुसी और की हो जाती है। कुसनुम यमुना मालती मुग्धा सभी किसी और की हो जाती हैं। प्रेम व वदनेम उसे मिलती है घोर निराशा और अपमान। पर इससे वह निष्क्रिय आर उन्मासीन नहीं हो जाता। एक वार वह टूट सा अवश्य जाता है पर फिर वह एक ही झटके म अपने मन की तमाम कमजोरिया पर विजय पाकर कम-क्षेत्र म कू मपडता है। निष्क्रिय जीवन उसके लिए असह्य है। मानवता के लिए वह कुछ करना चाहता है। किन्तु वह मन का बडा कमजोर है जिसके कारण वह युद्ध क्षेत्र म भाग खडा हाता है। बगाल के अकाल पीणित क्षेत्र से निकल भागता है। और उसका अंत भी उसकी इसी कमजोरी के कारण हाता है। लेखक ने जगत प्रकाश का हृदयादोलन और अन्तद्वन्द्व बडे अच्छे ढग से चित्रित किया है। उसका मानमिक सघष बडा तीव्र है। एक छोटी-से छाटी बात उसके मन मस्तिष्क म हलचल पैदा कर देती है।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, साम्यवाद का शिरोरा पीटने वाले उच्च-मध्य-वर्ग की विट्टिया पर लेखक ने अच्छा व्यंग्य किया है। वर्ग भेद को मिटाने का उनका नारा केवल प्रदर्शन मात्र है। कुसनुम जमील अहमद के

नमलिए धुनमिल जाती है जिमसे उमसी मिल का उमस कोई नुकसान न पहुँचे और इसमें भी अधिक इसमें उम अहम् तुष्टि मिलता है। जमबन्त ठीक ही कहता है लेकिन तुम्हें ता यह नियाना था कि तुम भ्रम भाव व ऊपर ही नहो। हमारी और महानुभूति की प्रतिमा हा। आत्मा आमतौर स दूमरा का इतना अधिक धोना नहीं देता जितना वह पुत्र अपन का देता है। तुम अपना नगर म महान् और उत्तर दिग्गता चाहती हा। गगतप्रकाश की वह रूप स इसलिए, महायता करती है कि उमस उमके जीवन की मनापनी दूर हाता ह, उमक धनाके का दुनिया धनी रहनी है। सलाज बापि का वह इगलिए आधिक सहायता करती है कि लाग उमक प्रशमक बन रह। लघाटे की मृत्यु पर उमे दुख नहा हाता, उमक यहाँ जाकर वह रिमा का दुख-दः नहीं बाँट सकता केवल पैरान व रग मे पैस द सकती है। जमीन कुसतुम का प्रवृत्ति का ठीक ठीक व्याख्या करता है यह कुसतुम अपन का देने नहाआयी है यह मिफ दूमरा का पान के लिए निकली है। इसके पाम दीलत है, और यह अपनी दीनत म दूमरों को सरीना जानती है। इसकी दीनत व साय इसका अस्तित्व इस बुरा तरह स धुनमिल गया है कि दूसरे इसक अस्तित्व व प्रेरक तत्व इसकी दीलत की अहमियत को देख नहा पाते। कुसतुम में यौन विवृति भी मौजूद है और यह विवृति इसलिए है कि उमम आत्म समपण की भावना नहा है अधिभार और आधिपत्य की प्रवृत्ति है। जमबन्त एक सबल व्यक्तिच का पुण्य है वह कुसतुम के आधिपत्य का स्वीकार नहीं कर पाता और इसलिए कुसतुम उम कभी नहा पा सकी।

मालती त्रिभुवन और मुपमा उच्च मध्य-वर्गीय समाज की विवृत मनावृत्ति प्रकट करत हैं। जमबन्त और जमाम अहम सबन व्यक्तित्व बाने पुण्य हैं। जमबन्त में अभाव वाली कुष्ण नहा है पर उमम अन्तरचेतना की उतनी हा सच्चाई है जितनी गगतप्रकाश में है। वह स्पष्टबानी है कुसतुम की नाति उममें प्रशान और अहम् तुष्टि की भावना नहीं है। उसकी मान्यना स्रष्ट और गुनग्री हुई हैं। वह रिमी प्रकार की काम-विवृति का भी शिकार नहा है। उमका अहम् पुण्य का अहम् है जो स्त्री स आत्म-समपण चाहता है। शक्ति स उम समपण और प्यार दोनों मिलता है।

पाठन-स कठिन स्थिति का मुझागला कठे िल से करता है । किन्तु मुसलमान होने के नाते उसमें धार्मिक मताग्रह बतमान है ।

उपन्यास में और भी अनेक पात्र हैं पर वे महत्वपूर्ण नहीं हैं । लाला देवराज लाला सेवाराम शिवदुनारी देवी सुखनान सैलाब आदि स सम्बन्धित इतिवृत्त मूल कथा से सम्बन्धित न होने पर भी निरर्थक नहीं है । वह समाज की विवृति को प्रकट करता है और उसने जगतप्रकाश व हृदय को झवझोरने का काम किया है । इसलिए कथा-संगठन में कोई त्रुटि नहीं है । पर इतना निश्चित है कि सीधी सच्ची बातों में राजनतिक विवरण आवश्यकता से अधिक अवश्य हो गये हैं । तिथिक्रम स तत्सम्बन्धी विवरण कही-कही इतना अधिक हो गया है कि हमें इतिहास का भ्रम होने लगता है । लेखक का टेडे मने रास भी एक राजनतिक उपन्यास है किन्तु उसमें यह कमी नहीं है । उसमें राजनतिक इतिहास का विवरण नहीं है वरन् एक ऐसा गहरा रग है, जो पाठको पर अपनी अमित छाप छोड़ता है । इसका कारण यह है कि उसमें लेखक ने राजनतिक परिस्थितियाँ और वातावरण के साथ कथा और पात्रों को ऐसा गूँथ दिया है कि उनसे पृथक एक-दूसरे का कोई अस्तित्व नहीं रह गया है । इसी कारण उसमें रोचकता अधिक है पाठको में भावनात्मक सवेत्ना उत्पन्न करने वाला तत्व अधिक है । किन्तु सीधी सच्ची बातों में जैसे राजनतिक वातावरण पात्रों पर घोषा गया है जैसे कृत्रिम स्थितियाँ उनके लिए उत्पन्न की गयी हैं ।

किन्तु उपन्यास के कथानक में शिथिलता नहीं है । कथानक नायक के चारा ओर घूमता है । एक प्रकार से लेखक उपन्यास को आत्म-कथात्मक शली में भी लिख सकता था । अन्य पात्रों तक से हमारा परिचय लेखक नायक की उपस्थिति में कराता है । यहाँ तक कि जो कुछ वह कहता है नायक के मनोविज्ञान को कुरेदने के लिए कहता है और सब कुछ नायक के लिए वातावरण और परिस्थिति उत्पन्न करने के लिए निर्मित करता है । तरह तरह की परिस्थितियाँ में पडकर नये-नये लोगों के सम्पर्क में आकर नायक जगतप्रकाश विविध जीवनानुभव संचित करता है और इहाँ सधर्षों में उसका चरित्र प्रस्फुटित हुआ है । वह अपने आचरण पर स्वयं मनन करता है और दूसरों से उसका विश्लेषण कराता है । वह अपने निकट सबसे अधिक जमील को पाता है और उसी से वह अपने मन की बात कहकर अपने मनोविज्ञान की व्याख्या कराता है । अय पात्र भी परस्पर एक दूसरे का चरित्र चित्रण करते हैं । वही कहा यह चित्रण पथपातपूर्ण अवश्य है पर उसमें सच्चाई भी है इससे हम इनकार नहीं कर सकते ।

सीधी मन्ची बातें विशुद्ध यथार्थवाणी दृष्टि से लिखा गया उपन्यास है। इसमें लखक ने कोई जीवन-दशान प्रस्तुत करने का प्रयत्न नहीं किया है। उसने सब कुछ यथायत्न रूप में चित्रित किया है। पात्रों के चरित्र की दुबलताएँ, दशा की अनतिक्रमता और विवृति सबको सीधे मन्चे ढङ्ग में प्रस्तुत किया है।

लखक ने जो कुछ कहा है वह सच है उससे हम कुछ नहीं माँग सकते। भारत की स्वतंत्रता हम पर लागू नहीं है वह हमें मिला नहीं है। क्योंकि दशा का स्वतंत्रता प्राप्ति के उल्लास के साथ महात्मा गाँधी की हत्या को लखक ने एक ऐसा प्रतीक बना लिया है जो अनायास ही परिस्थितियों द्वारा मिला हुआ स्वतंत्रता की असफलता का आरंभ कर रहा है। आखिर काम सान की स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी हम वहाँ आ पहुँचे हैं? कहीं कुछ कारण तो होना ही चाहिए। 'सीधी मन्ची बातें' में एक जगह जमीन जगतप्रकाश से कहा है 'तुम हिन्दू बुनपरस्त हो बिना दबताआ के तुम जिन्ना हा नहीं रहे सकते। खुश जाने यह बुनपरस्तों तुम्हें कहीं ले जायगी? और प्रस्तुत उपन्यास में लखक यह स्पष्ट कह रहा है कि हमने सिर्फ श्रेष्ठता की पूजा की है, उस दबता की मानसिक गुणामी में अनन्य अन्तर वाद चेतन—मानव की हत्या करके। जगतप्रकाश का टूटकर मरना भी एक प्रतीक है—हमारे विपराय और टूटने का। और इसी लिए सीधी मन्ची बातें में लखक ने अनाम्ना का नाम तोड़कर लिखा है। दशने उसने प्रत्यक्ष उपन्यास में उसकी आस्थाएँ हिल उठाई हैं उसने विश्वास धूमिल पढ़ गये हैं किन्तु हम उपन्यास में आत-आत उसकी सारी आस्थाएँ एकत्र टूट गयी हैं उसने अन्तर वाद नार विश्वास नष्ट हो चुके हैं। और इसी अनाम्ना ने उसमें नियति पर विश्वास बसाया है। नियति हमारा जीवन मय है हमारा विश्वास है।

कहानियाँ

वर्माजी में कहानी गढ़ने की जद्दगुत क्षमता है और उनके पास कहानिया का अक्षय भंडार है भा। वैसे वर्माजी उपन्यासकार पहले हैं कहानीकार बाद में। किन्तु सब कहानियों को लेकर अगणित उपन्यास तो लिखे नहीं जा सकते। वैसे उनमें कथाकार वाला एक रूप और है छोटी कहानी को बृहत् रूप देने का। उनका वह फिर नहीं आई उपन्यास पैसा तुम्हें खा गया नाटक उनकी इस क्षमता के परिचायक हैं। उपयुक्त दोनों उपन्यास और नाटक पहले कहानी रूप में ही थे बाद में उन्हें प्रस्तुत रूप मिला। इन दोनों के विषय तथा भाव में कोई अन्तर नहीं आया है केवल रूप विधान परिवर्तन के। इसके अतिरिक्त वर्माजी एक ही विषय को दो प्रकार की संवेदनात्मक अनुभूति का साधन बनाने की कला में भी निपुण हैं। दो बाके कहानी संग्रह में संग्रहीत कहानी मेज की तस्वीर इसी शीपक से राख और चिनगारी नामक कहानी संग्रह में भी संग्रहीत है। दोनों की कथा एक है दोनों के नायक का नाम एक है। मेज की तस्वीर को लेकर ही नायक का मानसिक द्वन्द्व उत्पन्न होता है। किन्तु दोनों की संवेदना भिन्न भिन्न हैं। राख और चिनगारी वाले संग्रह की कहानी कुछ बड़ी है और उसमें नायक की पत्नी को भी प्रस्तुत किया गया है। इसमें हमारी संवेदना का केंद्र नायक की पत्नी बन गया है जबकि पहले संग्रह की कहानी की संवेदना नायक के प्रति है। एक बात और है पहले संग्रह की कहानी के नायक को प्रेमिका के प्रति घृणा उत्पन्न होती है क्योंकि उसने प्रेम का मूल्य न समझकर धनी व्यक्ति से विवाह कर लिया। किन्तु दूसरे संग्रह की कहानी के नायक की प्रेमिका हमारी दया की पात्र है जा कितना विवशतावश अपने प्रेमी से विवाह न कर सकी और अब उस देखने के लिए तड़पती रहती है। नायक उसके पास नहीं जा पाता। पत्नी की उत्तरता दयनीयता और उसकी निधनता प्रेमिका के पास न पहुँच सकने का कारण बनते हैं। वह विवशता वह उठना है वह एक सपना था-बड़ा सुंदर सपना था और तुम एक तस्वीर तुम उस सुंदर सपने की एक यादगार भर हो और यादगार भर रही।

इसके बाद वह लिखता है 'और यह विवशता यह विवशता ही हमारी जिन्दगी है। दो बर्षों' सपह की इस कहानी का अंत दूसरी भाँति है।

वर्माजी न कहानियाँ कम लिखी हैं किन्तु उनकी इस वैविध्यपूर्ण कलात्मक अभिव्यक्ति ने उनसे एक ही विषय का अनेक ढंग और रूप म लिगाया है। यह एक सफल कलाकार का कौशल है कि वह एक ही विषय का कितनी विविधता से प्रस्तुत करता है। वर्माजी न मनुष्य के रागात्मक मन्वधा को लेकर लिखा है और इसमें स प्रत्येक को उन्होंने अनेक पहलुओं में देखा है। उन्होंने गभीर विषय को मजाक और हँसी में उगाया है उाँने हल्के मजाक में एक गभीर समस्या की आर मकेत किया है। उनका ऊपर से हास्यात्मक लगनेवाला कहानिया में एक प्रच्छन्न, पर तीव्र व्यंग्य व्याप्त है। यही नहा व्यक्ति और समाज के तम्य प्रदर्शन के साथ उनकी कहानियों का दूसरा पक्ष भी है। किन्ती नवीन जीवन शक्ति की अभिव्यक्ति नय नतिक मानस्य की स्थापना और चिरंतन सत्य की अभिव्यक्ति। अत ययार्थ अकन और हास्यात्मक एक व्यंग्यात्मक चित्रण के साथ उनका कहानियाँ विचारात्तेजक भी हैं।

वर्माजी की सामाजिक कहानिया में समाज की विकृति के विरोध में व्यक्ति वाणी स्वर सुनार हुआ है। ऐसी अधिकांश कहानिया में सम्यता और उमम उन्नत विषमता पर प्रहार किया गया है। 'अथ विशाच वरना हम आत्मी य काम के बिहारी का अभिशाप, 'कुँवर साहब मर गये, एक अनुभव कापरना 'कारा कि मैं कर मकता रेल में कुँवर साहब का कुत्ता नाजिर मुशा राज आर चिनगाया वह फिर नहा आइ खया तुम्हें या गया गिनानन का नरक कहानियाँ खय का शक्ति और पूजा के सामम्य से उगन्न व्यक्ति की विवशता दयनोपता और जीवन की कठुता का प्रश्नन करती हैं। खये ने मनुष्य की मनुष्यता का अपहरण कर लिया है (अर्थ विशाच कुँवर साहब मर गये, कुँवर साहब का कुत्ता गया तुम्हें या गया) इसने मनुष्य का स्वाभिमान और स्वच्छा छीन ली है। यही नहीं इसने मनुष्य का अपराधी बनन की विवश कर लिया है। (बहारा का अभिशाप) नारी के मतीन का अपहरण किया है (एक अनुभव कारा मैं कर मकता वह फिर मना आई गिनानन का नरक) नारा के प्रेम का कुण्ठित किया है (राग और चिनगाया)। यही नहा उद्यने मनुष्य का सुपुत्रशोक बना लिया लिया है (छ आने का शिर) मनुष्य के जीवन की निरुद्देश्य और आशारा बना लिया है (आशारों) मनुष्य का खया कमने के अनतिक ठरीके अपनाने का विवश किया है (विचारण का

नया तरीका साला तिकड़मोसाल) । ये गव विषमताएँ और विवृतियाँ घन परक हैं ।

अपनी अनेक कहानियाँ म वर्माजी ने मेकम गम्बधी समस्याएँ भी प्रस्तुत की हैं । इस प्रकार की कुछ विवृतियाँ का उहने अर्थात्प्रित माना है और कुछ का विशुद्ध कामजनित । बाँय एक पैग और उत्तरदायित्व इन्स्टानम मेज की तस्वीर विवशता पियारी की काम विवृतियाँ अर्थजनित हैं । 'एक बान और है—इन कहानियाँ म वर्माजी न नारी का काफी गिराया है । आधुनिक नारी के प्रति उनकी दृष्टि अनुत्तर रही है । माना वह घन स प्यार करती है व्यक्ति से नहा । उत्तरदायित्व की नायिका मिस शोला घनी बाप की पुत्री एक भावुक युवक स प्रेम का खेल तो खेल सकती है किन्तु विवाह नहीं कर सकती । ऐसी नारियाँ घनी पुरुष से विवाह करती हैं किन्तु विवाह के पश्चात् न ता वे अपने पति से प्रेम कर पाती हैं और न प्रेमी की ही हो पाती हैं । वे मानती हैं कि यह आवश्यक नहीं कि प्रेम का अन्त विवाह हो यह भी आवश्यक नहा कि विवाह का अर्थ प्रेम हो । विवाह ता कवल जिन्गी का आर्थिक पहलू है (मेज की तस्वीर) । बाय एक पैग और म भी स्त्री को घन लिप्पु लिखाया है । किन्तु वर्माजी की कहानियाँ मे हम नारी का दूसरा रूप भी मिलता है जिसम नारी की विवशता नारीत्व क हनन और चरित्रहीनता क पीछे एक सात्विकता से भरा नारीत्व है । काश कि मैं कह सकता वह फिर नहा आइ एक अनुभव की नायिकाएँ अपना तन बेचकर भी उस मानवता की रक्षा करती हैं जो साधारण मानव म दुर्लभ है । व अपना तन बेचती हैं, आत्मा नहा । और इसलिए वे उनसे ऊँची हैं जो आत्मा बेचन हैं ।

नितान्त कामजनित समस्याओं को चकर लिखी कहानियाँ मे प्रेजण्टस बाहर भीतर पराजय अथवा मृत्यु दो रात उत्कृष्टतम हैं । प्रेजण्टस जहाँ हास्य प्रधान मनोरंजक कहानो है वहाँ उसमे नारी मन की कुण्डा का उद्घाटन भी हुआ है । यह एक ऐसी नारी की कुण्डा है जा विवाह करने की प्रबल इच्छा रखती है किन्तु प्रत्येक व्यक्ति जा उसके जीवन म आया भविष्य क मुख स्वप्न पैदा करता आया । प्रत्येक व्यक्ति का उसने भावी पति क रूप म देया । पर प्रत्येक उस प्रेजण्टस द सकता था पर अपनी नहा बना सकता था । धीरे धीरे वह उसकी अन्मस्त हो गयी । एक रहस्यमय जीवन धीरे धीरे उसके बास्त एक खेल हो गया । और फिर उसमे एक विवृति उत्पन्न हा गयी जिसस उसकी जीवन की मायता बन गयी कि जीवन एक खेल है जिसका

सबसे मुरर हृदय का खेल, नही भागविलाम का खेल है और धुनकर खेलना ही हमारा कर्तव्य है। यही उमक प्रेक्षण्य का मजाकर रखन की विवृति का रूप्य है।

‘बाहर भीतर कहानी भी नारा-मन की एक दूसरी विवृति का आर मकत करती है। जिन न्त्रिया का वैवाहिक जीवन मुची नहा रह सका व विवाह की विरामी बन बैग और पुण्या म घृणा करन लगा। वस्तुतः उनक बाहर का यह व्यक्तित्व उनक भीतर क अमताप और कुण्या का ही परिणाम है। मुची र्मपति क प्रति ईष्या भी उनकी इस कुण्या की ही अभिव्यक्ति है।

‘पराजय अथवा मृत्यु की नारा मन की कुण्या भा बने विवित्र है। यह कुण्या कहानी की नायिका भुवनेश्वरा दवा की भाव धारणा की उपज है। उसका यह विश्वास है कि विश्व कपट धूलता और स्वाय क मिश्रित सप्रह का दूसरा नाम है। मैन दया है कि जिस ममार ‘याग बलिदान तथा भावना कहता है वह नियता का छातक है और नियता गुलामी है। पुण्य स्त्रा का गुनाम नहा बनाए है स्त्री स्वय अपनी इस मदभावना क कारण गुलाम बनी है। यदि गुलामी नहीं करनी है तो शक्तिशाली बनना आवश्यक है और शक्तिशाली बनने के लिए स्वाय, बबरता तथा ज्ञान करव की आवश्यकता है। इन प्रकार यह मिष्या विश्वास भुवनेश्वरी देवी का पुण्य जाति का शत्रु बना देता है। किन्तु उसका यह कठोर व्यक्तित्व, पुण्य की गुलामा न करने का सक्न्व एक न्नि दूट जाता है और उसे झुका कर ही छाडता है। उमका आमविश्वास ढिग जाता है। किन्तु वह पराजय की आगा मृत्यु का स्वीकार करनी है। जिन गुलामा का वह विराय करती रही उसी गुलामी को अपनाता वह स्विकार नहा करती। किन्तु मरण-काल का उमका यह प्रमाड कि ‘हाकर माग्ब। मुझे बचाइय। मर रमरा का बुना दीत्रिण—मैं नहा मरना चाहती—नर्ग मरना चाहती म स्पष्ट है कि अन्त म उमकी पराजय ही हाकर रन्ती है। मृत्यु पाकर भी वह पराजित हूइ।

इन कहानियों म यह स्पष्ट हा जाता है कि यमात्री म मानव मन की विवृ-
तिया और कुण्या की समपन एक उनक विश्रयण की पयात्र समता है। किन्तु उहाने निताम मनाविश्रयणमक कानिया नहा लिया। कन्वित् इसका कारण यह है। क बर्मात्रा कथा-माहिय का मनारजन का साधन मानत हूँ शक्य विवेचना का विषय नहा। इमीलिए उन्हें शान और मनोविज्ञान म विरोध र्चिब नहा रही। यदि रावन कहानी क आवरण म दशन और मनाविज्ञान स्वय आ

गये तो उतसे बचने की चेष्टा भी उही नहीं की, उसे रवि के गाय गहराई से समझने और अभिव्यक्त करने की प्रवृत्ति मिनायी है। अतः ऐम विज्ञापण ने उनकी कहानियाँ क कथा-तत्त्व एवं उगकी रोचकता का अपहरण कभी नहा दिया है।

मानव जीवन के ऊँचे उद्देश्य उनका नए अतिमानवता की लहर भी वमाजी ने अनेक कहानियाँ लिखी हैं। उनकी काना का वस्तु विषय चा० कमा रहा हा, उमकी पृष्ठभूमि म बाहू राइ भा मयाय अवन रहा हा, म्नु उन मजका मूल स्वर जा कवल ध्वन्यामक है नय नातर मूया का रहा है। उल्ल खित समस्त कहानियाँ म यी विशपना है। म्नु वमाजी ने कतिपय कानियाँ ऐमी भी लिखी हैं जिनम प्रत्यक्ष रूप म नय ननिम मूय की स्थापना नये जीवन दरान क प्रति आप्रहू है। एक विविध चक्कर परिचयान यात्री 'ने पहनु दो रात कहानियाँ हमारे मामने नये जीवन मूय रपनी हैं। परिचयहीन यात्री का यह वक्तव्य कि सौम्य का छिपाना मनुष्यता क प्रति एक धार अपराध है दणनीय है और कुम्पता का प्र शित करना उतना हो बडा अपराध है जितना सौम्य को छिपाना — हम आश्चयचकित कर देना है। फिर एक कुरूप स्त्री स विवाह करना विवाह करना मात्र नही उमम प्रेम भी करना हम नवीन विचार देता है। अभाव की पूर्ति का नाम ही प्रेम है के अनुसार यदि कुरूपता आत्मा का दूषित नहा करती और वह अभाव की पूर्ति करती है ता वह कुरूपता नही है।

दो पहनु कहानी म यन्ति क उच्चाश का अवन है। दृष्टात द्वारा लेखक ने दो भिन्न भिन्न स्तर क भिन्न भिन्न प्रवृत्ति के व्यक्तियों को लेकर जीवन क दो पहनु उदघाटित किये हैं। एक का जीवन दूसरों मे व्याप्त है दूसरे का कवल अपने तक सीमित है। एक अपने जीवन के स्वय को आत्म बलिदान की भट चला देता है दूसरा अपने जीवन क नरक तक को अपने लिए सुर शित रखता है। एक जार जीवन का इतना ऊँचा आदर्श है और दूसरी ओर है निवृष्ट जीवन जा वितृष्णा उत्पन्न करता है।

इन गम्भीर समस्याओं क बीच भी वमाजी की विनायी प्रवृत्ति छिप नहीं पायी है। समस्या ने उनका कहानियाँ क विचार पा का बाधिल नहीं बना दिया है। रोचक कहानी क माध्यम से समस्याएं आप ही आप सामने आ गयी हैं। बीच बीच में हास्य और विनो के मिश्रण ने उनकी कहानियाँ को ओर भी अधिक रोचक तथा मनोरजक बना दिया है। कई कहानियाँ तो वमाजी ने

नितान्त हान्य और विना की सृष्टि के लिए निवृत्त हैं। 'विकारिया श्रेष्ठ' मुक्तों ने सम्पन्न वरदा ग प्रायश्चित्त रित में त्रिजगत का नया तरका अनशन साक्षात्कृतमानान दा धकि आचार छे जान का टिकट वर ग कर्त्तव्यताम्य द्वारा मनारजन टपन करन में अचल सख्य दूर है। विकारिया श्रेष्ठ में ता जानम्बन का एक चन्त छान हृष हा हान्य ज्यन करन का नाघन बना है। मुक्तों ने सम्पन्न वरदा ग न एक एतिहसिक सय तव का न्या का न्या बनाया है। त्रिजगत का नया तरका अनशन साक्षात्कृतमानान ता मयस अर्थक साम्यता रचनाए हैं। इनक आनम्बन और हृष शाना हान्यामक है। त्रिजगत का नया तरका क शुशाल्यताम क त्रिजगत क चूतवपू साम्यामक नय-नय तरीक पाठना क हान्य का अद्भुत सृष्टि धन है। इसी तरह शाना त्रिकमानान क ह्य हान्यामक है। सब माग चरित्रों का नामकरण उक्त हान्यामक है। अनशन क चरित्र हा नया परिस्थिति तक में हान्य है। इन कर्त्तव्यों क चरित्र स्थिति और परि स्थिति मना म हान्य-हा-शाम्य है। आचार छे जान का टिकट वरदा भा हन्क हान्य की सृष्टि करत हैं। प्रायश्चित्त काना त्रिसका हान्य घटना म है समाहृष्टिया स अन्त्य है। जयुक्त मनी कहानियों का हान्य हान्यामक चरित्रों की सृष्टि है घटना का नये। किन्तु प्रायश्चित्त क चरित्र हान्यामक नहा है। घनाकरा एक मया परिस्थिति उन्म हा जाता है जा अचल हान्या गानक है। इन कहानी का एक विशेषता और है वह मह कि इसका आरम्भ हान्य म हुआ है मध्य एक अचल गम्भार परिस्थिति स बापिन है, किन्तु अग्रपाशित अन्त क कारण सट गम्भार परिस्थिति हा मार हान्य का कारण बन जाता है।

बमारा का शाना और अनिन्विक्रि दाना म हान्य है इसलिये व इस क्षण म अमृतपूव मकल दूर है। प्रायश्चित्त का एक म्बन उद्भूत करन माय है

अगर कबरा बिन्ना पर नर म शिमा स प्रम करता था ता रामू का बू स ओर रामू की बू पर नर म शिमा न घृणा करता था, ता कबरा बिन्ना - ।

चरित्र (रामू का बू) टहरा थोह व का बाजिवा कमा मन्गार दर शुना है ता कमा मन्गार पर में कै-वै-मा गया। कबरा शिमा की सोता शिमा थो-दू-प पर आ व तु ग २। रामू का बू का जान गन्त में और कबरा बिन्नी क एरं पर। रामू की बू हीटा में या रखत रग-ऊप गयी आर बका हुआ थो कबरा क पर म।

रामू की बू न तय कर लिया कि या तो वही पर में रहगी वा फिर कबरा बिन्नी

ही। मोरचाप दी हो गयी और मोना सगर्भ। दिल्ली पगाने का कृपरा आया उसमें दूध मलाई पूर जीर दिल्ली को स्पष्टिष्ट सगने या विविध प्रकार के व्यजन रस गये लेकिन विल्ली ने उधर निगाह तक न डानी। इधर कपरी ने सरगर्भी लिखलायी। अभी तक तो वह रामू की बटू में डरती थी पर अब बटू साथ लग गयी लेकिन तने पागन पर ति रामू की बटू उग पर हाथ न मगा सके। विल्ली की हरकता का इतना मनोरंजक चित्रण और कहीं मिनगा।

पमाजी का व्यंग्य निरर्थक तथा निरर्थक नहीं है। वह मायक जीर विचारोत्तजक है। कहा या व्यंग्य हास्य है ता कहा प्रत्यक्ष कहा हत्या है ता कही तीखा। प्रायश्चित्त में उन पडिता पर व्यंग्य है जा सागा स प्रायश्चित्त कराने के बहाने उह टूटते हैं। तिजारत का नया तरीका में माम्पवा लेखक के व्यंग्य का नम्य है। नाला तिक्कडमलान में बने हुए कवि मूल प्रशमक और धून-बपटो व्यक्तिया पर व्यंग्य है। बतग ममू की मनोवृत्ति पर हास्य व्यंग्य करता है। दो बाँके में हास्य व्यंग्य जना एक टगर में मूय लिय गये हैं। दोना बाँके समथोता करके एर दूसरे के साथ मिलकर चलने लगते हैं। इस पार वाला बाँका अपने शागिदों से घिरा हुआ चल रहा था। शागिद कह रथ—उस्ता उम बवन बडो समक्षारी स काम लिया करना जाज लाश गिर जाती। उस्ता हम सय के सब अरनी अपनी जान दे देत। लेकिन उस्ता गजय ने कश है।

इतने में किमी ने बाँके से कहा—मुना स्वाग छूय भरयो। बाँके ने देखा कि एक लम्बा और तगडा देहाती जिसके हाथ में एक भारी सा लटठ है सामन लडा हुआ मुमकरा रहा है।

उस बवन बाँके खून का घूट पीकर रह गये। उहोंने मोना—एक बाँका दूसरे बाँके से लक सकता है देहातिया से उलझना उसे शाभा नहीं देता।

और शागिद भी खून का घूट पीकर रह गये। उहोंने सोचा—भला उस्ता की मौजूदगी में उह हाथ उठाने का कोई हक भी है।

एक हूट पुष्ट देहाती के मुला स्वांग खूब भरयो में कहानी का सम्पूर्ण हास्य व्यंग्य सिमट आया है। एक देहाती को लाकर लेखक ने शहरी जीवन के खावचरण की जोर भी सकेत किया है। मानव मन की झूठी शान और कमजोरिया को कितने साधारण और स्वाभाविक ढंग से चित्रित किया है यह कहने की आवश्यकता नहीं है। इस कहानी में वर्माजी को लखनऊ का स्थानीय रंग भरने का भी अवसर मिल गया है। लखनऊ के जीवन का स्वाभाविक चित्र आने के साथ लेखक ने अवध की हासकालीन अवशिष्ट सृष्टि का भी

परिहासपूर्ण एवम् व्यंग्यपूर्ण चित्रण किया है। 'शाँपि' हो कोई ऐसा अभाग्य हो जिम्हने लखनऊ का नाम न सुना हो और युक्तप्रात म ही नहीं गल्कि मारे हिन्दुस्तान म और मैं तो यहाँ तक कहने को तैयार हूँ कि सारी दुनिया म लखनऊ की शोरहूत है। लखनऊ के सफेक आम लखनऊ के खरबूज लखनऊ की खदियाँ ये सब चीजें हैं। उह लखनऊसे लौन्त समय लोग मौगात की तौर पर माप ल जाया करत हैं तैकिन कुछ एसी भी चीज हैं जो साय नहा ले जायी जा सकता और उनम लखनऊ की जिन्तिली और लखनऊ की नफासत विशेष रूप से आती है।

इन स्थानीय विशेषताओं व वणन के बाँ लखनू हास्य व्यंग्य पर उतर आता है — हाँ तो लखनऊ शहर म रूम हैं। ठवायऊँ हैं और इन का क माय शाहूदे भी हैं। बकौन लखनऊ वाला के य शाँपि तेम-वेमे नहीं हैं। य लखनऊ की नाव है। लखनऊ की मारी यहाँदुरी के ये ठेकेदार हैं और य जान व मने तथा जान दे देने पर आमन्त रहते हैं। अगर लखनऊ से य शाँपि हटा लिय जायें तो लागी का यह कहना अजी लखनऊ तो जनाना का शहर है मानहू आने सच्चा उतर जाय।

राचकता वमा जी का कहानिया का सबसे बड़ा आकर्षण है। उनका प्रायमिड ध्येय अपनी कहानिया म पाठकों का मनोरजन करना है। किन्तु उन्होंने घटना-वैचित्र्य द्वारा चमत्कार उत्पन्न कर राचकता उत्पन्न नहीं की है। उनकी कहानियों का भावनात्मक संवेदना वाला तत्त्व हा पाठकों का आकर्षित करता है उनके मन को छूता है। उनकी कहानियाँ पाठकों के मन पर स्थायी प्रभाव डालती हैं। घटना प्रधान कहानियाँ ता उन्होंने बहुत कम लिखी हैं और जा एक दो लिखा भी हैं उनमें घटना-वैचित्र्य न हाकर घटना की राचकता द्वारा पाठकों में भावनात्मक संवेदना उत्पन्न की गयी है। प्रायश्चित्त कहानी का सम्पूर्ण आकर्षण घटना की इसी राचकता म है। इस कहानी से महज ही अन्तः समाया जा सकता है कि यमा जी घटना प्रधान कहानियों म भी अमूर्त पूय मर्यादा प्राप्त कर सकन थे। उनम घटनाओं को मनोरंजन ढङ्ग मे प्रस्तुत करने की अद्भुत क्षमता है। फिर भी उनकी अधिकांश कहानियाँ रेखाचित्र व समीप लगती हैं। वरना हम भी आन्मी य काम व विशुद्ध रेखाचित्र है। हमम पन्ना ओर कथा नाम-मात्र को है। मियाँ राउत की दुनिया बही राचक है इसी व कारण यह कान्नी रेखाचित्र के समान मानी जा सकती है— यन्तः आर आन्मीय माल्य व एक तमे आन्मी को घरे बरत व बरामते म ल्यों जा सम्झा गा और बिगी हूँ तक माटा-मा कहा जा सक त्रिमका पेहरा माल

भरा हुआ और उस पर चेचक के दाग मूछ नगार, लेकिन गाड़ी ताँ तक पहुँचती हुई सिर पर पटे और बाल बीच से गिरा हुआ आँवें बड़ी-बड़ा ऊपर उभरी हुई और उनमें गुरमा नगा हुआ चित्र का कुर्ता जोर संकल्प का गरदनार पाजामा पन्न हुए ही, तो आग समझ स कि यही मियाँ राहत के बह आपस झुंकर सलाम करणें अन्ध व साय आरना नाम पूछेंगे। आरना कुर्ती पर ठिठानकर मुने आपसी इतिला देंगे और फिर धोर स वही ग गिमन जायंगे। आप उनका मेरा नीरर किसो हालत में नहा समझ सरत ओर मैं उनसे मानिक का उरठाव करता भी नहा हूँ। मैं उनकी सजत करता हूँ। बुजुग की तरह उह मानता हूँ।

अप्य हास्य प्रधान कहानियाँ भी रेखाचित्र के अधिक निकट हैं। किन्तु अन्ध कथा और घटना का भी सहयोग है। इसीलिए इह हम विशुद्ध रेखाचित्र न। कह सकते। वर्मा जी की कहानियाँ में एक कलात्मक कमी है जिसके कारण उह रेखाचित्र समझने का भ्रम हा जाया है। वह यह है कि उनकी कहानियों में समस्त अगा का समुचित विकास और निवाह नहा हो पाया है। एक विचित्र चकरार विकारिया क्रान्त मुगला ने सस्तनत बरसा दी दा पहलू कहानियाँ मता कहानो क अगा का समुचित विकास जरा भी नहा हुआ है। फलत इत कहानियों की कथा की गति धीमी है। बहुत कम कहानियाँ ऐसी हैं जिनका आरम्भ घटना से हुआ है। और इस अभाव में प्रारम्भ में गति को मथरता स्वाभाविक है। वर्मा जी में कहानो के प्रारम्भ में भूमिका बांधने की प्रवृत्ति है। प्राय सभी कहानियाँ एक यावहारिक दार्शनिक टिप्पणी में आरम्भ हुई हैं और उससे विषय की ओर सकेत हुआ है। उत्तरदायित्व कहानो का आरम्भ इस प्रकार हुआ है मैंने एक काम किया—अच्छा या बुरा इममें कोई प्रयाजन नहा। अब प्रश्न यह उठता है कि मैंने वह काम क्या किया? अपने कर्म का उत्तरदायी मैं हूँ सब लोग यह कहेंगे और साधारण तक से उनका यह कहना गलत भी नही है। पर ऐसी परिस्थितियाँ आ सकती हैं जब कि यन् काम करने के लिए मैं प्रेरित या विवश किया जाता हूँ। ऐसी अवस्था में मरे उस काम का उत्तरदायित्व मुझ पर है और कुछ कहेंगे कि उत्तरदायित्व प्रगति या विवश करने वाल पर। एक ओर भी मत है और यद्यपि उस मत के मानने वालों की मरणा धीरे धीरे कम होती जाती है वह मत ऐसा नहा है जो हमी में उपाय जा सक। उस मत के हिमाज में मेरे किसी भी काम का उत्तरदायित्व न मुझ पर है जोर न किसी दूसरे व्यक्ति पर है मरे प्रत्येक साधारण अथवा असाधारण कर्म का उत्तरदायित्व उस पर है जिस पर कर्म

करने वालों को रचने का उत्तरदायित्व है। इस मत वाल का अंग्रेजा म 'फैलिस्ट कहते हैं और हिन्दी में 'भाग्यवादी कहते हैं। यहाँ पर यह कह दना अनुचित न हागा कि यदि मैं भाग्यवादी बन मवू तो जगदीश की आत्म दृया स मरे हृदय में जा भय हुआ है वह शान्त हो जाय।

इस प्रकार कहानी व विषय का लखक वाद्विवात् का विषय बना लता है और विवचना करने में एसा मग्न हा जाता है माना वह निरग्र लिख रहा हा और अपने तक का सवमान्य बनाने क लिए किसी कहानी का दृष्टान्त दे र्ना हा।

विक्टोरिया त्राम एक विचित्र चक्कर मज की तस्वीर कास कि मैं कह सकता, नाजिर मुशो पराजय जयवा मृत्यु कहानियाँ भी इसा प्रकार की दाशनिज टिप्पणिया स आरम्भ हुई हैं। इन टिप्पणिया का दखकर कई बार सा एसा लगता है जस लखक तक करने पर तुन गया हा। पान कुटपता है और अपना सौम्य है। अगर आप इस बात का बिना किसी तक क मान न्त हैं—और मैं आपका विश्वास गिनाता हू कि तक करके आप मुझसे पात्रग न्ना—ता मैं आपसे कह सकता हूँ कि लडकपन जीवन का सौम्य है। य टिप्पणी माद्देश्य और राचक अवश्य है किन्तु कई बार एसा भी हुआ है नि इस कहानियों क अन्त का आभास हा जाता है और पाठका की उमुक्तता आरम्भ म हा ममाप्त हो जाती है। इसन अतिरिक्त कुछ कहानिया की टिप्प णियाँ निरपेक सी ना लगती हैं। विक्टोरिया त्राम की डेढ पृष्ठ की टिप्पणा मवया निरपेक और उद्देश्यहीन है। एसा प्रतीत होता है लखक को साधारण स साधारण बात तक को दाशानिक आवरण देने की आत्त मी हा गयी है।

कतिपय कहानियाँ ऐसी भी हैं जिनमें यदि लखक न इस प्रकार का शारा निक टिप्पणी शारा भूमिका नहा बाँधी है ता अन्य प्रकार म भूमिका बाँधने का प्रयास किया है। माना उन विषय की भूमिका बाँधने का रोग हा। किन्तु उमकी अपनी इस आत्त क कारण कई कहानियों में बडी शिथिलता मा आ गयी है। एक अनुभव कर्तनी का प्रारम्भिक अश जा लगभग टार् पृष्ठा का है इस निरपेक भूमिका बाँधने म ही निरन्त गया है। यह अश किमो नी नीति मूल कहानी म मन्वधित नहीं है। कहानी कहने-मुनने का बातावरण उत्पन्न करने क लिए लताफ आवा और वाचक का रेम्डा म एकत्र करता है। इसन अधिक श्य अश की कोर् उपायोगिता नहा है। किन्तु यह त्रुटि कवन एक दो ही कहा निया के साथ हुई है। कुछ कहानियों की ऐसी भूमिकायें बडी मापक और राचक हैं। प्रेरणाग कहानी का आरम्भ एक बातावना स हुआ है और क

कहानी आरम्भ करने की एक भूमिका ही है। हम मीर्गा का ध्यान अपनी मोने की अगूठी की आर जिस पर मोने का काम में श्याम लिंगा का आर्पित करत हुए दवेन्द्र ने कहा—'मेरे मित्र श्यामनाथ ने यह अगूठी मुझे प्रेजेन् की। जिस समय उमने यह अगूठी प्रेजेन् की थी उमने कहा कि मैं इसे सत्ता पहने रह जिसस कि वह सत्ता मेरे ध्यान में रहे।

परमेश्वरी ने कुछ देर तक उम अगूठी की आर तथा इसके बाँव मुस्कराया—प्रेजेन् की बात उठी है तो मैं आप लोग का एक विचित्र मजदार और सच्ची कहानी सुना सता हू।

और फिर प्रेजेन् की मूल कथा आरम्भ हाती है।

इसी प्रकार एक विचित्र चक्कर है का आरम्भ भी बड़ा सामिप्राय और रोचक है। जो सत्य इसके नायक ने पहने कहा उसी को एक लघु वाच्य में, जत में कह कर सारी कहानी का रहस्य प्रकट कर देता है। घटना प्रधान कथानियो का आरम्भ वर्माजी ने घटना से न कर एक प्रकार की परिचयात्मक भूमिका से किया है। यह परिचय अत्यन्त रोचक है। दो बाँव कहानिया का आरम्भ अत्यन्त मनोरंजक भूमिका से हुआ है।

वर्माजी की जिन कहानिया का आरम्भ नाटकीय सवालों से हुआ है वे बनी मनोरम और आकर्षक बन गयी है। कायरता नामक कहानी का आरम्भ ऐसे नाटकीय वार्तालाप से ही हुआ है अगर मैं आप से कह दू कि आप कायर हैं तो आप बुरा मान जाइयेगा कि नहा? कोने में बैठे हुए बच्चे ने कुछ कह कर कहा। पर मैं अपने इस साठ वर्ष के अनुभव से इस नतीजे पर पहुँचा हू कि हम सब कायर हैं और कायर होना इतना बड़ा दुर्गण भी नहा है जितना आप समझते हैं।

कहानी के आरम्भ के प्रति वर्माजी पूणतया सतक रहे हैं। कहानी के आरम्भ में ही वे कहानी की मूल कथा उसकी मूल संवेदना और उद्देश्य से परिचित करा के पाठका को जागे क्या हुआ के लिए उत्सुक बना देने हैं। उनकी कहानियो का मध्य भाग धरम भीमा वारा है। फलत आरम्भ के बाद कहानी का विकास बड़े तीव्र वेग से होने लगता है। वर्माजी ने घटना प्रधान कहानियाँ कम लिखी हैं किन्तु उन्होंने घटनाआ का उपयोग अपनी कहानी में किया अवश्य है। उनके कथानक निर्माण में संयोग और घटनाआ का विशेष साय रहता है। घटना द्वारा चरित्र में बाल्य और मानसिक दृढ़ उत्पन्न कर उन्होंने कहानी के विकास में तीव्रता ला दी है। इसमें एक लाभ यह भी है कि

कहानियों का कथारूप कही दूटने नहीं पाया है। 'रास और चिनगारी घटना प्रथम कहानी नहीं है, फिर भी इसमें घटनाया का समुचित उपयोग हुआ है। यही नहीं, इस इतिवृत्तामक कहानी में हम वमा जी का कथा बांधने का शिल्प भी दृष्टिगत हुआ है। इसकी नायिका गीता का मानसिक-सघष कहानी का गति प्रदान करता है। गीता का मानसिक द्वन्द्व घटनाओं द्वारा प्रखर हुआ है। अपने भाई रमेश की मृत्यु के बाद गीता का एकमात्र ध्येय अपने परिवार का भरण-पोषण करना ही जाता है। समाज से विरक्त रहकर या अपने जीवन के प्रति अनामक रहकर, वह अपना जीवन पतीत करती है किन्तु उमक अन्तर एक जलन सदैव बनी रहती है—'मैं कहती हूँ मरे पास यौन है, मरे पास उमक है। हमने खेलने की इच्छा मुझ हावी है। नाच रग, आमाद प्रमोद मुझे भी प्यारे लगते हैं। मुझम भी यह अभिनाया है कि मैं सुन्दर दिखूँ नवयुवक मेरी आर आकर्षित हो वे मेरे मीन्य की उपासना करें। दुनिया की चहल पहल अपने को देने की प्रबल अभिनाया का कितन प्रयत्न के साथ दबाना पड़ता है यह मैं ही जानती हूँ। और अपने अन्तर चननवान अनवरत सघष के कारण मैं अजीब-सी लिखने लग गयी हूँ। कुछ साग मुझे गविता कहत हैं कुछ नाग मुझे अमम्य ममसत हैं और कुछ सागा न मुझे पत्थर की उममा द शारी है। नकिन रमेश मैं आज माफ-माफ अपना रूप रग रही हूँ। मैं राग से ढँकी हुई एक चिनगारी की भाँति हूँ जो अन्तर ही अन्तर गुनगुनकर रास बनती जा रही है।

मरे अन्तर जलन है उमक है जीवन है। सब कुछ है नकिन देकार! समाज के आर्थिक ढाँच ने राग बन कर हर तरफ से मुझे ढक लिया है और उमन पर समस्त अस्तित्व का अपने अभिराग से आच्छादित कर रग्या है। पर दुभाग्य यह है कि मैं पूरी तरह से भी वो राग नहीं बन पाती अन्तर वाला चिनगारी जलती रहती है—निरन्तर। और वही अन्तर वाली चिनगारी कुछ अधिक् प्रम्वलित हो गयी थी उमन्ति त्रिम दिन साहित्य-ममाज म तुमम मगो प्रथम बार भट हुई थी।

पाठका पर अधिक् से अधिक् श्यायी प्रभाव चलने के लिए वमा जी बर गचेत रहते हैं। इसलिए यन्ि कदानी का प्रमित विशाम नहीं हो पाता, ता के इग बाध की बिना नहीं करत। उन्हे ता पाठका म अधिक् से अधिक् भावनामक गवेन्ना उन्मन्न करती की बिना लगी रहता है। कवठ चरिना का मानसिक संघष उभासने के लिए वे घटनाया को आगे-वापे करत रहत हैं। राग और चिनगारी की गीता के उजबड मानसिक संघषों के बल सगक उत घटना का

साता है जिम्मे पत्रस्वरूप उसकी भेंट नायक से हुई और उमर अन्तर कन्ध ने प्रचल रूप धारण किया। फिर कहानी की चरम-सीमा आ जाती है जब गीता रमश से विवाह करने का मकल्य कर लेती है ऊपर म म प्रसन्न थी पर अन्दर ही अन्दर एक भयानक द्रम मचा हुआ था मुझमें। कुरूप और कठार वाम्बिकता मेरे इन सुख सपना का लगानार शरझोर रती था लकिन मैं जवरन्स्ती आँस मूँदे हुए सपना की दुनिया म विचरण करने का प्रयत्न कर रही थी। मित्रो का तीता यथा था विवाह की तिथि निश्चित हा गयी थी— कल ही तो है वह तिथि। मैंने आफिम से एक महीन की छुट्टी ल ली थी, थोना-बहुत मैंने कुछ संचित किया था उमर गहने और कपड बनवा लिए थे। लकिन मैं अपनी को अपनी भाभी की अपने भतीजे का अपनी भतीजी का अपने जीवन के सबसे बनी परिवर्तन की सूचना तक नहा ले।

रमश—मैंने उ ह सूचना नहीं दी इसलिए कि उह सूचना दन की मुझम हिम्मत नहीं होगी थी।

इसके बाद कहानी मे चरम सीमा आ जाती है। उस घटना द्वारा जब गीता के 'अपने उसके विवाह की खबर सुनकर स्वय आ जाते हैं और विवाह की तैयारियाँ खुशी खुशी करने लगते हैं। यहाँ गीता का आन्तरिक सघष फिर भडक उठता है। एक अकेली मैं रो रही हू बुरी तरह रो रही हू। इन लोग का निराश्रय भटकता हुआ छोडकर चने जाने के परिणाम पर सोचती हू और काँप उठती हू। मैं जागिर क्या कर रही हू? मैं धुंगज हू मैं झूठी हू मैं विश्वासघातिनी हू मैं पापिन हू—

नहीं—नहीं—नहीं। मैं अपने से नूगी। मैं अपने ऊपर विजय पाऊगी। मैं पुनर्जी के ऊपर उठूगी। मैं उस विश्वास की रक्षा करूगी जो दूसरे ने मेरे ऊपर सीपा है। उमके इन अन्त द्वारा कहानी म अप्रत्याशित माड आता है और कहानी का अन्त हो जाता है। चिनगारी जल रही है और राख वपनी जा रही है। और इस समय तो मैं अपने अदर वाली चिनगारी की जलन को भी नहीं अनुभव कर पा रही हू। मुझे ऐसा लग रहा है कि मैं राख हू—राख हू राख हू। यह अंत पात्रों के मन पर जमित प्रभाव छो जाना है। भावना पर कर्तव्य विजयी होता है।

ऐसा प्रभाव उत्पन्न करने के लिए यदि वर्मा जी कहानी का प्रतिक विकास नहा करत तो उसमे उनकी कहानी-कला की कोई त्रुटि नहीं है बरन् इससे उनकी कहानिया मे एक अनोखा आकर्षण और सौम्य उत्पन्न हो गया है।

'पराजय या मृत्यु' कहानी का विकास भी इसी भाँति हुआ है। घटना प्रधान कहानियाँ 'विजारात का नया तरीका', 'लाना निकडमी लान दो रात प्रायश्चित्त कहानी' सबसे सुन्दर बन पड़ी हैं। इसमें पाठकों में कुतूहल बनाये रखने में कमा जी अमूर्तपूर्व सफल हुए हैं। कहानी की पृष्ठभूमि जिज्ञासापूर्ण है। रामू की बहू द्वारा बिल्ली को मारे जाने की घटना से कहानी में तीव्रता आ जाती है। महरी मिमरानी मास बढाना-पढानी सब घटना स्पष्ट पर एकर हो जाते हैं तथा रामू की बहू सर झुकाये बैठी रहती है। पंडित राम सुख की बन आती है और वे प्रायश्चित्त कराने के बढाने मनमानी सामग्री की निस्त बनाकर रख देते हैं कि रामू की माँ मरने में आ जाती है। किन्तु बहू को कुम्भी पात्र के नरक में बचाने के लिए एक ठोरी माँस लेते हुए रामू की माँ कहती है अब तो जानाच नचाआगे नाचना हा पडेगा। और जब पंडित जी यह कह कर उठने लगते हैं कि 'अच्छा तो प्रायश्चित्त का प्रबंध कराओ रामू की माँ ग्यारह तोना सोना निकालने में उनकी बिल्ली बनवा लाऊ। दो घंटे में बनवा कर लौटूंगा। तब तक पूजा का सब प्रबंध कर रवो। और देखो पूजा के लिए— तमी अप्रत्याशित घटना हो जाती है—पंडित जी की बात खरम भी नहीं हुई थी कि महरी हाँफती हुई कमरे में घुम आयी और सब लोग चौंक उठे। रामू की माँ ने धररा कर कहा—अरी क्या हुआ री।

महरी ने लडखडाते स्वर में कहा—माँ जी बिन्नी तो उत्तर भाग गयी।—जसी अप्रत्याशित घटना के कारण जब पाठक हसते हसते लोट पोट हो जाते हैं तो उस घटना के सफलता का तो न जाने क्या हाल हुआ होगा। जहाँ 'राज तथा चिनगारी तथा पराजय' अपवा मृत्यु का अन्त भावनाओं के आगे इन विनोदों का चरम भीमा में हुआ है वहाँ इसका घटना का चरमभीमा द्वारा। कर्माजा की कहानियाँ के अन्त बाहे घटना में हा या बाह्य आर आंत रिक सघष में पर वे बड़े समन्वयपूर्ण एवं भावनात्मक हैं। यह अन्त कहा तो वातावरण के अगूरे वाक्या द्वारा हुए हैं तथा स्वयं पात्रों के आत्मकथन द्वारा। बरारी का अभिशाप बाप एक पग और कुंवर गाह्य मर गये बाहर भीतर उत्तराधिकार आदि कहानियाँ का अन्त बाह्यनाद के पूर-अपूर वाक्या द्वारा हुआ है किमंत पात्रों के मानसिक-सघष का एक अजीब झलकी पाठकों पर कभी न मिटने वाला प्रभाव छोड़ जाती है। 'दश अपिहार कहानियाँ के अन्त कहानी के मुख्य पात्र के आत्मकथन से हुए हैं किन्तु उनका हृत्पान्थन झलकता है। 'मेक की तस्वीर' काश कि मैं कह सरता, पराजय अपवा मृत्यु 'रात और चिनगारा' मेक की तस्वीर' काश तुम्हें था गया का

अन्त आत्मवचन द्वारा हुआ है और व आत्मरूपन पात्रों का हृदय उ लन प्रक
 करते हैं । इस प्रकार सख्त ने कहानी का अन्त के सम्बन्ध में स्वयं बहुत कम कहा
 है । कतिपय कहानियाँ ही ऐसी हैं जिनमें सख्त को अपनी ओर से कहानी का
 अन्तिम निष्कर्ष देने की आवश्यकता पड़ी है । परन्तु इन कहानियाँ में भी सख्त
 अलग नहीं है वह या तो कहानी का एक पात्र है या उसका वाचक । प्रेजप्टम
 का परमेश्वरी इस कहानी का वाचक ही नहा महत्वपूर्ण पात्र है, जो कहाना
 का अन्त यह कह कर करता है— तुमने जो कुछ कहा उसमें मैं सब बातें ठीक
 नहीं मानती । पर इतना अवश्य मानती हूँ कि मैंने अपने बुद्धि के लिए कोई इत
 जाम नहीं किया । इसलिए मैं तुम्हारे हाथ यह सब बच दूगी । कान्ट्रक साइन
 कर दो ।—और मैंने काटवट साइन कर दिया । अभी दा बप हुए ही है ।
 परसा ही उसका पत्र आया है जिसमें उसने लिखा है कि इस समय तक उमर
 पास एक सी तेरह चीज हो गयी हैं ।

तिजारत का नया तरीका, छ आने का टिकट तथा एक अनुभव का
 अन्त भी उसके कथावाचका जो उमके पात्र भी हैं के निष्कर्षों से हुआ है ।
 कतिपय कहानियाँ के अन्त का सवेत सद्यो में स्वयं लेखक ने किया है । जैसे
 आशन लाला तिकडमीलान बतगड जीर खिलावन का नरक । लेखक
 के अन्तिम विवरण ने कहानी के बिखरे सूत्रों को एक सूत्र में मिलाते का अच्छा
 काम किया है । दो पहलू कहानी में दो दृष्टान्त हैं और दोनों अलग अलग ।
 एक कहानी दूसरे से कोई सम्बन्ध नहीं रखती पर दोनों के अन्त में लेखक क य
 वाक्य कि और मैं पूछ रहा हूँ—कल्पना के किस स्वर्ग को पाने के लिए वह
 नवयुवक अपने जीवन के स्वर्ग को ठुकरा कर चला गया ? — और मैं पूछ रहा
 हूँ—कल्पना क किस नरक से बचने के लिए वह बुडगा जीर कोनी भिखारी
 अपने जीवन क नरक से बुरी तरह बिपका हुआ था ? — सम्पूर्ण कहानी को
 एक सूत्र में बाध दन है । यदि लेखक अन्त में यह वक्तव्य न देना तो दोनों क्हा
 नियाँ अलग-अलग भावनात्मक सवेतना जगा कर रह जाती ।

अतएव बर्माजी की कहानियाँ के अन्त जिस रूप में भी वे हो आसपक
 और प्रभावात्पाक हैं । वे घटनाओं के परिणाम या पात्रों की अन्तिम अवस्था की
 ओर मकत करते हैं । अधिकांश कहानियाँ दुघात हैं और मानव मन की निस्त
 नायपूर्ण अवस्था उमकी लाचारी उमकी विपशना और उमकी छपटाट्ट तथा
 कमजारी में उनका अन्त हुआ है । व्यक्ति मन की उलझना का चित्रण करना
 बर्माजी की कहानियाँ का एकमात्र लक्ष्य है । उनकी दृष्टि में आज का प्रत्येक
 मनुष्य अमनाय और कमजोर है । वह अहशक्ति के अभाव में निरुपाय निबल

और अशक्त बन गया है। उसमें स्मृति और स्मरण नष्ट रहा। अपनी निवृत्तता का ध्यान के लिए वह भाग्य और भगवान का नाम लेता है। उसका इस त्यागपन और शून्य शान पर उन्हेनि मार्मिक चाट का है।

कुतूहल बर्माजी की कहानिया का प्राग है। कहानी के अन्त तक लक्षक पाठकों की जिनामा-वृत्ति को सजग रखने में समर्थ हुआ है। यह कुतूहल अप्रत्याशित घटना और चरित्र के अप्रत्याशित आचरण की सम्भावना के कारण बना रहा है। नवीन परिस्थिति में पहचान पात्र कसा आचरण करेगा या उसका आचरण को प्रतिक्रिया-स्वरूप कसा घटना घटित होगी इसका पहल से पाठक अनुमान नष्ट लगा पाता। इसलिए उन स्थिति के प्रति कुतूहल बना रहता है। यद्यपि सादृश्य कहानियाँ हान के कारण लक्षक के मन में घटनाओं एवम् पात्रों के आचरण का पूर्वनिश्चित चित्र बन जाता है, किन्तु वह पाठकों को इसका आभास नष्ट होने देता। 'दा रातों कहानी विषय की दृष्टि से साधारण होत हुए भी बड़ी प्रभावोत्पाक है। ट्रेन में एक रात का जिस युवती के साथ जीवन में अपने मुन्दरतम क्षण बिताये उसका यह कहकर बिना लना कि मैं आपसे बिना लती हूँ लेकिन आपसे एक प्रायना है। आप मरा पीछा न कीजिए मरा पता लगाने की कोशिश न कीजिए बस एक यही भीष में आपसे भोगती हू। हम उसमें प्रति जिनामा बना लता है। हम कहानी के एक अप्रत्याशित अन्त का आशा करने लगते हैं किन्तु वह अन्त क्या होगा, उसकी हम कल्पना भी नहीं कर पाते। कौन साच सकता है कि वह मुन्दर युवती क्या निरन्तरी। कौन सोच सकता है कि युवक और युवती के परस्पर विश्वास का नष्ट कर कहानी का अन्त होगा। इसी प्रकार का कुतूहल हम बर्माजी की प्रत्येक कहानी में मिलता है। प्रायश्चित्त कहानी में सबसे अधिक विषम तथा कुतूहल है।

एक विधान का दृष्टि में बर्माजी की अधिकांश कहानियाँ छोटी हैं। उद्देश्य युक्त हान के कारण उनमें निरपेक्ष विस्तार का अभाव है। शायद घटना अथवा पात्र के भाव के अनुसार रण गये हैं पात्र के नाम पर बहुत कम हैं। जिन कहानियों के शायद उमक मूल भाव या घटना के आधार पर रण गये हैं वे अभावतः सम्बन्ध हो गये हैं। किन्तु ये हैं आरपक और जिनामातृ। पात्रों की दृष्टि में बर्माजी की कहानियाँ का स्पष्ट विभाजन लता में नहीं की जा सकता है कि वे उनही कालों में कहानी विशुद्ध एक शानी में नष्ट निभा गयी हैं। आवश्यक्तानुसार स्पष्ट न स्पष्ट-स्पष्ट पर उम लाना का उदाहरण दिया है जिसमें कहानी अर्थात् अन्त में अन्त प्रभावोत्पन्न हो गये। किन्तु पात्र और

चिनगारी तथा 'बहु फिर नहा आई कानियाँ आम तथा मा शोनी म हैं ।
यद्यपि इनम घटनाआ तथा परिस्थिति का सम्बन्ध विवग भा यद्यत् है ।
बहु फिर नहा आई कानियो म ता एत कानियो क अन्तर म दूगरा कहानी
निकरनी आयो है । एत के बाट् दूगरा पात्र पहन पात्र का जनी आम-तया
सुनाने लगता है ।

सलाप शनी म भा एक-टा कहानियाँ हैं— रापरता यनगड आदि ।
किन्तु ये विशुद्ध सलाप शनी का नया कहो जा मरना क्यारि इनम लखक क
विश्लेषण की भी आवश्यकता पनी है । इना भावन परात्रय जववा मृत्यु भी
विशुद्ध पात्र शतो की कहानी नया कहो जा मरना क्यारि उमके आदि पात्र
अन्त म कहानी क सूत्र जोडने क निमित्त अय पुरुष का आना पडा है । विशुद्ध
अन्य-पुरष प्रधान शनी म केवल वही कहानियाँ हैं जो घटना प्रधान हैं । तो
पहलू दा रात अनशन लाना तिहडमीलान दा बाँक आमारे सिना
वन का नरक प्रायश्चित कहानियाँ अय-गुरुष प्रधान शनी का क । जा
सकती हैं । अवशिष्ट अय कहानिया म लेखक स्थिति का यथाय अकन कर
अलग हो गया है अयात् कहानी आरम्भ कर बहु उमका सूत्र कहानी क मुख्य
पात्र या उसके पात्र के सम्बन्ध म आने वान ब्यक्ति या घटनाआ क सम्बन्ध म
आने वान ब्यक्ति के हाथ म दे देता है । इस प्रकार एक आर ता स्थिति एवम्
चरित्र का यथाय अकन सम्भव हो सका है दूसरी ओर लेखक ने अनायास ही
स्वय तटस्थ रहने का सरल उपाय निकाल लिया है इमके फलस्वरुप कभी
कभी ऐसा भी हुआ है कि एक ही कहानी क कथावाचक क्रमश कइ ब्यक्ति बन
गय हैं । प्रेजेण्टम कहानी का आरम्भ उमकी नायिका शशिबाला क सम्बन्ध म
आने वान ब्यक्ति परमेश्वरी द्वारा हाता है और वह कहानी का सूत्र उम
स्थिति तक न जाता है जहाँ स शशिबाला अपने गत जीवन और तज्जनिन
विवृति का विश्लेषण करती है । उसके बाट् फिर कहानी का सूत्र परमेश्वरी के
हाथ म आ जाता है और उसी के कथन से कहानी का अन्त होता है । किन्तु
यहाँ एक वान उल्लेखनीय है । वह यह कि यह दूसरा कथावाचक अनायास
ही हमारे सामन नही आ जाता वरन् पहले कथावाचक के माध्यम से
आता है । यह पहला कथावाचक उसम अपनी कहानी सुनाने की कहता है ।
वकारी का अभिशाप कहानी म पटल कथावाचक से यह कहने पर कि अगर
तुम्ह कोई आपत्ति न हो तो मैं तुमसे चारी करने का कारण पूछू — कहानी का
मुख्य पात्र अपनी कहानी कहता है । एक अनुभव कहानी म भी ऐसा हो हुआ
है तो क्या कभी आपको ऐसा अनुभव प्राप्त हुआ ? — परमेश्वरी ने पूछा—

के नाम पृथ्वीनाथ अपना अनुभव सुनाता है। विक्रोरिया काल मुगलों ने मल्लनत बरसाती, बाय एन पग और तथा वह फिर नहीं आने कहानियां म भा लगभग ऐसा ही हुआ है।

एक माय ही विविध प्रकार का शलिया का प्रयोग उसके ने निरुद्देश्य तथा किया है। चरित्र चित्रण में यथापता तथा मजीवता लाने के उद्देश्य से ही उमने ऐसा किया है। फलतः विगुह घटना प्रधान कहानियों का छाड़ अथ कहानिया का चरित्र चित्रण आत्मविश्रुतपणामक है। जहाँ स्वयम् मुख्य पात्र ने कहाना का मूत्र पकड़ा है वहाँ उमने कवल वस्तुपरक वर्णन ही नहीं किया वरन् स्वयं आत्मविश्रुतपण भी किया है। प्रकटम उत्तरदायित्व बाय एक पग और कायरता पराजय अथवा मृत्यु राज और चिनगारी का आत्मविश्रुतपण अत्यंत गुल्म हुआ है। इनमें स्वयम् पात्रों ने अपने मन का विवृति तथा कुठाआ को पृष्ठभूमि दे दी है। अथ कहानियों का अधिकांश चरित्र चित्रण प्रायः उसके द्वारा हुआ है। किन्तु इस चित्रण में ललन तटस्थ नहीं रह पाया है। कारण यह कि लक निम्न तथा मध्यवर्ग के प्रति ता सहा नुभूति रखता है किन्तु पूजापति के प्रति उमके मन में यह भावना नहीं रहती। यही नहीं, शक्ति नारी के प्रति भी वह अनुदार रहा है। फलतः पहल वग में ता उसने अच्छाईयां भर देखी हैं और दूसरे वग में कवल मात्र बुराईयां। अथ एव चरित्रा के सम्बन्ध में उमके निम्न एक पत्नीय और पूर्वाग्रह से ग्रस्त हैं।

जा भी हा बमाजी का कहानियों में मन का द्वन्द्व और भावनाओं का आनादन बिनादन यथापत मात्रा में है। इसका फलस्वरूप चरित्र सजीव और स्वाभाविक बन गये हैं। अतः द्वन्द्व के अनेक उदाहरण पहल दिये जा चुके हैं त्रिनय बमाजी का मनाविज्ञान सम्बन्धी ज्ञान परिवर्तित हुआ है।

कहानियों के सवाँ नाटकीय पर सजीव और स्वाभाविक हैं। पात्रानुरूप तथा भावानुरूप उनको भाषा में स्वच्छता तथा कमावट रहती है। क्वर साहब मर गये के क्वर साहब के सामने जब शराब से भरा गिलास रखा है जबान मालिन पर नजर है तब उनका यह वाक्य अब आ कतुआ दग ता इन शहरपोशा का किमने बगन में पुम आन दिया ? इनके कह द 'क्वर साहब मर गये — किटना मत्राव और स्वाभाविक है यह कान की आवश्यकता नहीं। 'आवार' कहाना के गैर त्रिभंगर उद्देश्यसित मुक्ता के वातावरण में नाटकीयता नहीं, स्वाभाविकता है। बमाजी की कहानिया के कथारूपना की एक मूल विशेषता यह है कि पात्रानुरूप उनको भाषा यत्नही

रही है। पियारी की ग्रामीण नायिका अपनी सौत्र भापा म बात करती है राजा बाबू ! एक बिनै है—जज उइ मिलें ता कहि दीहू न रि राम्ना ग्यत्र देवते । दो बनि के ग्रामीण का मुना स्वंग सूत्र भरयो म किननी सजीवता और स्वाभाविकता है। बरना हम भी आत्मी य काम क म मियाँ राहू की बोबी का निगोडा कलमहा कही का। नौकरी छाड आया हम लोगो को भूखा मारने के लिए। न नौकरी छोडने का मजाल। म लनाडू मुसलमान औरत का चित्र सजीव हा उठा है। अपनी कहानिया म मुसलमान पात्रो से बर्माजी ने अरबी फारसी शब्दो का अधिक-म-अधिक प्रयोग कराया है जिमसे उनके सवाद वृत्रिम बनने स बच गय है। नाजिर मुशी म मुरी के कथोपकथन बडे आकषक बन गये हैं लडको ! सब जज सान्त्र मही हैं बडे स्वाभिमानी और बडे इज्जतदार। अग्रेज तहजीब के कायल हैं और अगर देखा जाय तो अग्रेजी तहजीब ऐसी कोई बुरी भी नही है। ये सब जज साहब हमारे मेजवान हैं इन्होंने हम यानी बरान को अपने घर पर बुलाया है। और मेरे प्यारे बच्चो तुम्हारे बुजुग सबजज साहब से नाराज होकर चले जा रहे हैं इसम तुम्हारे बुजुगों की ही गलती है। माना कि हिन्दुस्तान की पुरानी तहजीब क मुताबिक मेजवान का यह फज है कि वह मेहमान की उचित अनुचित चुपचाप सह ने और अपने घर आमत्रित मेहमान की सेवा करे लेकिन अग्रेजी तहजीब क मुताबिक कभी भी बेजा बात न बर्दाश्त करनी चाहिए। क्याकि मैं हिन्दुस्तानी तहजीब का कायल हू क्योंकि मैं हिन्दुस्तानी ही हू और हिन्दुस्तानियो के बीच म ही मुझे रहना है और मेरे प्यारे लडको। तुम्हारे लिए भी मेरी नेक सलाह यही है कि तुम हिन्दुस्तानी तहजीब को ही अपनाता लेकिन तुम्हे (सब जज) साहब की उचित पर डटे रहने की प्रवृत्ति पर उनको इज्जत करनी चाहिए। तुम सब लोग झुककर (सब जज) साहब का मलाम करो और फिर अपने बुजुगों के साथ यहाँ स रवाना हो जाओ। यद्यपि इसमें उचित-अनुचित तथा प्रवृत्ति जैम शब्दो का प्रयोग मुसलमान पात्र के मुख से अस्वाभाविक लगता है किन्तु सम्पूर्ण बार्तानाप म जो मुसलमानों लहजा और अरबी फारसीपन है वह इसका प्राण है।

बर्माजी की बणनात्मक शली की भापा सीधी सरल और सुबोध है और उसने देखा कि सारी प्रवृत्ति उसकी प्रसन्नता से हम रही है। चिडिया चहन रही थी और भोगरा महक रहा था। सुबह की ठडी हवा अपनी मस्ती क साथ सोरभ से अठखेलियाँ कर रही थी और आम क बोरा पर बोराई नई कायल

पंचम की अत्यन्त भरन में अनुग्रह था। अना उमर का मान्यता में चकित और पुनर्कृत रामेश्वर अत्राव उमरता क माप यह मर दन रग था।

प्रमच की भाषा की भाति न वमात्रा की भाग न का पुन निर स्वामाविक और मरस है। अना अनिन्वक्ति का प्रभावशाली बनाने क लिए उन्नि आवश्यकतानुसार भावप्रवित्त जगवा तरना तथा नक भाषा क शाशा का प्रयाग किया है। हं नगर उरायत मनामर श्रुतियों चालान शक दा शि न गवाभा पत्र तनखा नुप न्यादाव मरजा अनिनाक प्रचरित शाशा क अतिरिक्त पराजान (परनिवश अचरित शाशा) जै अचरवित शाशा का भा प्रयाग किया है।

वमात्रा एक विद्या कलाकार हैं जार उनका शारा विद्या वउमान ममात्र क शैगीरन आर आदान पर है। उनकी प्रअक कहाना शक्ति का किला-नर्विसा कमजारी पर भाविक चार करता है। पत्र वमात्रा क ध्यान स्वमात्र कदानी क नाव-मय का आर जर्मि आर उमक कला-मय का आर कम है। नावा पर अधिर बन दन क वार क हू-क हू उनका ना-नाण असदत आर विशुवन हा गया है। विचारा का वग जय उनर मन म उत्र हा उठता है तत्र व अन का नियंत्रित न कर पात। आर उन उठ गिरत नावा का व ना-ना-न्या अनिन्वक्त कर उ है। उ न्हें द्य वात की चिन्ता नहीं रहता उनका कहाना का शिल्प विधि कसा हागा। उव व कला-सम्प्रदा नियम क पाबन नर्ण रह पात। व नाव क प्रति मचे है शिल्प-विधि क प्रति नहा। अन न शक्ति कहाना-सम्प्र में उन्नि निवा है क्या निमा जाता ओर कों निमा जाता है किसी भा कलाकार का कृति का पत्र क समय एम प्रशनों का उरना कलाकार क माप हा नहा वरनु कला क माप अन्याय करना है। आर सागा का दमना चाहिए किस तरह निमा जाता है ? और यदा कलाकार की मरता है। यही कारण है कि वमात्रा का कला मौनिक और विशिष्ट है।

अन्त में हमारे सामन एक प्रश्न आता है कि पूर्ववर्ती और समकालान हिन्दी कहानीकार क समकाल वमात्रा का जलन क्या है ? पूर्व प्रमच कहानी शिल्प जगमय की शक्ति म का महत्त्व म्यान नृ गता। प्रमच शिल्प कला में कुनिमाता क रग में आय। विषय का शक्ति म उरना भाविक उरगा है। जीवन का कला एम पर नहीं है शिउ प्रमच ने नगुन हा। उर मय और निन्वक्त मनी क, अकसा

मनोवृत्ति और मनोरिपान का गिनना यथाय जहन प्रमचन कर मय यन आज दुनभ है । किन्तु वमाजी का रानी क्षेत्र जयत गोमित है । जनी प्रभात न जमाकार वृषत मजदूर वनर मभी वा नर तिया वनी वमाजा या क्षेत्र बहुत वृद्ध बुद्धिजीवी वग तर न गोमित र गया है । व नमा र उपव मजदूर जीवन म वासा दर र है । य नना ति उ न निम्न वग म मन्तभूति नहा है । इम वग क प्रति मवेना ता मी गान म दृष्टिगत हाती है कि उ नने अथ पिशाच मया नुम्ह वा गया अति कहानिया म पनीपति वग और अनिया मसृति रो मिकारा है । वन्तु इमका कारण यह है कि म वग का वमाजी ने निरुट म नहा मया और जिम वान को मन्राइ मे अभिव्यक्त न कर सके मये विषया पर निखने का उहाने प्रयाम नया किया । विषया जोर विवादन का तरफ म निम्नवग की धनकियाँ हैं अवश्य किन्तु व ग्रामीण और मजदूर जीवन का अहन करने क अभिप्राय न नहा किया गयी है । इनका उद्देश्य अथजनित मानव विकृति का प्रकाशन करना रहा है । इमक विपरीत शहरी जीवन का जितना यथाय अवन वमाजी न किया है वैसा प्रमचद नही कर सके । शहरी जीवन म भी उन्होंने बुद्धिजीवी वग को अपना प्रमुख विषय बनाया है । इस वग की मनोवृत्ति तथा मनोविकृतिया का दखने का जितनी सूक्ष्म दृष्टि वमाजी म है वैसी प्रमचद मे न थी । कारण स्पष्ट है । प्रमचन क सस्कार और वातावरण ग्रामीण थे उहने ग्रामीण जीवन को निरुट स देखा ही नही था भोगा भी था इसलिए इस क्षेत्र म उनकी अभिव्यक्ति उत्कृष्टतम है । किन्तु वमाजी का वातावरण सैन शहरी रना और उमी म उनका व्यक्तित्व पनपा इसलिए उसकी एन एन गतिविधि और उस समाज की एक एक सास स व परिचित हैं । जैम उहोंने उसकी प्रत्यक रकन चाप प्रत्यक धडकन को समझ लिया है । इसकी अभिव्यक्ति म वे नग्न यथाय का चित्रण करने म भी नहा चूके हैं और इसलिए कभी कभी व हम उग्र की मणी क कनाकार लगने लगते हैं किन्तु उनका नग्न यथार्थ उग्र की भाँति उत्तजना पूण नथी ।

उत्तर प्रेमचंद का न के युग प्रवतक कहानीकार जैने हैं । उहोंने काम जनित विकृतिया को आधार बनाकर कहानिया लिखी हैं । अपने क्षेत्र क वे जय तम कलाकार हैं किन्तु उनका विचारक वाला रूप उनके कलाकार वाते रूप पर हावा हो गया है । वे पात्र के किसी आचरण का सरन और सीधे ढग से नही न पाने । इसनिग उनके चरित्र बड गूँ जोर रहस्यमय हो गये हैं । किन्तु वमाजी प ले कनाकार हैं वान म चितक । उनम भी विचारक वाला व्यक्तित्व

है, किन्तु उनका यह व्यक्तित्व सचक वाले व्यक्तित्व पर गवाना हा गया है इसलिए लहने शरानिक और मनात्रैतानिक घन कला क मीम्य-त्राय को हया नया का है । यद्यपि नाच उद्धत अश बमात्रा की नवान म कहानी बह मर चुता का अश है कि न ना यहीं वह सगत वेष्टा है मैं कवि न, कानो रेखक हू पर मैं शरानिक कभा नहा रहा । मरा एना अनुभव न कि शरान जाए मनाबिज्ञान मनुष्य म मका नावता वाने मीम्य का अपहरण कर वेता है । ❀



‘वह फिर नहीं आई’ (१९६०)

वह फिर नहीं आई उपन्यास का कहानी रास जोर चिनगारो नामक कहानी संग्रह में इसी नाम से संग्रहित है। लगभग छत्तीस पृष्ठा की इस कहानी का बर्माजी ने लघु उपन्यास का आकार दिया है। कर्तव्य इस कहानी का उपन्यास रूप में प्रस्तुत करने में बर्माजी का उद्देश्य व्यावसायिक रहा है किन्तु इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि वह फिर नहीं आई कहानी संवेदनशीलता की दृष्टि में अत्यन्त सफल है और मित्रा का आप्रह भी इन उपन्यासों का रूप देने में सहायक हुआ होगा। वैसे कहानी और उपन्यास के लेखन-काल में दस वर्ष का अंतर है। वह फिर नहीं आई कहानी का लेखन काल बर्माजी के कथनानुसार १९५० है और वह फिर नहीं आई उपन्यास का प्रकाशन काल १९६०। इन दस वर्षों अवधि में किसी तरह का साधारण व्यक्ति तक में महान् अन्तर आना स्वाभाविक है। उसके आदर्श उनकी मान्यताएँ उसके जीवन मूल्य बदल सकती हैं। विशयतः यदि युवा व्यक्ति प्रौढ़ता की ओर बढ़ रहा है तो उसमें अधिक अंतर आने की संभावना रहती है। उसकी भावुकता गम्भीरता में बदल सकती है। लेखन में उसके अनुभवों की छाप आ सकती है। बर्माजी की इस कहानी और उपन्यास में इन सब कारणों से अन्तर आना स्वाभाविक था और वह आया भी है। भावुकता की दृष्टि से बर्माजी में किसी प्रकार का अन्तर नहीं आया। उम्र के साथ उसमें वृद्धि हुई है। उम्र पर दार्शनिकता का आवरण अवश्य चढ़ गया है। प्रत्येक वस्तु को वह दार्शनिक दृष्टि से देखने लगे हैं। कहानी के इतिवृत्त में किसी प्रकार का अन्तर न होने के कारण उसके आकार में वृद्धि दो ही प्रकार से की जा सकती थी—एक तो विषय की विस्तार में व्याख्या करने से दूसरे बाह्य जगत का दूसरे शब्दों में स्थानीय वर्णन का बर्णन कर करने से। बर्माजी ने दोनों का ही उपयोग अपने उपन्यास में किया है। १९५३-५५ में लखनऊ में रहा। वहाँ के जीवन का मूल्य पर्यवेक्षण उसने किया था। उपन्यास में उसी के वर्तमान और प्राचीन

जीवन पर उनकी टिप्पणी काफी लम्बी है। जिनो भारतवर्ष की राजधानी है। यहाँ मे कराना आत्मिया का जीवन संचालित होता है। मारे देश का हमया मिमन्कर जिनो म आना है और यहाँ स वह फिर वितरित होता है। भाजन वस्त्र, शांति चाय सुवन्विया य मव सारे देश को जिनो स वितरित हात है। यहा कातून बनत हैं यहाँ परमिट बनत हैं यहाँ मया लुटता है। बनाना या तवाह करना हमाना या म्लाना बनाना या उजाडना य मव कुछ अनरा के हर पर स हा गया करता है यहाँ। जितना व्यंग्यपूण पर सटाट टिप्पणी है जिनो पर।

विस्तार क लिए नवन ने जानचन क कारावार परिवार आदि क भी उल्लेख किया है। कहानी म य अश नया है। इस प्रकार का विस्तार उचित है किन्तु इसम जानचन की पत्नी का नाम आया है वह ऊचा मत हा न आव्याभावित है। पत्नी का जितना भी विशाच-हृत्था हा यह नहा कह नती कि वह तुम्हारी नहा है—शाप यह बन भी नहा मतता। यह फिर नहा आद कहानी म जानचन क परिवार और उनकी पत्नी का उल्लेख तक हा है। इस उल्लेख स इतिवृत्त सिधित मात्र बना अवश्य ह पर मूल कथा म हमम सिमा प्रकार का उल्लेख नया आया है। उल्लेख म भी पाठकों की भावनात्मक मखाना उठना रती है जितनी कहानी म उल्लेख हुई है। किन्तु स्वयं-स्वयन पर वमाजी की दार्शनिक टिप्पणिया ने उल्लेख म एक गम्भीरता अवश्य उल्लेख क ले है। इस प्रकार का टिप्पणिया म भावनात्मक संवेदना बाना त न हनया पठने को सभारना थो किन्तु उल्लेख म एमा नहा हुआ। वरन् हम कह मकत है कि उनमें वृद्धि ही हुई है। इसका कारण यह है कि वर्माजी न जितनी भी दार्शनिक टिप्पणियाँ की हैं व सब भावुरता म आत प्राप्त हैं। क्या कहा तो हमक सयुवन प्रभाव म अभिव्यक्ति में अनूख मीप्प उल्लेख हो गया है जिन म शाप जनी बान ही तरह म नहा म पा रण। अगली बात यह है कि मैं आन को सा दिया हम मव खात रण हैं। पाठ कुछ नहा। जिन हम पाना कहत हैं व एव हे धार्या है। भ्रम है, भ्रम का दूर हा जाना हो या दना काना है। और आन मुने लग रण है कि हमारा भ्रमस्त अस्तित्व हा हम भ्रम और दानना ने अनुप्राणित एव अनुशासित है। भ्रम दूर हात रण है सतिन वाम्बविकता हम नहा प्राप्त कर पात—एक भ्रम क बा दूमरा भ्रम। हम क्या मय का ही मयस मात है सतिन व मय क्या है? नया मयस म आना कुछ भी मयस में नगी आना। यह मय स अमरयता और निगसा। इस प्रकार वता और निराशा क ऊन ना कुछ है यह म नहा जानता।

मेरे सामने ता जा कुछ है वह भ्रम है और इस भ्रम को हम दूर नष्ट करना चाहते वार्ति भ्रम का एक वाग्मी दर कर ता ग अर्थ तो है मृत्यु । हम सब अपने भ्रमों में बुरा तरह बिगड़ रहना चाहते हैं । उन भ्रमों का दूना ना ना देना है ।

मैंने श्यामदान का गा दिया एक भ्रम मेरे जीवन में आकर निरतन गया । तबिन उम भ्रम में तिनको मान्यता था हितना पुनः था उम भ्रम तो पान २ टिपण म नितना विगत हू । नितना अधीर हूँ उस भ्रम व अभाव में मैं स्वयं जाने लिए एक दु स्वप्न बन गया हू ।

अतएव व फिर नहा आइ कहानी में तखर विशुद्ध कहानीकार है पर उपयास में कहानीकार के साथ साथ दाशनिर् भी है । अक्सर पान हा व नितो न किसी विषय को नरुंर दाशनिक व्याख्या करने लगता है । उसही व व्याख्याएँ सभी विषयों पर है—व्यापार इतिहास परिवार समाज प्रेम अथ कानून नितना—किसी का भी उसने नहीं छोड़ा । ये टिप्पणियाँ कभी कभी नगातार भी आ गयी हैं । जैसे इतिहास कानून नतिकता व्यापार पर छ सात पृष्ठा में दाशनिक व्याख्याएँ लगातार बड़ी विस्तार से आयी हैं । इसमें उपयास में नीरसता आने की संभावना पूरी तरह थी । किन्तु ऐसा नहा हुआ है क्योंकि बीच-बीच में तखर ने एक-दो पैराग्राफों में क्या तन्तु इस प्रकार गूथ दिये हैं कि वे टिप्पणियाँ प्रसंगानुकूल प्रतीत होती हैं । जो आत्मविश्लेषण पात्र का चरन रहा है और जिस मन स्थिति में वह है उसमें उसका दाशनिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विश्लेषण करना स्वाभाविक है । फलतः इस प्रकार की व्याख्याएँ मूला कथा की अंश हैं । इस सदर्भ में एक प्रश्न उठा सकते हैं कि जब जानचर आत्मविश्लेषण में अपनी गलती महसूस करता है तो फिर क्या वह जीवनराम को जेल भेजता है ? इसका उत्तर स्वयं जानचर दे देता है । जीवनराम जेल में है । उस सजा हागी । वह बच नहीं सकता । और जहाँ तक मेरा प्रश्न है मैं कानून की परत में नहा हू । क्योंकि मैं सक्षम हूँ मैं ममथ हूँ अधिकारों में मित्र हूँ समाज में मेरा आदर है सम्मान है । दूसरे की परतों का अपहरण कर सकता हूँ और मेरे ऊपर आँच भी नहा आ सकती । फिर भी मेरे मन में हनचल है उल्लन है । मेरा मन शांत नहीं है मैं अपराधी हूँ ।

मेरे आश्रयवाला यह अतएव यह आर्थिक कारणों से नहा हो सकता मैं अनुभव कर रहा हूँ । कहाँ थकत भीतर चेतना की अजीब जगात तहो में

दना चाहें ता भारतीय काव्य शास्त्र की शालावली में हम उसे उपायक का मत हैं किन्तु उपायक बटकर हम उगक महत्व को घटा नहा रू । क्याकि वर नायक स अधिक् महत्वपूर्ण है । अतएव उपन्यास में पात्र कथन तीन हैं किन्तु ताना प्रमुख है ।

उपन्यास का सम्पूर्ण इतिवृत्त भावना और मकेयना का कहा जा मवता है क्याकि घटना और चरित्र का स्पून बणन इगम नहा है । एतत् उपन्यास में वर कथा सयाजना भी नहा है जा हाना चाहिए आ-म-कथा-मर (शाली में पूव निश्चित याजना हागी भी नहा । वस उगम इतिवृत्त क प्रथिक् विज्ञान का भा ता जावश्यकता नहा हाती । किन्तु वह फिर नहा आयी म एर विज्ञान क्रम है एक प्रकार का कुतूहल और उत्सुकता है ; जीवनराम को तत्र मत्र दन क वात क्या म एक विराम था जाता है । किन्तु श्यामला की कहानी का नवन क वात पानचत् पर क्या प्रतिक्रिया हागी मका परिणाम क्या हागा— इनक प्रति पाठा उमर हा उठता है । पानचत् की भावनाए वार-वार बलनी गृता हैं इसतिण उमकी प्रतिक्रिया क परिणामम्बरूप कुछ नवान हागा इसकी ननावना हमशा बनी रहती है ।

वर्मा जी का नियति और प्रेम क स्यायित्व पर सदैव से विश्वास रग है । उन दाना का अस्तित्व हम म उपन्यास में भी पात हैं । श्यामला अपने सवात में वार-वार नियति की टगाइ देती है । श्यामला और जीवनराम का प्रेम भी स्यायी है—चिरस्यायी । बाह्य परिस्थितिया क कारण जीवनराम और श्यामला अनक वार विनग हात हैं श्यामला का अनेक वार अपना तन वेचना पडता रू—किन्तु उमकी आत्मा मत्र जीवनराम की रहनी है । उमक मरने के वात तव । उसकी मायता है दो प्राणा को एक मूत्र में बांधता है वह प्रेम है विवाह ता दा शरीरो को एक मूत्र में बांधता है । विवाह तो वह शाहमात्र स नी करती है लेकिन परिस्थितिया से मजबूर होकर किन्तु प्रेम दो प्राणो को ना एक मूत्र में बांधता है वह जीवनराम स ही करती है । वर्मा जी ने नारी का विशपत बेश्या या समाज की दृष्टि में पतित नारी को बहुत ऊचा उठाया है । उसके हृय की पीना का समझा है उसके मम को छुआ है । चित्रनेखा की चित्रनेखा तीन वय की सराज आकिरी दाव की चमनी वह फिर नही आयी की श्यामला क ठेके चरित्र उनकी इमी भावना क परिणाम है । शरणार्थी ममस्या और सताई हुई शरणार्थी नारी की इतनी मर्म स्पर्शी कहानी घण्ट कम नवन में आयी है ।

‘वह फिर नहा आई’ कि सभी चरित्र मानवीय-कमजादियाँ स प्रस्त हान पर भी बहुत ऊँचे हैं। पानचन्द की समस्त दुबलताएँ मानवीय हैं। जीवनराम का चरित्र भी कम प्रभावशाली नहा है। परिस्थितिवश वह अपनी पत्नी का शरीर विकने देता है किन्तु वह श्यामला का प्राण स भी ज्यादा प्यार करता है। उमने अपनी छाती-सी जित्नी म इतना सहा है कि अच्छाई नेका आर इंसानियत पर स उमका विश्वास उठ जाता है और अगर वह विश्वास कर भी स तो किसी की दया का उसे आवश्यकता नहा। जेल से छूट जाने क बाद वह समझता है कि पानचन्द ने उसकी पत्नी के बन्ने में उसे छुनाया है ता वह रहता है ता फिर आ गया आपकी समझ म—आपने मेरी पत्नी ली मन जापका स्या लिया, हिमाव कितान बराबर। किन्तु पानचन्द क यह कहन पर कि यह श्यामला तुम्हारी पत्नी है और वह तुम्हारी ही रहेगी वह एकाएक तहक उठता है। न जाने कहीं की हत्ता और कठोरता उस अकमप्य स्पेग और सकुचित जीवनराम म आ जाती है और वह यह कहकर कि तो मानूम हाता है श्यामला आपके सामने रोई और गिडगिडाई। वह आपक यहाँ भीव माँगने गयी थी। तकिन पानचन्द जी में आपकी भीख नहा चाहता। मैं दुनिया में किसी की दया और करणा नहा चाहता। मैं चाहता हूँ कि मैं आपका स्या वापस करक ही अपनी पत्नी को आपसे लूमा तब तक नहा। वह चना ताना है। जीवनराम में हदता और अदृष्ट आत्मविश्वास है।

इस प्रकार ‘वह फिर नहा आयी’ के किसी पात्र क प्रति हमारी सहानुभूति कम नहा होती उनन्यास की भाया बढी प्रभावपूर्ण और अभिव्यक्ति बढा मम मरशाँ है। एक उदाहरण है ‘क्या आप कल्पना कर सकत हैं—जिस पाता मार गया हा, उस रक्त का जा ठडा पड गया हा, उस अस्तित्व को जा भावना विहीन हा गया हा? क्या आपने पानी का मडत दया है? क्या आपन रका नुद हवा की पुनन का अनुभव किया है?’



परिशिष्ट

एक नम्ये कागद वान धर्माजी की उमा नाम मण्डल रचना नई कथा निर्मा व माच १९६३ व अरु मे प्रकाशित हुआ। यह कथानी वर्मा जी की पूर्ववर्ती कहानिया से अभिपक्षित और कथा सभी म भिन्न ह। जाज का कहानी कला से लेखक प्रभावित है इसके स्पष्ट चिन्ह उमकी इस कहानी मे मिलत है। पात्रा का मनावैनातिक चित्रण मन ही उमकी अभी तक की कहानिया म रहा हा किन्तु आधुनिक मनोविज्ञान की गहराइ उमम नहा यी। उमा म मन के गूढ रहस्यो से वह हमारा परिचय कराना है। और इस प्रकार यह भी स्पष्ट है कि वर्मा जी की मायताएँ बन्नी हैं। अब वे मनाविश्लेषण को कहानी मे दुरुहता लाने का कारण नहा मानते।

उमा की सम्पूर्ण कथा व्यक्ति के मन के आलाडन विलोडन से सम्बन्ध रखती है। अपने मन के सघष को स्वयम् उसका भुवन भोगी तक नहा समझ पाता। कहानी की नायिका नीलिमा का मानसिक सघष बडा विचित्र और गूढ है। उसका व्यक्तित्व बडा उलझा उलझा और मनोविकृति से पूण है। तीन बच्चो की माँ और करोडपति की पत्नी होने पर भी वह कथा पर पुष्प चित्र कार मधुसूदन से प्रेम करने लगती है या उसके वामना के उमा मे खो जाती है। उमके पति का जो व्यक्तित्व लेखक ने प्रस्तुत किया है वह इतना रुखा है कि कोई भावुक स्त्री उससे प्यार कर ही नहीं सकती। नीलिमा का पति साधारण शक्ल का मोटा-सा आदमी जिसके बाल सफ़ होने लगे थे और जिसके मुख पर किसी प्रकार का कोई भाव नहा था। वह एक लम्बा सा स्वस्थ व्यक्ति था और बडे शान्तार कपडे पहने था। उमके शब्दो मे एक प्रकार के अहकार की छाव थी—मैंने यह अनुभव किया। वैसे वह ऊपरी ढङ्ग से बडा शिष्ट और विनीत था जसा कि हरेक सफल और सम्पन्न पापारी होता है। यह व्यक्ति यस्त इतना नि दो मिनट शान्ति से बैठने का समय इसके पास नहा। नीलिमा क शब्दो मे—इह तो बस कारबार कारबार। पुरसत ही नहीं मिलती कि कला साहित्य और संगीत मे रुचि ले। चित्रकार के शब्दो मे अपने व्यापार म और धन सग्रह मे खोपा आत्मी था वह भावना के क्षेत्र से अलग। और

इसलिए नीलिमा चित्रकार का और जादूगिरी जगता चली जाती है । किन्तु यह
 वास्तविक प्रेम यह उमाताम्या का नहीं रहती । यह नशा उतर जाती है
 जब उमाता का मन बीत जान है तो प्रेम व्यक्ति का अपना अन्तर्गत भाव
 है । चित्रकार को वास्तविक प्रेम तृप्त ही चुकता है तो वह अपने परिवार का आर
 धरता है । किन्तु नारा का उद्गम वास्तविक इतना जल्दी तृप्त नहीं होता ।
 इसलिए नीलिमा चित्रकार के साथ अलग रहने का चयन है । वह कहती
 है—'मैं तुमसे प्रेम करता हूँ । मैं तुम्हारे साथ रहना चाहती हूँ मुझसे । मैं
 अपने पति का ध्यान तो करता हूँ । एक तुम—मैं तुम्हें ही पालन मैं रहना
 चाहती हूँ । इस उमाता का प्रेम के पागलपन का ही वह अन्तर्गत चयन है ।
 मधुसूदन तथा नीलिमा के मन का स्थिति तो यह है किन्तु उनका मन
 एक ही रहस्य बनकर हमारे सामने आता है जब नारा अपना अन्तर्गत चयन
 हुए तो इस उमाता के मुख नहीं तो पाता । मधुसूदन यह जानते हैं कि
 यह पागलपन अस्तित्व का निपट है—यह विनाश है । यह आत्मा मनाज
 को अपना करके जब तक और नहीं तक यह साथ रह सकते हैं — अपने मन
 की गति का राह नहीं पाता । दूसरी ओर नीलिमा भी कभी कभी यह अनुभव
 करती थी कि वह भी अपने ही में विचरती है । दोनों का मन इस उमाता का
 ध्यान इस मन्माहर्षि से मुक्ति पाने का ठेका नहीं होता । परन्तु उसके का
 मधुसूदन का पलायन स्थितियों पटता है । किन्तु विश्व जाकर भी चित्रकार का
 मन जम नहीं पाता और नीलिमा का एक बार फिर से दर्शन का उमरी अर्ध-
 साया उग्र अपने दस लोटा जाती है । नीलिमा का अन्तर्मन मधुसूदन के उसके
 जीवन से चले जाने से निश्चय ही प्रसन्न हुआ होगा, क्योंकि इस प्रकार वह
 अपने अन्तर्मन से मुक्ति पा सका हो । मधुसूदन का फिर से पालन वह प्रसन्न
 नहीं होता । उनका उमाताम्या उमरी अन्तर्मन से प्रकट है । वह अपनी इस
 परिवर्तित मन स्थिति का मधुसूदन से ध्यान का प्रसन्न भा नहीं करता । वह
 स्वीकार करती है कि मधुसूदन निम्ना छोड़कर मरा बड़ा उकार किया
 मैं तुम्हारा इतर हूँ । तुम सब कहते हो कि मैं मुझ हूँ बहुत अधिक मुझ ।
 मरा परिवार है मरे बच्चे हैं । बड़ी-बड़ी पार्टियों में दूरी हूँ बड़ा बड़ा पार्टियों
 में मैं जाती हूँ । समाज में मरा मान है मरा प्रतिष्ठा है । मुझ पर तुम्हारा
 विद्वान् मान्य है । किन्तु यह भी नीलिमा का अन्तर्गत चयन नहीं था उनके
 हृदय का यथाथ चयन नहीं था क्योंकि पाँच वर्ष बाद फिर मधुसूदन के
 पान प्रेम का भिन्ना भिन्ना जाती है यह चयन कि मैं तुम्हारे बिना नहीं रह
 सकता मधु । मुझे यह परिवार की चरमों का मुझ नहीं चाहिए बिना मुझ

चाहिए। उस आत्मी के साथ जिगर था। जो मैंने जन्म लिया किम घुटन के साथ मैं रही हूँ यह मैं ही जाती हूँ। मैंने तुम्हें भूना था प्रयत्न किया तुम्हारे हित का ध्यान रखकर तुम्हारे परिवार के हित का ध्यान रग कर। और अब तुम मुक्त हो। नीलिमा के मन की इस क्षण-क्षण परिवर्तित मनावृत्ति का रहस्य क्या है? वह मधुसूदन का धामा देती है या अपने मन का? उसकी आत्म छनना का रहस्य है—उमरी अतृप्त वागनाम। यह स्पष्ट है कि वह मधुसूदन को वैसा प्यार नहा करती जगा दिगाती है। उमम वह अपनी वामना तृप्त करती है। उमके पाम निजी दा लान गया है त्रिमम विदश म वह मुख और सम्मान से अपना जीवन बिता सक्षती है। यदि उमर पाम धन न हाता तो वह कभी मधुसूदन का विश्वास न जाकर जिन्गी का फिर से नये सिरे से शुरू करने की बात न कहती। यह सब उसकी मृग-तृष्णा है जा क्षण क्षण पर अपना रूप बलती है।

मधुसूदन और नीलिमा दोनों के अन्तर्द्वन्द्व को अभिव्यक्त करने में लक्ष्य पूणत सफल हुआ है। अपने हृदयादालन से भागे भागे फिरने पर भी गाना पात्र उमसे छुटकारा नहा पा सक इस उलझनपूण मनोविकृति को लेकर न उनक आचरण के माध्यम से प्रकट करने का प्रयत्न किया है। पात्रा के मनाविश्मयण में वह स्वयं नहीं उलझता है। उहां के माध्यम से उसे अभिव्यक्त करने की चेष्टा की है।

धर्माजी ने स्वच्छन्द प्रेम को सदैव प्रश्रय दिया है। किन्तु उस स्वच्छन्द प्रेम के व समथक नहां हैं जिसमें उच्छ्वलता हो। जा जीवन की अनेक मह-वर्ण चीजों का भुला द। यह प्रेम नहीं उमाद है यह पागलपन है। प्रेम को समत रहना चाहिए प्रेम का पागलपन बन जाना प्रेम की विकृति है।

उमा कहानी का संपूर्ण रतिवृत्त भावनाओं के आलोडन विलोडन पर स्थित है। स्थूल इतिवृत्त को लेकर यह कहानी नहा लिखी गयी। जैसा कि धर्माजी की पूर्ववर्ती कहानियों की विशेषता थी उनके कथा विकास में घटनाओं एवं सयोगों का विशेष हाथ रहना था इनमें वह बात नहा है। चरित्र की विविध मन स्थितियों भावनाओं के उत्थान-पतन ने हा इस कहानी का रूप विधान निर्मित किया है।

जैसा कि हम धर्माजी की पूर्ववर्ती कहानियां में दल चुके हैं व कहाना का आरम्भ विविध टङ्ग से करते हैं। कहानी का आरम्भ करने का उनका एक ऋण यह भी है कि व मूल कहानी की भूमिका वाधन के लिए किसी दूसरी कहानी से

उसका आरम्भ करते हैं और फिर विषय के साम्य के कारण प्रमुख कथा का सूत्र पकड़ लेते हैं। उमाद भ मुख्य पात्र मधुसूदन की भेंट सतीश से समयोपवसा ट्रेन में हो जाती है—एक विचित्र मन स्थिति में। यह विचित्र मन स्थिति कभी मधुसूदन की भी थी। यही पागलपन तो जिन्दगी है। एक समय मैं भी यह समझता था—हम सब किसी न किसी समय ऐसा समझने लगते हैं, लेकिन यह सत्य नहीं है। तुम शायद मेरी कहानी सुनना चाहोगे—इस कहानी को सुनने के बाद संभव है तुम अपना दुःख भूल जाओ। इस सत्य प्रेरणा के फलस्वरूप मधुसूदन अपनी कहानी सुनाता है।

कहानी आत्म-कथात्मक शली में है। पर मधुसूदन ने अपना आत्म विश्लेषण इतना अधिक नहीं किया जितना नीलिमा के आचरण का अध्ययन। अपने हृदय-मघप के सम्बन्ध में तो वह केवल दो चार बार उल्लेख करते ही रह जाता है हम दोनों वामना के उमाद में वह रहे थे और उनके प्रेम तथा आत्म समर्पण की प्रतिक्रिया उस पर भी पड़ी। मैं नीलिमा से दूर हटना चाहता था। हम दोनों के अलग होने ही में दोनों का कल्याण था। हम दोनों जितना अधिक एक-दूसरे से हटना चाहते थे, उतना ही एक-दूसरे के पास आते जाते थे। पलायन करते समय वह केवल इतना सोचता है—ऐसी हासत में मुझे बुद्ध-न-बुद्ध निणय करना ही था। मेरा सारा अस्तित्व स्वतरे में था और एक अजीब तरह का भय समा गया था मेरे अन्दर। और फिर मैंने इस समस्या को हल करने का कर्म उठा लिया। वह कर्म था—पलायन। इन दो-चार वाक्यों से ही मधुसूदन का मानसिक संघर्ष प्रकट हुआ है। मनाविश्लेषण की प्रवृत्ति बर्माओ ने अधिक नहीं लिखलाई।

उपसंहार

वर्माजी के सम्यक कथा-साहित्य का अध्ययन करने व पश्चात् उनका कथाकार बाना एक विशिष्ट व्यक्तित्व हमारे सामने उभर आता है। उनकी ममस्त रचनाओं में हमें व्यक्तिवानी मानव चेतना का स्वर ध्वनित मिलता है। उनका यह स्वर रोमांस के क्षेत्र में सत्य अधिक प्रखर हुआ है। नवीन को ग्रहण करने की उनमें जमजाम प्रवृत्ति है पर नवीन व नाम पर अधानुकरण उनकी रुचि के बाहर की चीज है। आज के सांस्कृतिक सक्रमण काल में अनास्था का भाव उनमें आप-ही आप तीव्र हो उठा है। परिस्थितियाँ इतनी तेजी से बदल रही हैं चीजों का रूप इतना विवृत हाता जा रहा है कि सही क्या है और गलत क्या है इसका निणय व्यक्ति के सामने एक समस्या बनकर उपस्थित हो गया है। और यही व्यक्ति में अनास्था का भाव जाग्रत करने का कारण बना है। इस रूप में वर्माजी को हम अनास्थावादी कलाकार कह सकते हैं। किन्तु उनमें हमें अनास्था का विवृत रूप नहीं मिलता। उनकी आस्था अभी नहीं है। उनकी आस्था केवल इन गुड वाली है। और यी वर्माजी के साहित्य में वह विशिष्टता पैदा हो गयी है जो हमें सर्वाधिक प्रभावित करती है और यह विशिष्टता है उनका अत्यधिक यथाथवानी दृष्टिकोण। उन्होंने केवल जीवन के चित्र लिए हैं उन्हें अच्छा या बुरा बताने का प्रयत्न नहीं किया और इसलिए वे समस्या या समस्याएँ उपस्थित कर देते हैं समाधान नहीं देते। पाठक को वे वस्तुस्थिति के यथाथ रूप में परिचित कराकर उस पर निणय देने के लिए स्वतंत्र छोड़ देते हैं। पाठक जिस ढंग से चाहे उसे ग्रहण करे और उस पर सोचे।

किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि वर्माजी की रचनाएँ निरुद्देश्य हैं। वस्तुतः उन्होंने जो कुछ लिखा है वह सोद्देश्य है—केवल इस अर्थ में कि वस्तु का यथाथ रूप हमारे सामने जा जाय। उसके लिए किसी आदेश की स्थापना करने का प्रयत्न उन्होंने कभी नहीं किया। वैसे उनकी व्यक्तिवादी मानव चेतना स्वयं में एक स्थापना है इसे हम अस्वीकार नहीं कर सकते। किन्तु वह

स्थापना आशा से मुक्ति पाने का प्रयास भर है—इसमें अधिक बुद्ध नहीं। और अच्छाई के प्रति आम्ना बर्माजी की मौलिक प्रवृत्ति है।

यथाय अथवाय के प्रश्न से जुड़ी एक समस्या बर्माजी के साहित्य के सम्बन्ध में रह जाती है। वह यह कि जहाँ कहा गया कि यथाय के निरुद्ध आधा है, उसका साहित्य अश्लीलता का संस्था करा गया है। रामायण चित्रण में उसने कल्प मयम में वाग नहीं लिया। किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं कि वह उद्य के निरुद्ध पहुँच गया है। वस्तुतः बर्माजी का साहित्य उद्य-साहित्य की उद्य अश्लीलता से बहुत परे है जो पाठका में तत्सम्बन्धी उत्तेजना उत्पन्न कर दे। उनकी चित्रण शली यथाय है विषय निरूपण नहीं। उनकी चित्रण शली में वह विशेषता है जो पाठका की रचि का परिमाणन करती है उसकी भावनाओं को अनुपिठ करने का प्रोत्साहन नहीं देती।

बर्माजी के साहित्यिक व्यक्तित्व में चिन्तक एवं सजक वाले रूप अलग अलग नहीं हैं। वे एक-दूसरे से घुनमिल गये हैं। इनमें से एक रूप प्रधान और दूसरा रूप गौण भी नहीं हुआ है। उपन्यास और कहाना बान तत्व का प्राथमिकता देने के कारण विचार-महा प्रबल होने पर भी उनकी रचनाओं में वह अलग उभर कर नहीं आया। उनका साहित्य विचारोत्सर्जक है विचार प्रधान नहीं। यह एक ऐसी विरासत है जो आज के मनावैज्ञानिक क्याकारों में नहीं मिलता। मनोरंजन की सृष्टि करना उनका क्या साहित्य का मुख्य ध्य है। आज के क्याकारों की रचनाओं में जहाँ कहाना के नाम पर बुद्ध नहीं मिलता वहाँ बर्माजी के उपन्यास-कहानी में क्या तत्व उसका पहला आकर्षण है। कहानी बान तत्व का प्राथमिकता देने के कारण ही उनकी कहानियाँ में हम लघु-ब नहीं मिलता। उनमें विस्तार स्वयं ही गया है।

सादेश्य रचनाएँ होने के कारण बर्माजी की रचनाओं में कतिपय विशिष्टताएँ उत्पन्न हो गयी हैं। उनमें मन्त्रिक में क्यानक तथा पात्रों की संयोजन पूर्व निश्चित रखा है। किन्तु एक आनाचक के आगे हमें हमें पूरुत आहमत्त है कि बर्माजी अपनी अनीष्ट की निद्रि के लिए क्यानक के विकास में शक्ति मना पात्र के चरित्र में मानिहता तथा मयानों में शक्तिमता का देते हैं। बर्माजी के मन में तद्विषयक पूर्व निश्चित योजना अवश्य रहती है पर तद्वृत्तिम रचना प्रक्रिया की सीमा तक पहुँच गयी है। मना नहीं है। कौन-सा क्याकार ऐसा है कि वह मन्त्रिक में अपनी रचना का सार या ध्यवी रूप

उपसंहार

वर्माजी के सम्यक् कथा-साहित्य का अध्ययन करने के पश्चात् उनका कथाकार बाना एक विशिष्ट व्यक्तित्व हमारे सामने उभर आता है। उनकी ममस्त रचनाओं में हम व्यक्तिवादी मानव चेतना का स्वर मुद्रित मिलता है। उनका यह स्वर रोमान के क्षेत्र में सबसे अधिक प्रखर हुआ है। नवीन को ग्रहण करने की उनमें जन्मजात प्रवृत्ति है पर नवीन का नाम पर अधानुकरण उनकी रचि के बाहर की चीज है। आज का सांस्कृतिक सन्नमन काल में अनास्था का भाव उनमें आप ही आप तीव्र हो उठा है। परिस्थितियाँ इतनी तेजी से बदल रही हैं चीजों का रूप इतना विकृत हाता जा रहा है कि सही क्या है और गलत क्या है इसका निणय व्यक्ति के सामने एक समस्या बनकर उपस्थित हो गया है। और यही व्यक्ति में अनास्था का भाव जाग्रत करने का कारण बना है। इस रूप में वर्माजी को हम अनास्थावादी बलाकार कह सकते हैं। किन्तु उनमें हमें अनास्था का विकृत रूप नहीं मिलता। उनकी आस्था अधी नहीं है। उनकी आस्था फेय इन गुण वाली है। और यही वर्माजी के साहित्य में वह विशिष्टता पैदा हो गयी है जो हमें सर्वाधिक प्रभावित करती है और यह विशिष्टता है उनका अत्यधिक यथायवादी दृष्टिकोण। उन्होंने केवल जीवन के चित्र दिए हैं उन्हें अच्छा या बुरा बताने का प्रयत्न नहीं किया और इसीलिए वे समस्या या समस्याएँ उपस्थित कर देने में समाधान नहीं देते। पाठक को वे वस्तुस्थिति के यथाय रूप में परिचित कराकर उस पर निणय देने के लिए स्वतंत्र छोड़ देते हैं। पाठक जिस ढंग में चाहे उसे ग्रहण करे और उस पर सोचे।

किन्तु उसका यह अर्थ नहीं कि वर्माजी की रचनाएँ निरुद्देश्य हैं। वस्तुतः उन्होंने जो कुछ लिखा है वह सोद्देश्य है—केवल इस अर्थ में कि वस्तु का यथाय रूप हमारे सामने जा जाय। उसके लिए किसी आदर्श की स्थापना करने का प्रयत्न उन्होंने कभी नहीं किया। वैसे उनकी व्यक्तिवादी मानव चेतना स्वयं में एक स्थापना है इसे हम अस्वीकार नहीं कर सकते। किन्तु यह

स्थापना आदेश से मुक्ति पाने का प्रयास भर है—इसमें अधिक बुद्ध नहीं। और अच्छाई के प्रति आम्हा वर्माजी की मौलिक प्रवृत्ति है।

यथाय अथवाय के प्रश्न में जुड़ी एक समस्या वर्माजी के साहित्य के सम्बन्ध में रह जाती है। वह यह कि जहाँ वही नेत्रक अति यथाय के निवृत्त आता है उसका साहित्य अश्लीलता का मसख करने लगता है। रामाय चित्रण में उसने कदा मयम से काम नहीं लिया। किंतु इसका तात्पर्य यह नह कि वह द के निवृत्त पहुँच गया है। वस्तुत वर्माजी का साहित्य उप-साहित्य की उच्च अश्ली-सता से बहुत परे है जो पाठका म तत्सम्बन्धी उत्तेजना उत्पन्न करे। न के चित्रण शली यथाय है विषय निरूपण नह। उनकी चित्रण शला में दृष्टि-पता है जो पाठका की रुचि का परिमाणन करती है उसका नान्यत्वे क-कनुपित करने का प्रोत्साहन नहीं देनी।

रेखा नहा होती ? फिर यह बात बार्दे महारथ भी नहीं रंगी कपडि अभिषेकना
 और चित्रण में वे पूर्णतः सफल हुए हैं। छोटे छोटे व्यंजन व्योरा के शरा
 वातावरण निर्माण व्यंग्य तथा हास्य निर्माण रचना में गवेनामक गति उत्तम
 करने में वे कितने सफल हुए हैं उनकी लोकप्रियता इसका प्रमाण है ।

